उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त
विश्वविद्यालय, प्रयागराज

B.Ed. E.-04

Learning and Teaching

(अधिगम और शिक्षण)

खण्ड – 01	**अधिगम बोध**	**3-44**
इकाई 1	अधिगम (सीखना) : अवधारणा, प्रकृति, प्रकार	5–18
इकाई 2	स्किनर और पावलॉव के सीखने के सिद्धांत	19–30
इकाई 3	थार्नडाइक, कोहलर और गैग्ने के सीखने के सिद्धांत	31–42
खण्ड – 02	**अधिगम को प्रभावित करने वाले कारक**	**43-77**
इकाई 4	अधिगम को प्रभावित करने वाले कारक	45–56
इकाई 5	अधिगम का स्थानान्तरण	57–68
इकाई 6	अधिगम के उपागम	69–77
खण्ड– 03	**शिक्षण की प्रकृति**	**78-132**
इकाई 7	शिक्षण : अवधारणा, स्तर तथा अवस्थाएँ	79–100
इकाई 8	शिक्षण कौशल और सूक्ष्म शिक्षण	101–126
इकाई 9	शिक्षण अवस्थाओं में शिक्षकों की भूमिकाएँ और उनके कार्य	127–132
खण्ड – 04	**शिक्षण के उपागम एवं रणनीतियाँ**	**133-182**
इकाई 10	शिक्षार्थी केन्द्रित उपागम	135–150
इकाई 11	शिक्षक केन्द्रित रणनीतियाँ	151–167
इकाई 12	समूह केन्द्रित उपागम एवं रणनीतियाँ	168–182
खण्ड– 05	**अधिगम प्रक्रिया का शिक्षण आयोजन**	**183-208**
इकाई 13	शिक्षण में योजना बनाना एवं निर्णय लेना	184–190
इकाई 14	कक्षा–कक्ष अधिगम के मुद्दे एवं चिंताएँ (समस्यायें)	191–197
इकाई 15	शिक्षण के सूत्र, मीडिया और व्यावसायिकता के मुद्दे	198–208

B.Ed. E-04 : Learning and Teaching(अधिगम और शिक्षण)

संरक्षक एवं मार्गदर्शक

प्रोफेसर सत्यकाम — कुलपति, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

विशेषज्ञ समिति

प्रोफेसर पी० के० स्टालिन — निदेशक, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर पी० के० पाण्डेय — आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर छत्रसाल सिंह — आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर के० एस० मिश्रा — पूर्व कुलपति, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर धनन्जय यादव — विभागाध्यक्ष, शिक्षाशास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज
प्रोफेसर मीनाक्षी सिंह — आचार्य, शिक्षा संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
डॉ० जी० के० द्विवेदी — सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ० दिनेश सिंह — सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
डॉ० सुरेन्द्र कुमार — सहायक आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

लेखक

डॉ० दिनेश सिंह — सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज (इकाई– 1,2,3)
डॉ० रुचि दूबे — सहायक आचार्य, शिक्षाशास्त्र विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज (इकाई– 4,5,6)
प्रो० नागेन्द्र कुमार — आचार्य, शिक्षा संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी (इकाई– 7,8,9)
डॉ० शैलेन्द्र कुमार — सहायक आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज (इकाई– 10,11,12)
डॉ० कुसुम लता पटेल — सहायक आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, टी. डी. कॉलेज, जौनपुर (इकाई– 13,14)
डॉ० सुभाष चन्द्र — सहायक आचार्य, बी. एड. विभाग, दिग्विजय नाथ पी. जी. कॉलेज, गोरखपुर (इकाई– 15)

सम्पादक

डॉ० गिरीश कुमार द्विवेदी — सह आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

परिमापक

प्रोफेसर पी० के० पाण्डेय — आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

समन्वयक

डॉ० सुरेन्द्र कुमार — सहायक आचार्य, शिक्षा विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रकाशकः कुलसचिव, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज।

2024 (मुद्रित)

© उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

ISBN : 978-93-48270-29-0

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्यसामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

नोट : पाठय सामग्री में मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आकड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय, उत्तरदायी नहीं है।

प्रकाशन : उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रकाशक : कुलसचिव, कर्नल विनय कुमार, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन विश्वविद्यालय, प्रयागराज – 211013

मुद्रकः सिग्नस ईन्फार्मेशन सल्यूसन प्रा0 लि0, लोढ़ा सुप्रीमस साकी विहार रोड, अन्धेरी ईस्ट, मुम्बई।

खण्ड 01 : अधिगम बोध

खण्ड परिचय

अधिगम तथा अवबोध पाठ्यक्रम के प्रथम खण्ड का शीर्षक ''अधिगम शोध'' (Understanding Learning) है इस खण्ड को निम्न तीन इकाईयों में विभक्त किया गया है–

इकाई–1 का शीर्षक अधिगम : संकल्पना, प्रकृति एवं प्रकार है। इस इकाई में अधिगम का अर्थ, परिभाषा, प्रक्रिया तथा अधिगम के विभिन्न प्रकारों का वर्णन किया गया है।

इकाई–2 का शीर्षक स्किनर तथा पावलॉव के अधिगम सिद्धान्त है। इस इकाई में उक्त अधिगम सिद्धान्तों का उदाहरण सहित विस्तृत व्याख्या की गयी है।

इकाई–3 का शीर्षक थार्नडाइक, कोहलर तथा गेने का अधिगम सिद्धान्त है। इस इकाई में उक्त अधिगम सिद्धान्तों की विस्तृत व्याख्या सोदाहरण प्रस्तुत की गयी है।

इकाई 1 : अधिगम (सीखना) : अवधारणा, प्रकृति, प्रकार

इकाई की संरचना

1.1 प्रस्तावना

1.2 इकाई के उद्देश्य

1.3 अधिगम की संकल्पना

1.4 अधिगम्य की प्रक्रिया

1.5 अधिगम्य के उद्देश्य

1.6 अधिगम्य की प्रकृति तथा विशेषताएँ

1.7 अधिगम के प्रकार

1.8 अधिगम के पक्ष या अनुक्षेत्र

1.9 अधिगम के कारक

1.10 सारांश

1.11 अभ्यास के प्रश्न

1.12 चर्चा के बिन्दु

1.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.14 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1.1 प्रस्तावना

बच्चा जब जन्म लेता है तभी से वह सीखना प्रारम्भ कर देता है तथा जीवनपर्यन्त सीखता रहता है। एक बच्चा जन्म के समय असहाय होता है, परन्तु धीरे–धीरे वह वातावरण के साथ समायोजन करना सीख जाता है। वातावरण के साथ समायोजन करना सीखने में दो कारक प्रमुख है – प्रथम कारक परिपक्वता तथा दूसरा कारक अनुभव से सीखने की योग्यता है। परिपक्वता एक प्राकृतिक प्रक्रिया है जिसके लिए बाध्य उद्दीपन की आवश्यकता नहीं पड़ती है। यह एक प्रकार से मानव की अर्न्तनिहित शक्तियों का विकास है। अधिगम में अनुभव की भी आवश्यकता होती है और विशेष प्रयत्न भी करने पड़ते हैं। सीखने की प्रक्रिया के दौरान व्यवहार में जो परिवर्तन होते हैं वे सदैव किसी न किसी प्रक्रिया, प्रशिक्षण एवं अनुभव के फलस्वरूप प्राप्त होते हैं। शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया का केन्द्र बिन्दु अधिगम ही है। प्रस्तुत इकाई में अधिगम की संकल्पना, प्रकृति तथा प्रभार का विस्तृत अध्ययन करेंगे।

1.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जाएंगे कि–

1) अधिगम की संकल्पना के बारे में बता सकेगें।
2) अधिगम की प्रक्रिया को समझ सकेंगे।
3) अधिगम के उद्देश्यों को अभिव्यक्त कर सकेंगे।
4) अधिगम की प्रकृति तथा विशेषताओं की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
5) अधिगम के प्रकारों का वर्णन कर सकेंगे।
6) अधिगम के पक्ष या अनुक्षेत्र का वर्णन कर सकेंगे।

1.3 अधिगम की संकल्पना

इस संसार में प्रत्येक जीवन कुछ निश्चित जन्मजात प्रवृत्तियों से युक्त होते हैं, जो उसके प्रारम्भिक अनुक्रियाओं को निर्धारित करता है। ये प्रारम्भिक अनुक्रियाएँ आस–पास के वातावरण के प्रति अनुकूलित होने में उसे योग्य बनाता है, परन्तु मनुष्य जटिल वातावरण में रहता है अतः वातावरण के प्रति अनुकूलन हेतु केवल जन्मजात व्यवहार उपयुक्त नहीं होते है। मनुष्य को अनुभवों के द्वारा भी सीखना पड़ता है तथा अपनी अनुक्रियाओं को वातावरण के अधिक उपयुक्त बनाना पड़ता है। इस प्रकार हम कह सकते है कि उपयुक्त अनुक्रियाओं को प्राप्त करने की प्रक्रिया ही अधिगम है।

अधिगम एक संचित उन्नति है, जब एक बच्चा अधिगम प्रारम्भ करता है तो उसके अधिगम की प्रकृति कच्ची एवं अन्वेषणात्मक होती है। इस अवस्था में बच्चे की गतिविधियाँ अभिन्निकृत होती है एवं उसकी अनुक्रियाएँ सही नहीं होती हैं, उपयुक्त प्रशिक्षण के साथ बच्चा अपनी त्रुटियों को कम करता रहता है। निर्णय के द्वारा अनिश्चिता की अवस्था को दूर करता है। जैसे जैसे बच्चा बड़ा होता है वैसे–वैसे इस कार्य को अधिक आसानी से सम्पन्न करता रहता है।

हम अधिगम को व्यक्ति की उन्नति एवं अनुभवों का लाभ उठाने से सम्बन्धित करते है परन्तु अधिगम केवल यंत्रीकृत प्रक्रिया द्वारा तथ्यों एवं कौशलों का संग्रह करना नहीं है। अधिगम में एक अधिगमकर्ता अधिगम सामग्री को व्यवस्थित एवं मूल्यांकित भी करता है, कई अर्थों में उसके तात्पर्य एवं व्याख्या को खोजता है तथा अपने उद्देश्य की ओर सचेतन रूप में कार्य करता है।

1. किंगस्ले तथा गैरी के अनुसार, ''अभ्यास अथवा प्रशिक्षण के फलस्वरूप नवीन तरीके से व्यवहार करने अथवा व्यवहार में परिवर्तन लाने की प्रक्रिया को सीखना कहते हैं।

According to Kingsley and Garry :-

'Learning is the process by which behavior is originated or changed through practice or training."

2. क्रो तथा क्रो के अनुसार, ''सीखना आदतों, जान और अभिवृत्तियों का अर्जन है।''

According to crow & crow:-

'Learning is the acquisition of habits, knowledge and attitudes.'

3. वुडवर्थ के अनुसार, ''किसी भी ऐसी प्रक्रिया को जो व्यक्ति के विकास में सहायक होती है और उसके वर्तमान व्यवहार और अनुभवों को जो कुछ वे हो सकते थे उनसे भिन्न बनाती है सीखने की संज्ञा दी जा सकती है।''

According to wood word

'Any activity can be called learning so far as it develops the individual and makes his later behavior and enpeviences different from that what they would otherwise have been."

4. गेट्स व अन्य के अनुसार, ''अनुभव के द्वारा व्यवहार में होने वाले परिवर्तन को सीखना या अधिगम कहते हैं।''

According to Gates & others-

'Learning is the modification of behavior though enperience.'

5. गार्डनर मर्फी के अनुसार, ''सीखने या अधिगम शब्द में वातावरण सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए व्यवहार में होने वाले सभी प्रकार के परिवर्तन सम्मिलित है।''

1.4 अधिगम की प्रक्रिया

अधिगम एक विस्तृत एवं व्यापक प्रक्रिया है, इसमें निरन्तरता का गुण पाया जाता है। अधिगम प्रक्रिया के कई चरण हैं जो निम्न हैं–

प्रथम चरण– स्मिथ के अनुसार अधिगम प्रक्रिया के प्रथम चरण में अभिप्रेरक या चालक की प्रमुख भूमिका होती है। अभिप्रेरक (Motives) शक्ति के वह गतिशील स्त्रोत हैं जो व्यवहार को शक्ति प्रदान करने अधिगमकर्ता को कुछ करने के लिए प्रेरित करता है। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी मूलभूत आवश्यकताओं की पूति के लिए प्रत्यशील रहना पड़ता है जब तक हमारा वर्तमान व्यवहार, ज्ञान भण्डार तथा कौशल हमारी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति करती रहती हैं, हमें किसी भी प्रकार के नवीन ज्ञान का संचय करने, कौशल अर्जित करने तथा व्यवहार में परिवर्तन लाने की आवश्यकता वहीं पड़ती है। आवश्यकता पड़ने पर ही कुछ सीखने की इच्छा उत्पन्न होती है।

द्वितीय चरण– अभिप्रेरणाएं और मूलभूत आवश्यकताएँ अपनी संतुष्टि चाहती हैं जब इनकी संतुष्टि की मांग बहुत बढ़ जाती है तो प्राणी को इसके लिए संघर्ष करना पड़ता है। इस कार्य के लिए उसे कुछ लक्ष्य एवं उददेश्य निर्धारित करने पड़ते हैं इन उददेश्यों की प्राप्ति के लिए उसे अधिगम प्रक्रिया करनी पड़ती है।

तृतीय चरण– इसके अन्तर्गत किसी न किसी प्रकार की बाधा या रूकावट आती है। यदि कठिनाई या बाधा या अनुभव न हो तो व्यक्ति को अपने व्यवहार में परिवर्तन लाने तथा नवीन ज्ञान को अर्जित करने की इच्छा ही नहीं होगी।

उपरोक्त चरणों को हम एक उदाहरण के द्वारा स्पष्ट कर सकते हैं। माना एक छात्र स्वयं को अपने विद्यालय के क्रिकेट टीम में शामिल करना चाहता है, क्रिकेट टीम में चुने जाने पर उसका स्थान उसके सहपाठियों एवं अध्यापकों की दृष्टि में उच्च होगा। क्रिकेट खेलने से उसका शारीरिक व मानसिक विकास भी होगा, इसके अतिरिक्त उसकी अभिरूचि के अनुरूप उसे खेलने का अवसर भी प्राप्त होगा, इस प्रकार क्रिकेट टीम में शामिल होने के लिए उसे अनेकों अभिप्रेरणाएँ प्राप्त हो रही हैं। अतः इसे वह अपना लक्ष्य बना लेता है, परन्तु खेलते समय वह अक्सर आऊट हो जाता है तथा साथी खिलाड़ियों के साथ सामन्जस्य भी स्थापित नहीं कर पाता है। अतः लक्ष्य की प्राप्ति में बाधाएं आती है परन्तु वह अपने खेल के स्तर को सुधारने के लिए पूरी मेहनत से क्रिकेट का अभ्यास करता है। अथक प्रयास व प्रशिक्षण द्वारा वह अच्छा खेलने लगता है तथा टीम में शामिल होने के लक्ष्य को प्राप्त कर लेता है।

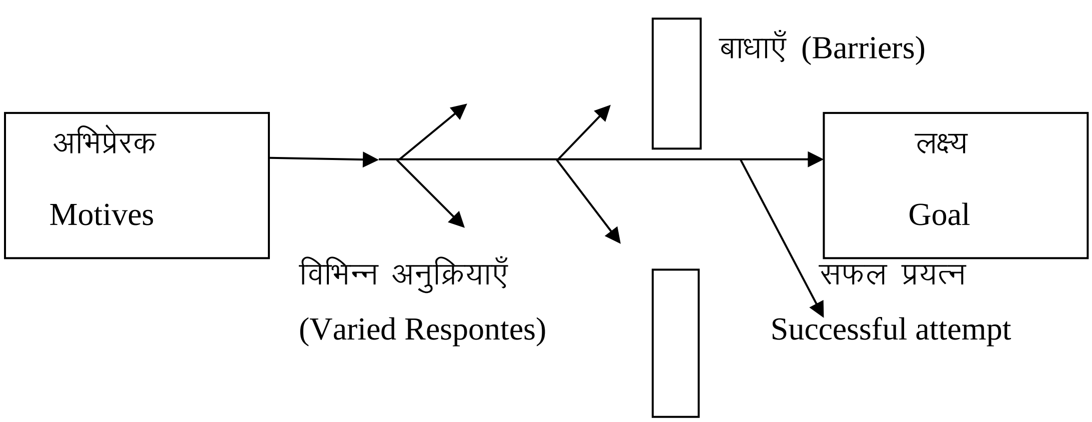

चित्र 1 सीखने की प्रक्रिया के चरण

अधिगम प्रक्रिया में अधिगम परिस्थितियाँ (Learning Situations) भी अत्यन्त महत्वपूर्ण होती हैं। सीखने की मात्रा, गति एवं उसका स्तर अधिगम परिस्थितियों पर काफी हद तक निर्भर करता है। अधिगम परिस्थितियां अधिगम के अवसर प्रदान करती है। अनुकूल अधिगम वातावरण सीखने के लिए सकारात्मक होता है जबकि प्रतिकूल वातावरण सीखने में बाधक होता है।

आवश्यकताओं की सन्तुष्टि तथा असंतुष्टि दोनों ही अधिगमकर्ता को सीखने के लिए अभिप्रेरित करती है जब उसे प्रतीत होता है कि जो कुछ उसने सीखा है वह उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है तो वह अधिक प्रेरित होकर सीखता है और तेजी से अधिगम में प्रगति करता है। दूसरी ओर यदि उसे प्रतीत होता है कि जो अधिगम उसने प्राप्त किया है वह उसके उददेश्य की पूर्ति के लिए पर्याप्त नहीं है तो वह अधिक से अधिक अभ्यास व प्रशिक्षण प्राप्त करके लक्ष्य को प्राप्त करने का प्रयास करता है।

अधिगम के द्वारा अधिगमकर्ता के व्यवहार में परिवर्तन आता है। वह अपने व्यवहार में इन परिवर्तनों को

आत्मसात कर लेता है। इस प्रकार वह जो कुछ भी सीखता है वह उसकी प्रकृति तथा अधिगम की सार्थकता के आधार पर लम्बे समय तक याद रहता है। आवश्यकता पडने पर वह इसका उपयोग करता है अतः अधिगम प्रक्रिया किसी एक परिस्थिति में किसी एक प्रकार के ज्ञान तथा कौशल को अर्जित करने के साथ समाप्त नहीं हो जाती है। अतः अधिगम प्रक्रिया जीवनपर्यन्त चलती रहती है। एक परिस्थिति में प्राप्त किया गया अधिगम दूसरी परिस्थितियों में काम में लाया जा सकता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1) अधिगम प्रक्रिया के तीन प्रमुख चरण कौन–कौन से हैं?

....

....

2) सीखने की प्रक्रिया में अधिगम परिस्थितियों की क्या भूमिका होती है?

....

....

3) आवश्यकताओं की सन्तुष्टि तथा असन्तुष्टि किस प्रकार अधिगम से सम्बन्धित है?

....

....

1.5 अधिगम के उद्देश्य

अधिगम का प्रमुख उद्देश्य अधिगमकर्ता के व्यवहार में परिवर्तन लाना है। अधिगम के उद्देश्यों को दो भागों में विभक्त कर सकते हैं –

1. ज्ञान प्राप्त करना (Acquisition of Knowledge)
2. कौशल प्राप्त करना (Acquisition of Skills)

1– ज्ञान प्राप्त करने से तात्पर्य अधिगम के द्वारा अधिगमकर्ता में बौद्धिक एवं संवेगात्मक परिवर्तन एवं नियंत्रक लाना है इसके अन्तर्गत ज्ञान को ग्रहण करना, आत्मसात् करना, संगति अधिगम तथा सराहना आदि सम्मिलित है जो निम्न है –

1) समझना (Perception) इसके अन्तर्गत ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा किसी वस्तु या घटना के बारे में विशिष्ट ज्ञान को ग्रहण करना सम्मिलित है। कोई वस्तु हमारी ज्ञानेन्द्रियों के सामने आती है और हम अपने पूर्व अनुभवों के आधार पर इसे किसी अर्थ से जोड़ देते हैं।

2) धारणा बनाना (Conception) धारणा बनाने से तात्पर्य व्यवस्थित ज्ञान को प्रत्यय या सामान्य विचारों के रूप में ग्रहण करना है। यह किसी व्यक्ति या विशिष्ट परिस्थितियों से सम्बन्धित है। एक बालक संतरा केला आम आदि को देख्ता है तथा उनके कुछ सामान्य गुणों को देखकर उसके सम्बन्ध में धारणा बनाता है इसके आधार पर वह फल का धारणा अपने मस्तिष्क में बनाता है।

3) संगति अधिगम (Associative Learning) संगति या सम्बन्धित अधिगम याददाश्त से सम्बन्धित है इसके अन्तर्गत पहचान करना, स्मरण करना, पूर्व अनुभव आदि सम्मिलित है यह सभी प्रकार के अधिगम का मूल है।

4) सराहना (Appreciation) इसका तात्पर्य भावनात्मक विशेषताओं के आधार पर विचारों, अभिवृत्तियों आदि को

आत्मसात् करना है इसमें अनुभव एवं भावनात्मक तत्व सम्मिलित होते है।

2– कौशल प्राप्त करना (acquisition of Skills) इसके अन्तर्गत संवेगी–चालक प्रक्रियाएँ जैसे–लिखना, पढना, संगीतीय निष्पादन, भाषा सीखना, विभिन्न कलाएं आदि सम्मिलित है।

अधिगम को अब एक सक्रिया प्रक्रिया कहा जाता है। यह ज्ञान प्राप्त करने की मात्र एक निष्क्रिय प्रक्रिया नहीं है यह केवल पुस्तक को पढ़ना या व्याख्यान को सुनना मात्र नहीं है वास्तविक अधिगम का अर्थ अनुभवों को समृद्ध करना है। इसलिए आजकल करके सीखने, क्रिया आधारित कार्यक्रमों, प्रोजेक्ट विधि, स्व–सक्रियता आदि पर बल दिया जा रहा है। पुस्तकीय अधिगम पर कम बल दिया जा रहा है।

अधिगम व्यवहार प्रणाली या अनुभवों के आधार पर परिवर्धन है। अधिगम प्रक्रिया में अधिगमकर्ता वातावरण के साथ अन्तःक्रिया करता है। विशेषतः मनुष्य में अधिगम के लिए कठिन प्रशिक्षण तथा अधिगम को प्रभावित करने वाले कारकों पर नियंत्रण आवश्यक है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

4) अधिगम के दो प्रमुख उद्देश्य कौन से हैं।

....

....

5) संगति अधिगम से क्या आशय है?

....

....

6) अधिगम द्वारा कौशल प्राप्त करने में किस प्रकार की प्रक्रियाएं सम्मिलित है?

....

....

1.6 अधिगम की प्रकृति तथा विशेषताएँ

अधिगम को वंशानुगत नहीं कहा जा सकता है। यह एक ऐसा अर्जित व्यवहार है जिसमें अनुभवों एवं प्रशिक्षण का ही पूर्ण योगदान होता है। अधिगम की प्रकृति एवं विशेषताएं निम्न हैं–

1) व्यवहार में परिवर्तन– सीखने की प्रक्रिया तथा उसके परिणाम का सीधा सम्बन्ध सीखने वाले के व्यवहार में परिवर्तन लाने से होता है। इसके द्वारा अधिगमकर्ता के व्यवहार में परिवर्तन लाने का प्रयास किया जाता है, यह व्यवहार परिवर्तन वांछित हो इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है।

2) सतत एवं जीवनपर्यन्त प्रक्रिया– अधिगम के द्वारा व्यवहार में जो परिवर्तन लाए जाते हैं वे सतत एवं जीवनपर्यन्त चलते रहते हैं, जन्म के पश्चात, वातावरण से प्राप्त अनुभवों के द्वारा सीखने में तीव्रता आ जाती है। अधिगमकर्ता औपचारिक तथा अनौपचारिक, प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप में कुछ न कुछ जीवन–पर्यन्त सीखते रहते हैं।

3) अर्जित व्यवहार की अपेक्षाकृत स्थायी प्रकृति– सीखने के द्वारा व्यवहार में जो परिवर्तन लाए जाते है वे न तो पूर्ण स्थायी होते हैं और न बिल्कुल अस्थायी उनकी प्रकृति इन दोनों के बीच वाली होती है जो अपेक्षाकृत अधिक स्थायी होती है अतः अधिगम के द्वारा बालक के व्यवहार में जो परिवर्तन होता है वह अपना प्रभाव छोडने

में समर्थ होता है।

4) उद्देश्यपूर्ण एवं लक्ष्य निर्देशित— जब भी हम कुछ सीखना चाहते है या व्यवहार में परिवर्तन लाना चाहते है तो उसका कुछ निश्चित उददेश्य होता है अधिगम प्रक्रिया इसी उददेश्य या लक्ष्य की प्राप्ति की दिशा में आगे बढ़ती है जैसे जैसे हमें इस लक्ष्य की प्राप्ति में सहायता मिलती है हम अधिक उत्साह से सीखने के कार्य में जुट जाते हैं।

5) सार्वभौमिक प्रक्रिया— अधिगम एक सार्वभौमिक प्रक्रिया है क्योंकि यह किसी व्यक्ति विशेष, जाति प्रजाति या देश की बपौती नहीं है। सभी प्राणी अपने अपने तरीके से अनुभवों के द्वारा सीखते रहते है। सभी प्राणी सीखने की पूर्ण क्षमता रखते हैं। अधिगम दर में जो भी अन्तर होता है वह प्राप्त अनुभवों एवं अवसरों के कारण होता है।

6) वातावरण एवं क्रियाशीलता का उत्पाद— अधिकम के लिए वातावरण के साथ सक्रिय अनुक्रिया करना आवश्यक है। अधिगमकर्ता जितना सक्रीय होकर वातावरण के साथ अनुक्रिया करता है वह उतनी ही तेजी से अधिगम प्राप्त करता है वातावरण में उददीयकों की उपस्थिति चाहे कितनी भी सक्षम क्यों न हों, यदि अधिगमकर्ता के द्वारा सक्रिय अनुक्रिया न की गयी तो अधिगम नहीं हो सकेगा, अतः अनुभवों के माध्यम से उचित अधिगम हेतु वातावरण के साथ पर्याप्त अनुक्रिया आवश्यक है।

7) अनुभवों की नवीन व्यवस्था— अधिगम प्रक्रिया में प्राप्त अनुभवों के नवीन समायोजन तथा पुर्नगठन का कार्य चलता रहता है। पूर्व अनुभवों के आधार पर सीखा हुआ तथ्य नवीन अनुभवों के आधार पर परिवर्तित हो जाता है। इस प्रकार अनुभवों की नवीन व्यवस्था या समायोजन का कार्य चलता रहता है।

8) एक परिस्थिति से दूसरी परिस्थिति में स्थानान्तरण— एक परिस्थिति में प्राप्त अधिगम दूसरी परिस्थिति में बाधक या सहायक होता है। अतः अधिगम का एक परिस्थिति से दूसरी परिस्थिति में स्थानान्तरण होतो है।

9) शिक्षण अधिगम उददेश्यों की प्राप्ति— अधिगम द्वारा छात्र निर्धारित शिक्षण, अधिगम उददेश्यों की प्राप्ति के लिए उचित प्रयत्न कर सकते हैं। इस प्रकार के उददेश्यों की पूर्ति द्वारा छात्रों में अपेक्षित ज्ञान, अवबोध, कौशल का विकास किया जा सकता है।

10) व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास में सहायक— बालक के व्यक्तित्व का सर्वागीण एवं सन्तुलित विकास शिक्षा का प्रमुख उददेश्य होता है। अधिगम द्वारा व्यक्तित्व के सर्वागीण विकास में सहायता प्राप्त होती है।

11) अधिगमकर्ता की उचित वृद्धि एवं विकास में सहायक— अधिगम प्रक्रिया द्वारा वृद्धि एवं विकास के सभी आयामों जैसे शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, संवेगात्मक, नैतिक, सौन्दर्यात्मक व भाषा सम्बन्धी विकास में सहायता प्राप्त होती है।

12) व्यक्तित्व के समायोजन में सहायक— अधिगम प्रक्रिया के परिणामस्वरूप अधिगमकर्ता को अपने तथा वातावरण के साथ समायोजन करने में सहायता प्राप्त होती है।

13) जीवन के लक्ष्यों की पूर्ति में सहायक— प्रत्येक व्यक्ति के जीवन के कुछ आदर्श एवं लक्ष्य होते है जिनकी प्राप्ति के लिए वह प्रत्यन्तशील रहता है। अधिगम प्रक्रिया द्वारा प्राप्त परिणाम उसे इन आदर्शों तथा जीवन लक्ष्यों को प्राप्त करने में सहायता पहुंचाते हैं।

14) अधिगम तथा विकास एक दूसरे के पर्याय नहीं है— अधिगम का सम्बन्ध प्रशिक्षण तथा अभ्यास से होता है। इसलिए प्रायः यह समझा जाता है कि अधिगम बालकों को विकास के पथ पर अग्रसर करता है वे अपने विद्यालय तथा सामाजिक वातावरण से ऐसा बहुत सी बातों का अधिगम प्राप्त करती है जो उनके विकास में सहायक न होकर बाधक होता है इसमें आवांछित आदतें, त्रुटिपूर्ण उच्चारण, लेखन सम्बन्धी अशुद्धियां आदि हो सकती है। अतः यह आवश्यक नहीं है कि अधिगम द्वारा सदैव ही विकास हो।

15) अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन में सहायक— अधिगम एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा बालक के व्यवहार में वांछित अपेक्षित परिवर्तन लाए जा सकते हैं। इसके लिए अधिगम प्रक्रिया को दिशा पर उचित नियंत्रण रखना आवश्यक है।

16) व्यापक क्षेत्र— अधिगम को कक्षा—कक्ष की गतिविधियों तक ही सीमित नहीं किया जा सकता है न ही

उसकी परिणति मात्र बौद्धिक ज्ञान एवं कौशलों की प्राप्ति ही है। विद्यालय के बाहर भी बालकों को अधिगम प्राप्त करने के अनेकों अवसर प्राप्त होते हैं। अधिगम प्रक्रिया औपचारिक एवं अनौपचारिक अनुभवों एवं प्रशिक्षणों द्वारा अनवरत चलती रहती है इस तरह अधिगम प्राप्ति के साधनों एवं क्रियाओं को एक निश्चित सीमा में नहीं बांधा जा सकता है अधिगम कार्यक्रम के अन्तर्गत शारीरिक, बौद्धिक सामाजिक, संवेदगात्मक, नैतिक, सौन्दर्यात्मक आदि विकास के आभास सम्मिलित होते हैं इस प्रकार अधिगम एक व्यापक प्रक्रिया है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

7) अधिगम की कोई चार विशेषताएं बताइए।

....

....

8) अधिगम द्वारा व्यवहार परिवर्तन किस प्रकार का होना चाहिए?

....

....

9) अधिगम किस प्रकार एक सार्वभौमिक प्रक्रिया है?

....

....

1.6 अधिगम के प्रकार

मनौवैज्ञानिकों ने अधिगम के निम्न प्रकार बताए हैं–

1– निरीक्षण अधिग– एकाग्रता से प्राप्त समझ ही निरीक्षण है। एकाग्र होना निरीक्षण है तथा इस एकाग्रता को समृद्ध करना समक्ष (Perception) है निरीक्षणीय अधिगम तत्व सफल होता है जब अधिगम संकेतों के बजाय वस्तुओं या वस्तुओं के प्रतिनिधि के द्वारा प्रदान किया जाय।

2– सूझ अधिगम– निरीक्षण प्रक्रिया का अन्तिम चरण सूझ है। निरीक्षण का अर्थ एकाग्रता है तथा सूझ मानसिक शोध की प्रक्रिया के द्वारा इसकी सफलता को व्यक्त करता है। सामान्य अर्थो में अधिगम को सूझयुक्त तब कहा जाएगा जब यह व्यक्ति को समस्या को समग्र रूप में समझने के योग्य बनाता है। सूझ के अन्तर्गत समस्या को इसके सभी सम्बन्धों से अकस्मात देखकर मानसिक एकीकरण करना सम्मिलित है। किसी समस्यात्मक परिस्थिति में सूझ के द्वारा समस्या का पूर्ण समाधान प्राप्त हो जाता है।

अन्य दृष्टि से सूझ को अर्थ उक्त परिस्थितियों में अधिगम से है जिसमें उददेश्य से सम्बन्धित व्यक्ति का व्यवहार पूर्णतः व्यवस्थित होता है सूझ के अन्तर्गत सामान्यीकरण एवं विभिन्नीकरण सम्मिलित है। सामान्यीकरण वह प्रक्रिया है जिसमें अनुभवों के आधार पर सार्थक सम्बन्ध समानताएं एवं संरचनाएं प्राप्त की जाती है। विभिन्नीकरण का अर्थ विभिन्न विभिन्न अनुभवों के मध्य सार्थव अन्तर या भिन्नता को निकालना है।

3– अनुकरणीय अधिगम– दूसरों के व्यवहार का निरीक्षण करके उसका अनुकरण या नकल करना ही अनुकरणीय अधिगम है। इसमें मुख्यतः उन लोगों का अनुकरण किया जाता है जो अधिगमकर्ता से बेहतर हो। यह चेतनयुक्त एवं अचेतनयुक्त दोनों प्रकार का हो सकता है। सामान्य परिस्थितियों में सचेतनायुक्त अधिगम या प्रत्यक्ष अनुकरण का शिक्षण में महत्वपूर्ण योगदान है शिक्षण कौशलों को सीखने, लिखने, चित्रण करने आदि में यह सहायक है। प्राथमिक कक्षाओं में भाषा के व्याकरण व उच्चारण वाकत्रुटि आदि के सुधार में भी अनुकरण

सहायक है। सचेतन व अचेतन युक्त अनुकरण बालक को सामाजिक व नैतिक मूल्यों को सीखने में भी उपयोगी है। इस प्रकार हम यह कह सकते है कि औपचारिक शिक्षा में अनुकरण एक महत्वपूर्ण नैतिक बौद्धिक व सामाजिक स्रोत है जो जीवनपर्यन्त चलता रहता है।

4– प्रयत्न एवं अधिगम– इस प्रकार के अधिगम को सफल चर के चुनाव द्वारा अधिगम भी कहते है। यह उददेश्यपूर्ण होता है एवं लक्ष्य की ओर निर्देशित होता है इस अधिगम का प्रत्येक चरण व्यवस्थित होता है चाहे वह सफल हो या न हो इस प्रकार प्रत्यन्त एवं सफलता अधिगम को यादृच्छिक क्रिया नहीं समझनी चाहिए जिसमें सही अनुक्रिया अकस्मात ही प्राप्त होती है। गणित, विज्ञान, सामाजिक विज्ञान आदि के शिक्षण में जहां ताक्रिकता व अन्वेषण की आवश्यकता होती है, शिक्षक को यह ध्यान रखना चाहिए कि शिक्षण विधि ऐसी हो जो छात्र की क्षमताओं में वृद्धि करे छात्रों को समस्या प्रदान करने के उपरान्त उसके समाधान छात्रों को स्वयं करने देना चाहिए इस प्रकार अधिगम का लक्ष्य स्पष्ट होगा परन्तु उसे प्राप्त करने के साधन वे स्वयं खोजेगे। शिक्षक को यह ध्यान रखना चाहिए कि छात्र समस्या समाधान के लिए सही दिशा में आगे बढे जिससे कार्य के निष्पादन से उन्हें सन्तुष्टि प्राप्त हो सके।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

10) निरीक्षण एवं सूझ अधिगम में प्रमुख अन्तर क्या है?

....

....

11) अनुकरणीय अधिगम से आप क्या समझते हैं?

....

....

12) प्रयत्न एवं सफलता अधिगम किसे कहते हैं?

....

....

1.8 अधिगम के पक्ष/अनुक्षेत्र

अधिगम का उददेश्य अधिकमकर्ता के व्यवहार में अपेक्षित परिवर्ततन लाना है। व्यवहार में ये परिवर्तन उसके व्यक्तित्व के तीनों पक्षों–संज्ञानात्मक, क्रियात्मक तथा भावात्मक पक्षों में लाए जा सकते है जो निम्न हैं –

1–अधिगम का संज्ञानात्मक पक्ष– इसके अन्तर्गत अधिगमकर्ता के संज्ञानात्मक पक्ष का विकास आता है। उसके संज्ञानात्मक व्यवहार में परिवर्तन लाने का प्रयास किया जाता है। इसमें ज्ञानेन्द्रियों एवं मस्तिष्क की प्रमुख भूमिका होती है। इस प्रकार का अधिगम बालक के मानसिक एवं बौद्धिक विकास के लिए आवश्यक होता है इससे बालक के शैक्षणिक विकास में सहायता मिलती है। बालक में अपने आस–पास के वातावरण के साथ समायोजन करने हेतु पर्याप्त क्षमता एवं कौशल प्राप्त होता है। विभिन्न प्रकार की मानसिक व बौद्धिक क्रियाओं जैसे–सोचना–विचारना कल्पना करना, तर्क करना, अनुमान लगाना, विश्लेषण एवं संश्लेषण करना, वर्णन तथा व्याख्या करना, स्मरण करना, सामान्यीकरण करना, नियमीकरण करना, संक्षिप्तीकरण करना, दृष्टान्त देना, विस्तारीकण करना, निष्कर्ष निकालना, अर्थापन करना आदि का सम्पादन तथा उनमें अपेक्षित परिवर्तन लाना

इसमें सम्मिलित है।

2— अधिगम का क्रियात्मक पक्ष/अनुक्षेत्र— इस पक्ष से सम्बन्धित अधिगम का उददेश्य अधिगमकर्ता के क्रियात्मक या मनोशारीरिक (psycho physical) व्यवहार में परिवर्तन लाना है इसमें भी ज्ञानेन्द्रियों व मांस पेशियों की प्रमुख भूमिका होती है इन व्यवहार परिवर्तनों का उददेश्य बालक का समुचित चालक (motor) क्रियात्मक (connative) तथा शारीरिक विकास करना होता है तथा उसमें ऐसी कुशलताएं एवं क्षमताएं विकसित करना होता है जिससे वह ज्ञानेन्द्रियों द्वारा किए जाने वाले कार्यो में निपुण हो सके। इसमें विभिन्न प्रकार के मनोशारीरिक व्यवहार जैसे सिलाई कढाई, बुनाई, तैराकी, नाचना, गाना उपकरणों के प्रयोग से सम्बन्धित कार्य आदि सम्मिलित है। इस प्रकार का अधिगम बालक के सर्वागीण विकास के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

1— अधिगम का भावात्मक पक्ष/अनुक्षेत्र— इसका सम्बन्ध छदम द्वारा अनुभूति की जाने वाली क्रियाओं से है जैसे सुख—दुख, ईर्ष्या, घृणा, प्रेम, सहानुभूति, वीरता, दया आदि इसके द्वारा अधिगमकर्ता के भावात्मक व्यवहार में परिवर्तन आता है इस प्रकार का अधिगम बालक में सामाजिक एवं संवेगात्मक परिपक्वता विकसित कर उसके व्यक्तिगत एवं सामाजिक प्रगति में सहायक होता है।

इस प्रकार संज्ञानात्मक क्रियात्मक एवं भावात्मक पक्ष के अधिगम द्वारा अधिगमकर्ता के सर्वोगीण विकास का प्रयास किया जाता है बालक में ये व्यवहार परिवर्तन औपचारिक व अनौपचारिक शिक्षण—अधिगम अनुभवों द्वारा प्रदान किए जाते है। शिक्षा के द्वारा किए जाने वाले अधिगम प्रयासों का लक्ष्य व्यवहार के तीनों पक्षों में वांछित व्यवहार परिवर्तन लाना है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

13) अधिगम द्वारा अधिगमकर्ता के व्यवहार के किन पक्षों में परिवर्तन होता है?

....

....

14) मानसिक एवं बौद्धिक विकास किस पक्ष के अन्तर्गत आता है?

....

....

15) अधिगम के क्रियात्मक पक्ष का क्या उददेश्य है?

....

....

16) तैराकी साइकिल चलाना आदि किस पक्ष के अधिगम में सम्मिलित है?

....

....

1.9 अधिगम के कारक

अधिगम प्रक्रिया निम्न तीन तत्वों पर निर्भर करती है—

1. अधिगमकर्ता या विद्यार्थी जिसके व्यवहार में परिवर्तन लाए जाते है।

2. अधिगम अनुभव जिन्हें अधिगमकर्ता के व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन लाने के लिए काम में लाया जाता है।

3. मानव एवं भौतिक संसाधन जिनकी सहायता से आवश्यक अधिगम अनुभव अधिगमकर्ता के व्यवहार में परिवर्तन लाने के लिए प्रदान किए जाते हैं।

इस प्रकार हम अधिगम को प्रभावित करने वाले कारकों को निम्न चार प्रकारों में विभाजित कर सकते है जो निम्न है –

1. अधिगमकर्ता से सम्बन्धित कारक
2. अध्यापक से सम्बन्धित कारक
3. विषय–वस्तु से सम्बन्धित कारक
4. प्रक्रिया से सम्बन्धित कारक

1) अधिगमकर्ता से सम्बन्धित कारक

1. अधिगमकर्ता की क्षमता एवं योग्यता
2. अधिगमकर्ता का शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य
3. महत्वाकांक्षा एवं उपलब्धि प्रेरण का स्तर
4. जीवन का लक्ष्य
5. तत्परता एवं इच्छा शक्ति

2) अध्यापक से सम्बन्धित कारक

1. विषय पर पूर्ण अधिकार
2. शिक्षण कौशलों का प्रयोग
3. शिक्षक का व्यक्तित्व एवं व्यवहार
4. शिक्षक का मानसिक स्वास्थ्य एवं समायोजन स्तर
5. कक्षा में अनुशासन एवं अन्तः क्रिया का स्वरूप

3) विषय वस्तु से सम्बन्धित कारक

1. अधिगम अनुभवों की प्रकृति
2. अधिगम अनुभवों का चयन
3. विषयवस्तु का आयोजन

4) प्रक्रिया से सम्बन्धित कारक

- अधिगम अनुभवों को ग्रहण करने के तरीके

1. नवीन ज्ञान को पूर्व ज्ञान से सम्बन्धित करना
2. एक विषय तथा क्षेत्र को दूसरे विषय के अधिगम से सहसम्बन्धित करना।
3. अधिक से अधिक ज्ञानेन्द्रियों का प्रयोग
4. अभ्यास कार्य तथा दोहराने की व्यवस्था
5. उपयुक्त प्रतिपुष्टि एवं पुनर्वलन की व्यवस्था
6. सीखने–सिखाने की मनोवैज्ञानिक विधियां एवं तकनीक

- शिक्षण–अधिगम वातावरण एवं संसाधन
    1. सामाजिक–संवेगात्मक वातावरण
    2. उचित अधिगम सामग्री और सुविधाओं को प्राप्त करना
    3. शिक्षण–अधिगम सम्बन्धी उपयुक्त परिस्थितयों एवं वातावरण

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

17) अधिगम प्रक्रिया किन तत्वों पर निर्भर करता है?

....

....

18) अधिगम को प्रभावित करने वाले कारकों को कितने भागों में विभाजित कर सकते हैं?

....

....

19) अधिगम में ज्ञानेन्द्रियों का क्या योगदान है?

....

....

1.10 सारांश

अभ्यास अथवा प्रशिक्षण के द्वारा व्यक्ति के व्यवहार में अपेक्षित या वांछित परिवर्तन होता अधिगम कहलाता है। यह ज्ञान कौशल एवं अभिवृत्तियों का अर्जन है। अधिगम एक विस्तृत, व्यापक एवं सार्वभौमिक प्रक्रिया है इसमें निरन्तरता का गुण पाया जाता है। इसके तीन प्रमुख चरण है। प्रथम चरण में अभिप्रेरक या चालक की प्रमुख भूमिका होती है। द्वितीय चरण में लक्ष्य या उददेश्यों का निर्धारण अधिगमकर्ता द्वारा किया जाता है तृतीय चरण में अधिगम में कोई बाधा उत्पन्न होती है। अधिगम परिस्थितियां भी सीखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह जीवन पर्यन्त चलतीरहती है तथा एक परिस्थिति में सीखा हुआ ज्ञान या कौशल दूसरी परिस्थिति में काम आता है। अधिगम का प्रमुख उददेश्य अधिगमकर्ता के व्यवहार में परिवर्तन लाना है ये परिवर्तन उसके व्यक्तित्व के तीनों पक्षों संज्ञानात्मक, क्रियात्मक तथा भावात्मक पक्षों में होते है संज्ञानात्मक पक्ष में विभिन्न मानसिक एवं बौद्धिक क्रियाएं आती है। मनोगत्यात्मक में मनोशारीरिक व्यवहार जैसे साइकिल चलाना सीखना, सिलाई कढाई, नाचना, उपकरणों के प्रयोग से सम्बन्धित कार्य सम्मिलित है। भावात्मक पक्ष में दुःख, ईर्ष्या, प्रेम आदि के भाव आते हैं। अधिगम प्रक्रिया तीन तत्वों पर निर्भर करती है– 1. अधिगमकर्ता, 2. अधिगम अनुभव 3. मानव एवं भौतिक संसाधन आदि, अधिगम को प्रभावित करने वाले कारक अधिगमकर्ता, अध्यापक, विषयवस्तु तथा प्रक्रिया से सम्बन्धित हो सकते हैं।

1.11 अभ्यास के प्रश्न

1. अधिगम की संकल्पना को स्पष्ट कीजिए?
2. अधिगम की प्रक्रिया का वर्णन कीजिए?

3. अधिगम के विभिन्न उद्देश्य क्या हैं?
4. अधिगम की प्रकृति एवं विशेषताओं का वर्णन कीजिए?
5. अधिगम को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन कीजिए?

1.12 चर्चा के बिन्दु

1. छात्रों के अधिगम को बढाने वाले कारक कौन–कौन से हैं? चर्चा कीजिए।

1.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. अधिगम प्रक्रिया के तीन प्रमुख चरण है– अ) अभिप्रेरक या चालक, ब) लक्ष्य एवं उददेश्यों का निर्धारण, स) अधिगम में बाधा या रूकावट
2. सीखने की मात्रा, गति एवं उसका स्तर अधिगम परिस्थितियों पर निर्भर करता है। अधिगम परिस्थितियां अधिगम के अवसर प्रदान करती है अनुकूल अधिगम वातावरण सीखने के लिए सकारात्मक भूमिका निभाती है जबकि प्रतिकूल परिस्थितियां नकारात्मक भूमिका निभाती है।
3. आवश्यकताओं की संतुष्टि तथा असन्तुष्टि दोनों ही अधिगमकर्ता को सीखने के लिए अभिप्रेरित करती है।
4. अधिगम के निम्न दो प्रमुख उददेश्य है– अ) ज्ञान प्राप्त करना, ब) कौशल प्राप्त करना।
5. संगति या सम्बन्धित अधिगम याददाश्त से सम्बन्धित होता है इसके अर्न्तगत पहचान करना, स्मरण करना, पूर्व अनुभव आदि सम्मिलित है।
6. अधिगम द्वारा कौशल प्राप्त करने के अन्तर्गत संवेदी चालक प्रक्रियाएं जैसे लिखना, पढना, संगीतीय निष्पादन आदि सम्मिलित है।
7. अधिगम की चार प्रमुख विशेषताएं निम्न है– 1. व्यवहार में परिवर्तन, 2. सतत एवं जीवन पर्यन्त प्रक्रिया, 3. अर्जित व्यवहार की स्थायी प्रकृति, 4. उददेश्यपूर्ण
8. अधिगम द्वारा वांछित या अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन होना चाहिए।
9. अधिगम एक सार्वभौमिक प्रक्रिया है क्योंकि इस पर किसी एक व्यक्ति विशेष, जाति–प्रजाति या देश का ही अधिकार नहीं है।
10. निरीक्षक का अर्थ एकाग्रता है जबकि सूझ मानसिक शोध की प्रक्रिया द्वारा इसकी प्रक्रिया को व्यक्त करता है। निरीक्षण प्रक्रिया का अन्तिम चरण सूझ है ।
11. दूसरों के व्यवहार का निरीक्षण करके उसका अनुकरण करना या नकल करना ही अनुकरणीय अधिगम है।
12. प्रयत्न एवं सफलता अधिगम लक्ष्य निर्देशित होता है इसमें सफल चर के चुनाव द्वारा अधिगम होता है।
13. अधिगम द्वारा अधिगमकर्ता के संज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक पक्षों में परिवर्तन होता है।
14. मानसिक एवं बौद्धिक विकास संज्ञानात्मक पक्ष के अन्तर्गत आता है।
15. अधिगम के क्रियात्मक पक्ष का उददेश्य अधिगमकर्ता के मनोशारीरिक व्यवहार में परिवर्तन लाना है।
16. तैराकी, साइकिल चलाना आदि क्रियात्मक पक्ष के अन्तर्गत आते है।
17. अधिगम प्रक्रिया तीन प्रमुख तत्वों पर निर्भर करती है– अ) अधिगमकर्ता, ब) अधिगम अनुभव, स) मानव एवं भौतिक संसाधन
18. अधिगम को प्रभावित करने वाले कारकों को चार प्रमुख भागों में विभाजित कर सकते हैं–

i) अधिगमकर्ता से सम्बन्धित कारक, ii) अध्यापक से सम्बन्धित कारक, iii) प्रक्रिया से सम्बन्धित कारक, iv) शिक्षण–अधिगम वातावरण एवं संसाधन

19. अधिक से अधिक ज्ञानेन्द्रियों के प्रयोग से अधिगम तीव्र गति से होता है।

1.14 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. मंगल एस0 के0 (2013) ''अधिगम या सीखने के सिद्धान्त'', शिक्षा मनोविज्ञान, पी0एच0आई0 लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।
2. गुप्ता, एस.पी. व गुप्ता, अलका (2016), ''उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान'', शारदा पुस्तक भवन, प्रयागराज।
3. चौहान, आर. (2015), शिक्षा मनोविज्ञान, आगरा : अग्रवाल पब्लिकेशन
4. सिंह ए. के. (2013), शिक्षा मनोविज्ञान, पटना : भारती भवन
5. सिंह डी. आर. (2009), शिक्षा के मनोवैज्ञानिक आधार, इलाहाबाद : न्यू कैलाश प्रकाशन
6. लाल, आर. बी. एवं मानव, आर. एन. (2011), शिक्षा मनोविज्ञान, मेरठ : रस्तोगी पब्लिकेशन्स

इकाई 02 : स्किनर तथा पॉवलाव के अधिगम सिद्धान्त

इकाई की संरचना

2.1 प्रस्तावना

2.2 इकाई के उद्देश्य

2.3 स्किनर का सक्रिय अनुबन्धन का सिद्धान्त

2.4 सक्रिय व्यवहार तथा सक्रिय अनुबन्धन

2.5 पुनर्बलन के प्रकार

2.6 कक्षा में सक्रिय अनुबन्धन सिद्धान्त का प्रयोग

2.7 पॉवलाव का शास्त्रीय अनुबन्धन सिद्धान्त

2.8 शास्त्रीय अनुबन्धन तथा सक्रिय अनुबन्धन में अन्तर

2.9 शास्त्रीय अनुबन्धन सिद्धांत की शैक्षिक उपयोगिता

2.10 सारांश

2.11 अभ्यास के प्रश्न

2.12 चर्चा के बिन्दु

2.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.14 कुछ उपयोगी पुस्तकें

2.1 प्रस्तावना

स्किनर तथा पॉवलॉब ने व्यवहारवाद के आधार पर अपना अधिगम सिद्धान्त दिया, स्किनर ने पुर्नबलन सिद्धान्त या सक्रिय अनुबन्धन सिद्धान्त दिया, पावलॉव ने शास्त्रीय अनुबन्धन सिद्धान्त दिया स्किरनर ने चूहों तथा कबूतर पर अपने प्रयोग किए तथा उसके आधार पर अधिगम सिद्धान्त दिए । पावलॉव ने कुत्ते पर अपना प्रयोग किया तथा उसके आधार पर अपना अधिगम सिद्धान्त प्रस्तुत किया। शास्त्रीय अनुबन्धन में तथा सक्रिय अनुबन्धन सिद्धान्तों की शैक्षिक उपयोगिता महत्वपूर्ण है। प्रस्तुत इकाई में स्किनर तथा पॉवलॉब के अधिगम सिद्धांत का वर्णन किया गया है।

2.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जाएंगे कि–

1. स्किनर के सक्रिय अनुबन्धन सिद्धान्त को समझा सकेंगे।
2. सक्रिय व्यवहार तथा सक्रिय अनुबन्धन के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
3. पुनर्वलन के प्रकारों का वर्णन कर सकेंगे।
4. कक्षा में सक्रिय अनुबन्धन सिद्धान्त का प्रयोग कर सकेंगे।
5. शास्त्रीय अनुबन्धन सिद्धान्त को समझा सकेंगे।
6. शास्त्रीय अनुबन्धन तथा सक्रिय अनुबन्धन में अन्तर को स्पष्ट कर सकेंगे।
7. शास्त्रीय अनुबन्धन सिद्धान्त की शैक्षिक उपयोगिता के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

2.3 स्किनर का सक्रिय अनुबन्धन का सिद्धान्त

स्किनर का अधिगम सिद्धान्त सक्रिय अनुबन्धन सिद्धान्त कहलाता है। उन्होंने चूहे, कबूतर आदि पर अपने प्रयोग किए।

स्किनर द्वारा किए गये प्रयोग–

1. स्किनर ने चूहों पर प्रयोग करने के लिए एक विशेष संयत्र बनाया जिसे स्किनर बॉक्स कहते हैं। स्किनर द्वारा किए गये प्रयोग में विशेष रूप से अंधकार युक्त शब्द विहीन इस बॉक्स में भूखे चूहे को ग्रिलयुक्त संकरे रास्ते से गुजर कर लक्ष्य तक पहुँचना होता था।

   प्रयोग शुरू करने से पहले चूहे को कई दिनों तक भूखा रखकर उसे भोजन प्राप्त करने के लिए सक्रिय बनाना पडता था, प्रयोग के ऐसी व्यवस्था की गयी थी कि जैसे ही चूहा उपयुक्त मार्ग पर अग्रसर होता, लीवर पर चूहे का पैर पडता था, खट् की आवाज होती थी या बल्ब जलता था और चूहे को प्याले में कुछ खाना प्राप्त हो जाता था, लीवर को दबाने से होने वाली आवाज तथा प्राप्त हुआ भोजन पूर्नवलन का कार्य करते थे। इस प्रकार इस प्रयोग में चूहे द्वारा लक्ष्य प्राप्ति के लिए किस जोन पर सही व्यवहार अथवा अनुक्रिया का लीवर दबाने से उत्पन्न आवाज और प्याले में उपस्थित थोडे से खाने द्वारा पुर्नबलन होने का प्रयास इस प्रयोग में किया गया।

   चूहे द्वारा सक्रिय होकर जैसे–जैसे पुर्नबलन मिलता गया वैसे वैसे ही सही अनुक्रिया करने और लक्ष्य तक पहुंचने की प्रक्रिया में तीव्रता आती चली गयी।

2. कबूतरों पर प्रयोग करने के लिए स्किनर ने एक विशेष संयन्त्र कबूतर पेटिका का प्रयोग किया था इस प्रयोग में स्किनर ने यह लक्ष्य रखा कि कबूतर दाहिनी ओर एक पूरा चक्कर लगाकर एक सुनिश्चित स्थान पर चोंच मारना सीख जाएं इस प्रयोग में पेटिका में बन्द भूखे कबूतर ने जैसे ही दाहिनी ओर घूम कर सुनिश्चित स्थान पर चोंच मारी, उसे अनाज का एक दाना प्राप्त हुआ। इस दाने द्वारा कबूतर को अपने सही व्यवहार की पुनरावृत्ति के पुर्नबलन प्राप्त हुआ और उसने फिर दाहिनी ओर घूमकर चोंच मारने की अनुक्रिया की, परिणामस्वरूप उसे फिर अनाज का एक दाना प्राप्त हुआ इस दाने द्वारा कबूतर को अपने सही व्यवहार की पुनरावृत्ति के लिए पुर्नबलन प्राप्त हुआ और उसने फिर दाहिनी ओर घूमकर चोंच मारने की अनुक्रिया की। परिणामस्वरूप उसे फिर अनाज का एक दाना प्राप्त हुआ इस प्रकार कबूतर ने धीरे–धीरे दाहिनी ओर सिर घुमाकर चोंच मारने की क्रिया द्वारा दाना प्राप्त करने का ढंग सीख लिया।

   इस प्रयोगों के आधार पर स्किनर ने अधिगम के क्षेत्र में एक नए सिद्धान्त सक्रिय अनुबन्ध को जन्म दिया उन्होने निष्कर्ष निकाला कि हमारे सीखने सम्बन्धी व्यवहार को सक्रिय अनुबन्ध संचालित करता है। हमारा व्यवहार एवं अनुक्रिया कुछ सीमा तक सक्रिय व्यवहार का ही रूप है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1) स्किनर ने कौन सा अधिगम सिद्धान्त दिया?

....

....

2) स्किनर ने किस पर अपने प्रयोग किए?

....

....

2.4 अनुक्रिया व्यवहार तथा सक्रिय अनुबन्धन

स्किनर ने अपने प्रयोगों के आधार पर यह सिद्ध किया कि बहुत सी अनुक्रियाएं ऐसी होती हैं जिनको हम ज्ञात उद्‌दीपन से नहीं जोड़ सकते हैं। इस आधार पर उन्होंने निम्न दो अनुक्रियाओं या व्यवहारों की चर्चा की–

1) अनुक्रिया व्यवहार (Respondent Behaviour)

2) सक्रिय व्यवहार (Operant Behaviour)

ऐसे सभी व्यवहार अथवा अनुक्रियाएं जो किसी ज्ञात उद्‌दीपन के कारण होती है अनुक्रिया व्यवहार होते हैं जो व्यवहार या अनुक्रियाएं किसी ज्ञात उद्‌दीपन के कारण नहीं होती, उन्हें सक्रिय व्यवहार कहा गया।

अनुक्रिया व्यवहार के उदाहरण– सभी प्रकार के सहज व्यवहार क्रियाएं जैसे– पिन चुभने पर हाथ का तुरन्त खींचना, तीव्र प्रकाश में आंख का बन्द हो जाना, खाना देखकरक मुंह में पानी आना आदि

सक्रिय व्यवहार के उदाहरण– व्यक्ति द्वारा हाथ–पैर हिलाते रहना, बच्चे द्वारा एक खिलौना छोड़कर दूसरा खिलौना लेना आदि।

अतः अनुक्रिया व्यवहार में अनुक्रिया के लिए उत्तरदायी उद्‌दीपन की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। सक्रिय व्यवहार में कोई ज्ञात उद्‌दीपन व्यवहार का कारण नहीं बनता है। इस प्रकार सक्रिय व्यवहार उद्‌दीपन पर आधारित न होकर अनुक्रिया या व्यवहार पर निर्भर होता है। यहां व्यक्ति को पहले कोई क्रिया करनी पड़ती है। इसके पश्चात् ही परिणाम के रूप में जो उसे प्राप्त होता है उसके द्वारा उसके व्यवहार को पुर्नबलन प्राप्त होता है।

सक्रिय अनुबन्धन (Operant Condititning)

सक्रिय अनुबन्धन एक ऐसी अधिगम प्रक्रिया है जिसके द्वारा सक्रिय व्यवहार की पुनरावृत्ति सुनियोजित पुनर्बलन (Planned reinforcement Schedules) द्वारा पर्याप्त बल मिल जाने के कारण जल्दी–जल्दी होती है। अन्त में अधिगमकर्ता वांछित व्यवहार करने लगता है।

अधिगम की इस प्रक्रिया में अधिगमकर्ता को कोई न कोईक्रिया करनी पडती है जैसे चूहे द्वारा लीवर दबाने या कबूतर द्वारा दाहिनी ओर घूमकर निश्चित स्थान पर चोंच मारने की क्रिया यही व्यवहार (operant behaviour) पुनर्बलन ((Reinforcement) उत्पन्न करने में माध्यम (Insmument) का कार्य करता है। भोजन, पानी आदि के रूप में पुरस्कार की प्राप्ति होने पर सीखने वाला उसी व्यवहार की पुनरावृत्ति करता है जिसके कारण उसे पुरस्कार या पुनर्बलन प्राप्त हुआ था। व्यवहार की यह पुनरावृत्ति उसे पुनः पुरस्कार या पुर्नबलन प्रदान कराती है और फिर वह अधिक गति से अपने व्यवहार की पुनरावृत्ति करने लगता है। इस प्रकार अन्त में अधिगमकर्ता वांछित व्यवहार सीख लेता है।

कई बार यह देखा जाता है कि जिस प्रकार का व्यवहार हम सीखना चाहते है और उसे पुनर्बलन प्रदान करना चाहते है वैसा ही अपेक्षित व्यवहार अधिगमकर्ता प्रारम्भ से ही करने लगे। सक्रिय अनुबन्धन की प्रक्रिया के पहले चरण में उचित पुर्नबलन द्वारा अधिगमकर्ता को वांछित व्यवहार की दिशा में धीरे–धीरे मोड़ा जाता है। इसे व्यवहार का रूपण (shaping of behaviour) कहते हैं। वांछित व्यवहार की शुरूआत हो जाने पर इसकी पुनरावृत्ति के समुचित आयोजन से इसे तब तक करते रहना चाहिए जब तक सीखने वाला अपेक्षित व्यवहार को ठीक प्रकार से सीखकर उसे कुशलतापूर्वक करने लगे।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

3) अनुक्रिया व्यवहार के कुछ उदाहरण बताइए।

....

....

4) अनुक्रिया व्यवहार तथा सक्रिय व्यवहार में अन्तर बताइए।

....

....

2.5 पुर्नबलन के प्रकार

पुनर्बलन द्वारा सक्रिय व्यवहार की पुनरावृत्ति होती है जिससे वांछित व्यवहार परिवर्तन या अधिगम में सहायता मिलती है। व्यवहार या अनुक्रिया के कम होने पर उसे पुनः पुर्नबलन प्रदान करने पर अनुक्रिया या व्यवहार के पुनः घटित होने की सम्भावना बढ़ जाती है।

अधिगमकर्ता द्वारा की गयी अनुक्रिया या व्यवहार को इस दो प्रकार से पुर्नबलित कर सकते हैं–

1. धनात्मक पुनर्बलन (Positive Reinforces)

अधिगमकर्ता को वह वस्तु उपलब्ध कराकर जिसे वह पसन्द करता हो धनात्मक पुर्नबलक कहते है। जैसे भोजन पानी, धन–दौलत आदि

2. ऋणात्मक पुनर्बलन (Negative Reinforces)

अधिगमकर्ता के समक्ष वह परिस्थिति उत्पन्न करना जिसे वह पसन्द न करता हो, ऋणात्मक पुर्नबलक कहलाता है जैसे बिजली का झटका, अपमान, डरावनी आवाजे आदि आयोजन (Schedule) की दृष्टि से पुर्नबलन के निम्न चार प्रकार हैं–

1) सतत् पुर्नबलन आयोजन (Continuous Reinforcement Schedules) : यह शत–प्रतिशत पुनर्बलन आयोजन है जिसमें सीखने वाले की प्रत्येक सही अनुक्रिया या व्यवहार को पुर्नबलित या पुरस्कृत किया जाता है।

2) निश्चित अन्तराल पुनर्बलन आयोजन (fixed internal reinforcement schedule) : इस प्रकार के आयोजन में अधिगमकर्ता को एक निश्चित समय के पश्चात पुनर्बलन दिया जाता है– जैसे– चूहे को हर 5 मिनट बाद बाद भोजन का कुछ अंश प्रदान करना, छात्र द्वारा 15 मिनट तक पढने के उपरान्त उसे बिस्किट देना।

3) निश्चित अनुपात पुनर्वलन आयोजन (Fixed Ratio reinforcement Schedule) : इस आयोजन में यह निश्चित करके पुर्नबलन प्रदान किया जाता है कि कितनी बार सही अनुक्रिया करने पर पुनर्बलन दिया जाए जैसे कबूतर द्वारा 30 बार चोंच मारने पर एक दाना देना तीन प्रश्नों के उत्तर याद कर लेने पर छात्र को पुरस्कार देना आदि।

4) परिवर्तनशील पुनर्बलन आयोजन (Variable reinforcement schedule) : इस प्रकार के आयोजन में पुनर्बलन किसी भी समय तथा कितनी भी अनुक्रियाओं के उपरान्त दिया जाता है जैसे कबूतर द्वारा चोच मारने पर किसी भी समय एक दाने के रूप में पुनर्बलन प्रदान करना छात्र द्वारा लगातार पढाई करते रहने पर किसी भी समय उसे पुरस्कार देना आदि।

सक्रिय व्यवहार एवं पुर्नबलन में सम्बन्ध (Relationship between operant conditioning and reinforcement) पुर्नबलन सक्रिय व्यवहार को बल प्रदान करके वांछित व्यवहार के रूप में अधिगम में सहायता करता है। सतत पुर्नबलन द्वारा जितनी शीघ्रता से व्यवहार को पुनर्वलित किया जाता है उतनी ही शीघ्रता से पुर्नबलन न प्राप्त होने पर व्यवहार के विलुप्तिकरण (Extinction) की सम्भावना बढ़ जाती है। सीखे हुए वांछित व्यवहार को कम से कम भूलने या उसके विलुप्तिकरण की सम्भावना को कम करने के लिए परिवर्तनशील पुनर्बलन (Variable reinforcement) सबसे उपयुक्त होता है इस प्रकार अधिगम प्रक्रिया से प्रारम्भ में शत प्रतिशत पुनर्बलन देना चाहिए इसके पश्चात निश्चित अन्तराल या निश्चित अनुपात पुनर्बलय का प्रयोग करना चाहिए। अन्त में सीखे हुए वांछित व्यवहार को स्थायी रूप प्रदान करने की दिशा में परिवर्तनशील पुनर्वलन का उपयोग किया जाना चाहिए।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

5) धनात्मक तथा ऋणात्मक पुर्नबलक में क्या अन्तर है?

....

....

6) निश्चित अन्तराल एवं निश्चित अनुपात पुनर्बलन आयोजन में अन्तर बताइए।

....

....

7) पुनर्बलन तथा सक्रिय व्यवहार में क्या सम्बन्ध है?

....

....

2.6 कक्षा में सक्रिय अनुबन्धन सिद्धान्त का प्रयोग

1) शिक्षक द्वारा उचित पुर्नबलन प्रदान करना (To provide proper reinforcement by the teacher) : शिक्षक द्वारा अधिगम की प्रक्रिया एवं परिस्थितियों को इस प्रकार नियोजित करना चाहिए कि अधिगमकर्ता उचित पुर्नबलन द्वारा निरन्तर आगे बढ़ने को प्रोत्साहित हो, छात्र को सीखने में कम से कम असफलता का सामना करना पड़े।

2) व्यवहार परिमार्जन (Behaviour Modification) : सक्रिय अनुबन्धन सिद्धान्त का प्रयोग व्यवहार परिमार्जन में बहुत अच्छी तरह किया जा सकता है। जिस छात्र के व्यवहार में परिमार्जन लाना है उसके लिए अच्छे पुनर्बलक की खोज कर लेनी चाहिए जैसे ही छात्र अपेक्षित व्यवहार की ओर बढे तुरन्त ही उपयुक्त पुनर्बलक द्वारा उसके इस व्यवहार को प्रोत्साहित करना चाहिए इससे छात्र के वांछित व्यवहार की पुनरावृत्ति होगी पुर्नबलन प्राप्त होते रहने पर छात्र के वांछित व्यवहार की ओर तेजी से अग्रसर होगा तथा वांछित व्यवहार को सीखने में सफल हो जाएगा।

3) व्यक्तित्व का समुचित विकास (All round development the personality) : व्यक्तित्व के समुचित विकास के लिए सक्रिय अनुबन्धन सिद्धान्त का अच्छी तरह उपयोग किया जा सकता है। हमें समय—समय पर प्राप्त उन पुनर्बलनों के परिणामस्वरूप व्यक्तित्व का निर्माण होता है जिससे हम और हमारा व्यवहार एक निश्चित ढ़ांचे में ढ़ल जाते हैं।

4) अभिप्रेरक (Reinforcer) : सक्रिय अनुबन्ध सिद्धान्त के अनुसार अनुक्रिया की उपयुक्तता तथा कार्य की सफलता अभिप्रेरणा का सबसे अच्छा स्रोत है चूहे तथा कबूतर के लिए भोजन की प्राप्ति एक अच्छा अभिप्रेरक है तथा छात्र के लिए सही उत्तर की जानकारी या परीक्षा में अच्छे अंक की प्राप्ति अधिगम प्रक्रिया में एक सशक्त अभिप्रेरक है। अध्यापक द्वारा छात्र को प्रोत्साहित करने वाले हाव—भाव प्रशंसा के शब्द, सफलता की अनुभूति, परीक्षा में अधिक अंकों की प्राप्ति, पुरस्कार आदि ऐसे पुनर्बलन हैं जिसके द्वारा छात्र पूरी अंक की प्राप्ति अधिगम प्रक्रिया में एक सशक्त अभिप्रेरक है अध्यापक द्वारा छात्र को प्रोत्साहित करने वाले हाव—भाव प्रशंसा के शब्द, सफलता की अनुभूति, परीक्षा में अधिक अंकों की प्राप्ति पुरस्कार आदि ऐसे पुनर्बलन है जिसके द्वारा छात्र पूरी तरह अनुप्रेरित होकर अधिक उत्साह से अधिगम के लिए प्रेरित हो जाता है। अध्यापक द्वारा इनका उचित प्रयोग किया जाना चाहिए।

5) दण्ड (Punishment) : सक्रिय अनुबन्ध सिद्धान्त के अनुसार दंड देना न तो वांछित व्यवहार को सीखने में सहायक होता है और न ही बुरी आदतों को त्यागने में दंड के द्वारा कुछ समय के लिए बच्चा गलत

व्यवहार करना छोड देता है। परन्तु जैसे ही दंड का भय या प्रभाव समाप्त होता है बुरे व्यवहार की पुनरावृत्ति होने लगती है अतः सक्रिय अनुबन्धन दण्ड के स्थान पर वांछित व्यवहार को पुनर्वलन द्वारा सुदृढ करने पर बल देता है अवांछनीय व्यवहार की उपेक्षा कर उसे विलुप्त (Existinguish) करने का विकल्प प्रस्तुत करता है।

6) अधिगम में सफलता (Success in Learing) : सक्रिय अनुबन्धन सिद्धान्त के अनुसार अधिगम में सफलता तभी प्राप्त होती है जब सीखने की सामग्री को इस प्रकार नियोजित किया जाय कि अधिगमकर्ता को अधिक से अधिक सफलता और कम से कम असफलता प्राप्त हो, सही अनुक्रिया या उत्तरों के लिए उसे तेजी से पुनर्वलन प्राप्त होता रहे तथा सीखने वाले को स्वयं उसकी अपनी गति से सीखने का अवसर मिले।

7) शिक्षण व्यूह रचनाओं का जन्म (origin of teaching streacgies) : स्किनर के अधिगम सिद्धान्तों के आधार पर ही अभिक्रमित अनुदेशन, कम्प्यूटर सह अनुदेशन, शिक्षण मशीन आदि की उत्पत्ति हुई।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

8) सक्रिय अनुबंधन किस प्रकार हमारे व्यक्तित्व विकास में सहायक है?

....

....

9) स्किनर के अधिगम सिद्धान्त के आधार पर किन शिक्षण व्यूह रचनाओं की उत्पत्ति हुई?

....

....

2.7 पॉवलाव का शास्त्रीय अनुबन्धन सिद्धान्त

कुत्ते पर किए गए अपने प्रयोग द्वारा पॉवलाव ने अधिगम प्रक्रिया को समझने के लिए अनुबन्धित या प्रतिबद्ध अनुक्रिया सिद्धान्त (Conditioned Response Theory) को जन्म दिया, इस सिद्धान्त को अनुबन्धन द्वारा सीखना (Learning by Conditioning) भी कहते हैं। अनुबन्धन का प्राचीनतम रूप होने के कारण इसे शास्त्रीय अनुबन्धन भी कहते हैं।

पॉवलाव द्वारा किया गया प्रयोग

पॉवलाव ने अपने प्रयोग में एक कुत्ते को भूखा रखकर उसे प्रयोग करने वाली मेज के साथ बांध दिया इस कुत्ते की लार–ग्रन्थियों का भी ऑपरेशन किया गया ताकि उसकी लार की बूंदों को परखनली में एकत्रित करके लार की मात्रा को मापा जा सके। स्वतः चालित यांत्रिक उपकरणों की सहायता से कुत्ते को भोजन देने की व्यवस्था की गयी। प्रयोग के प्रारम्भ में घंटी बजने के साथ ही कुत्ते के सामने भोजन प्रस्तुत किया गया। भोजन को देखकर कुत्ते के मुंह में लार आना स्वाभाविक ही था इस लार को कांच की नली द्वारा परखनली में एकत्रित कर लिया गया इस प्रयोग को कई बार दोहराया गया तथा एकत्रित लार की मात्रा को भी माप लिया गया।

प्रयोग के अन्तिम चरण में भोजन न देकर केवल घंटी बजाने की व्यवस्था दी गयी। इस अवस्था में भी कुत्ते के मुंह से लार टपकी जिसकी मात्रा को माप लिया गया, इस प्रयोग द्वारा यह देखने को मिला कि भोजन सामग्री जैसे प्राकृतिक उद्दीपन के अभाव में भी घंटी बजने जैसी कृत्रिम उद्दीपन के प्रभाव स्वरूप कुत्ते ने

लार टपकाने जैसी स्वाभाविक अनुक्रिया (Natural response) व्यक्त की।

प्राकृतिक उद्‌दीपन (भोजन प्रस्तुत करना) — लार आना (स्वाभाविक अनुक्रिया)

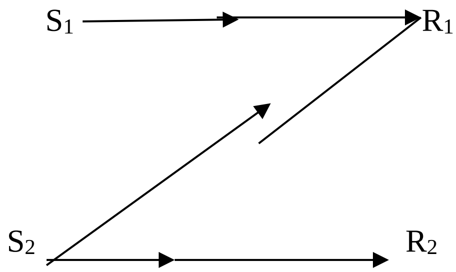

कृत्रिम उद्‌दीपन (घंटी बजना) — सामान्य रूप में (सचेत होना)

इस प्रयोग में कुत्ते ने यह सीखा कि जब घंटी बजती है तब खाना मिलता है। सीखने के इसी प्रभाव के कारण घंटी बजने पर उनके मुंह से लापर निकलनी प्रारम्भ हो जाती है। पॉवलॉब ने इस प्रकार के सीखने को अनुबन्धन द्वारा सीखना कहा, इस प्रकार के अधिगम में किसी प्राकृतिक उद्‌दीपन (Natural Stimules) जैसे भोजन पानी आदि के साथ एक कृत्रिम उद्‌दीपन जैसे घंटी की आवाज, कोई रंगीन प्रकाश आदि प्रस्तुत किया जाता है। कुछ समय पश्चात जब उद्‌दीपन को हटा लिया जाता है तो यह देखा जाता है कि कृत्रिम उद्‌दीपन से भी वही अनुक्रिया होती है जो प्राकृतिक उद्‌दीपन से होती है। इस प्रकार अनुक्रिया कृत्रिम उद्‌दीपन के साथ अनुबंधित हो जाती है।

इस सिद्धान्त को अनुबन्धित अनुक्रिया सिद्धान्त (Conditioned Responsive Theory or S.R. theory) भी कहते हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

10) पॉवलाव ने किस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया?

....

....

11) पॉवलाव ने किस जन्तु पर अपना प्रयोग किया?

....

....

12) पॉवलाव के अधिगम सिद्धान्त को शास्त्रीय अनुबन्धन भी क्यों कहते हैं?

....

....

2.8 शास्त्रीय अनुबंधन तथा सक्रिय अनुबन्धन में अन्तर

अनुक्रिया अनुबन्धन में वांछित अनुक्रिया या व्यवहार को उत्पन्न करने में उद्‌दीपन (Stimulus) की प्रमुख भूमिका रहती है। इसलिए इसे उद्‌दीपन–अनुक्रिया सिद्धान्त भी कहते हैं। दूसरी ओर सक्रिय अनुबन्धन, सक्रिय व्यवहार सम्बन्धी अधिगम में सहायक होता है।

शास्त्रीय अनुबन्धन (Classical Conditioning)) में प्राकृतिक उददीपक अथवा कृत्रिम उददीपक द्वारा अनुबन्धित अनुक्रिया (Conditioning Response) उत्पन्न करने में सहायता मिलती है। अधिगम किसी न किसी

रूप में उद्दीपन से जुड़ा होता है। अतः इस प्रकार के अनुबन्धन में उपयुक्त उद्दीपकों के चुनावकी समस्या रहती है जिससे वांछित अनुक्रिया होती रहे।

अनुक्रियाजन्य सक्रिय अनुबन्धन में समस्य यह रहती है कि अधिगमकर्ता द्वारा की जा सकने वाली सम्भावित अनुक्रियाओं या व्यवहारों में से वांछित अनुक्रिया या व्यवहार को कैसे उत्पन्न की जाय तथा सही व्यवहार या अनुक्रिया को उपयुक्त पुनर्वलन द्वारा स्थापित कैसे प्रदान किया जाय शास्त्रीय अनुबन्धन एवं सक्रिय अनुबन्धन में निम्न अन्तर है–

क्रमांक	शास्त्रीय अनुबन्ध (Classical Conditioning)	सक्रिय अनुबन्धन (Operant Conditioning)
1.	शास्त्रीय अनुबन्धन अनुक्रिया व्यवहार सम्बन्धी अधिगम में सहायक होता है।	सक्रिय अनुबन्धन सक्रिय व्यवहार सम्बन्धी अधिगम में सहायक सिद्ध होता है।
2.	इस प्रकार के अधिगम में वांछित अनुक्रिया या व्यवहार उत्पन्न करने में उददीपक की केन्द्रीय भूमिका रहती है।	इस प्रकार के अधिगम में अनुक्रिया की प्रमुख भूमिका होती है।
3.	अनुबन्धन प्रकिया का प्रारम्भ किसी विशेष उद्दीपक द्वारा कोई निश्चित अनुक्रिया उत्पन्न करने द्वारा होती है।	सक्रिय अनुबन्धन का प्रारम्भ उन अनुक्रियाओं को लेकर होती है जो स्वाभाविक रूप से होती है।
4.	इसमें अनुबन्धन की शक्ति अनुबन्धित अनुक्रिया की सामर्थ्य पर निर्भर करती है।	इसमें अनुबन्धन की शक्ति को अनुक्रिया दर द्वारा प्रदर्शित किया जाता है।
5.	इस प्रकार के अनुबन्धन में दण्ड को बुरी आदतें छुडाने तथा अवांछनीय व्यवहार को भूल जाने के लिए प्रयोग में लाते हैं।	सक्रिय अनुबन्धन में दण्ड का प्रयोग वांछनीय व्यवहार को सिखाने अथवा अवांछनीय व्यवहार को सुधारने के लिए प्रयोग में लाने का सख्त विरोधी है वांछनीय व्यवहार को पुनर्वलन द्वारा सुदृढ़ किया जाना चाहिए तथा अवांछनीय व्यवहार की ओर कोई ध्यान नहीं दिया जाना चाहिए।
6.	इसमें अधिगमकर्ता स्वतंत्र नहीं होता है जिस प्रकार का उद्दीपन उसके सामने होता है वह पैसा व्यवहार करने के लिए विवश होता है।	इसमें अधिगमकर्ता को अनुक्रिया करने की स्वतंत्रता होती है।
7.	इस अनुबन्धन में अनुक्रिया उत्पन्न करने के लिए ज्ञात उद्दीपन का होना अत्यन्त आवश्यक है।	इस अनुबन्धन में व्यवहार या अनुक्रिया के लिए किसी ज्ञात उद्दीपन की आवश्यकता नहीं होती है।
8.	पुनर्वलन का प्रयोग अधिगमकर्ता द्वारा की गयी अनुक्रिया अथवा व्यवहार के पहले किया जाता है।	अनुबन्धन का प्रारम्भ अनुक्रिया द्वारा होता है इसके उपरान्त उसे बल प्रदान करने के लिए पुनर्वलन दिया जाता है।

2.9 शास्त्रीय अनुबंधन सिद्धान्त की शैक्षिक उपयोगिता

अधिगम के व्यावहारिक क्षेत्र में भी इस सिद्धान्त की अत्यन्त उपयोगिता है। निम्न तथ्यों के आधार पर इसकी प्रासंगिकता देखी जा सकती है–

1. विभिन्न भाव जागृत करने हेतु

अनुबन्धन के द्वारा बालकों में भय, प्रेम, घृणा, स्नेह आदि के भाव विकसित किए जा सकते हैं– जैसे– यदि कक्षा में अंग्रेजी का शिक्षक किसी बालक के साथ ठीक व्यवहार नहीं करता है तथा उसका मजाक उड़ाता है व मारता पीटता है ऐसी अवस्था में बालक पहले उस शिक्षक से घृणा करने लगता है तथा धीरे–धीरे उसके द्वारा पढाये जाने वाले अंग्रेजी विषय से भी घृणा करने लगता है। दूसरी ओर शिक्षक द्वारा बालकों के साथ अच्छा व सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करने पर तथा उसके पढाने के रोचक तरीके के अनुबन्धन के फलस्वरूप बालकों के मन में अच्छे भाव विकसित होते हैं। वे शिक्षक को स्नेह और आदर की दृष्टि से देखते हैं तथा विषय के प्रति भी उनमें रूचि उत्पन्न होती है।

2. श्रव्य–दृश्य सामग्री का प्रयोग

शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया में श्रव्य–दृश्य सामग्रियों के प्रयोग द्वारा तरह–तरह की बातें सिखाने में भी अनुबन्धन सिद्धान्त को अच्छी तरह उपयोग में लाया जा सकता है जैसे अगर बच्चे को आम शब्द कहना सिखलाना हो तो शिक्षक लिखे हुए शब्द आम के साथ उसके चित्र को भी दिखाता है तथा बच्चे को आम बोलने के लिए कहता है कुछ समय पश्चात आम का चित्र नहीं दिखाया जाता केवल लिखा हुआ शब्द देखकर ही बच्चा आम बोलना प्रारम्भ कर देता है इस प्रकार आम कहने की अनुक्रिया कृत्रिम उद्दीपन अर्थात लिखे हुए शब्द के साथ अनुबंधित हो जाती है और बच्चा अनुबंधित क्रिया के परिणामस्वरूप आम कहना प्रारम्भ कर देता है।

3. अच्छी आदतों के विकास में

वांछित व्यवहार अच्छी आदतों अभिरूचिओं, अभिवृत्तियों आदि के समुचित विकास में अनुबन्धन की प्रक्रिया शिक्षकों के लिए अत्यन्त लाभदायक है। इसकी सहायता से बच्चों को न केवल वांछित व्यवहार सिखाए जा सकते है बल्कि अवांछित व्यवहारों, गलत आदतों भय, मानसिक तनावों को भी दूर करने में यह सिद्धान्त सहायक है। कोई बच्चा यदि किसी वस्तु या घटना से डरता है तो उसी वस्तु या घटना से उसे आनन्द प्राप्त करने योग्य बनाया जा सकता है। इस प्रकार अनुबन्धन सिद्धान्त अधिगम की विभिन्न प्रक्रियाओं में बच्चे की हर स्तर पर सहायता करता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

13) शास्त्रीय तथा सक्रिय अनुबन्धन में वांछित व्यवहार उत्पन्न करने में किसकी सक्रिय भूमिका होती है?

....

....

14) अनुबन्धन के द्वारा बालकों में किन भावो को विस्तारित किया जाता है?

....

....

2.10 सारांश

स्किनर ने अधिगम का सक्रिय अनुबन्धन सिद्धान्त दिया, उन्होंने चूहे तथा कबूतरों पर अपने विभिन्न प्रयोगों के आधार पर अधिगम सिद्धान्त दिए। स्किनर ने दो प्रकार की अनुक्रियाएं या व्यवहारों की चर्चा की प्रथम अनुक्रिया व्यवहार तथा द्वितीय सक्रिय व्यवहार ऐसे सभी व्यवहार या अनुक्रियाएं जो किसी ज्ञात उद्दीपन के कारण होती है। अनुक्रिया व्यवहार कहलाते हैं तथा जो व्यवहार या अनुक्रियाएं किसी ज्ञात उद्दीपन के कारण नहीं होती है उन्हें सक्रिय व्यवहार कहा जाता है। सभी प्रकार की सहज व्यवहार क्रियाएं जैसे– तेज से रोशनी में आंखे बन्द हो जाना, पिन चुभने पर हाथ पीछे खींचता आदि अनुक्रिया व्यवहार के उदाहरण है। पुनर्बलन धनात्मक तथा ऋणात्मक दोनों प्रकार के हो सकते हैं। पॉवलाव ने कुत्ते पर किए गए प्रयोगों के आधार पर शास्त्रीय अनुबन्धन सिद्धान्त दिया इसे अनुबन्धित अनुक्रिया सिद्धान्त भी कहते है। सक्रिय अनुबन्धन सिद्धान्त एवं शास्त्रीय अनुबन्धन सिद्धान्तों का कक्षा में शैक्षिक उपयोग किया जा सकता है।

2.11 अभ्यास के प्रश्न

1) स्किनर द्वारा किए गए प्रयोगों का वर्णन कीजिए?
2) सक्रिय व्यवहार तथा सक्रिय अनुबन्धन में क्या अन्तर है?
3) कक्षा में शिक्षक द्वारा सक्रिय अनुबन्धन सिद्धान्त का किस प्रकार प्रयोग किया जा सकता है?
4) पुनर्वलन के विभिन्न प्रकारों का वर्णिन कीजिए?
5) शास्त्रीय अनुबन्धन सिद्धान्त का वर्णन कीजिए।
6) शास्त्रीय अनुबन्धन तथा सक्रिय अनुबन्धन सिद्धान्तों में क्या अन्तर है?
7) शास्त्रीय अनुबन्धन सिद्धान्त की शैक्षिक उपयोगिताओं का वर्णन कीजिए?

2.12 चर्चा के बिन्दु

1. शास्त्रीय अनुबन्धन सिद्धान्त एवं सक्रिय अनुबन्धन सिद्धान्त की शैक्षिक उपयोगिताओं की चर्चा कीजिए।

2.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

1). स्किनर ने अधिगम का सक्रिय अनुबन्धन सिद्धान्त दिया।
2). स्किनर ने चूहे तथा कबूतर पर अपने प्रयोग किए।
3). अनुक्रिया व्यवहार के कुछ उदाहरण है– पिन चुभने पर हाथ का तुरन्त खींचना, तीव्र प्रकाश में आंख काक बन्द हो जाना आदि।
4). अनुक्रिया व्यवहार में अनुक्रिया के लिए उत्तरदायी उद्दीपन की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। सक्रिय व्यवहार में कोई ज्ञात उद्दीपन व्यवहार का कारण नहीं बनता है।
5). अधिगम कर्ता को वह वस्तु उपलब्ध कराना जिसे वह पसन्द करता हो, धनात्मक पुनर्वलन होता है जबकि अधिगमकर्ता के समक्ष वह परिस्थिति उत्पन्न करना जिसे वह पसन्द नहीं करता, ऋणात्मक पुनर्बलन कहलाता है।
6). निश्चित अन्तराल में पुनर्बलन में अधिगमकर्ता को एक निश्चित समय के पश्चात पुनर्बलन दिया जाता है जबकि निश्चित अनुपात पुनर्बलन में निश्चित संख्या में अनुक्रिया करने पर पुनर्बलन दिया जाता है।
7). पुर्नबलन सक्रिय व्यवहार को बल प्रदान करके वांछित व्यवहार के रूप में अधिगम में सहायता करता है।
8). सक्रिय अनुबन्धन सिद्धान्त का प्रयोग पुनर्बलक की सहायता से व्यवहार के परिमार्जन में किया जा सकता है।

9). स्किनर के अधिगम सिद्धान्तों के आधार पर अभिक्रमित अनुदेशन, कम्प्यूटर सह अनुदेशन आदि की उत्पत्ति हुई है।

10). पावलॉव ने शास्त्रीय अनुबन्धन सिद्धान्त का प्रतिपादन किया।

11). पावलॉव ने कुत्ते पर अपना प्रयोग किया।

12). अनुबन्धन का प्राचीनतम रूप होने के कारण इसे शास्त्रीय अनुबन्धन सिद्धान्त कहते हैं।

13). शास्त्रीय अनुबन्धन में वांछित व्यवहार उत्पन्न करने में उददीपक की केन्दीय भूमिका होती है जबकि सक्रिय अनुबन्धन में अनुक्रिया की प्रमुख भूमिका होती है।

14). अनुबन्धन के द्वारा बालकों में भय, प्रेम, स्नेह आदि के भाव विकसित किये जाते हैं।

2.14 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. मंगल एस0के0 (2013), ''अधिगम या सीखने के सिद्धान्त'', शिक्षा मनोविज्ञान, नई दिल्ली : पी.एच.आई. लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड।
2. गुप्ता, एस. पी. व गुप्ता, अलका (2016), ''उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान'', प्रयागराज : शारदा पुस्तक भवन,
3. चौहान, आर. (2015), शिक्षा मनोविज्ञान, आगरा : अग्रवाल पब्लिकेशन
4. सिंह ए. के. (2013), शिक्षा मनोविज्ञान, पटना : भारती भवन।

इकाई 03 : थार्नडाइक, कोहलर और गैग्ने के सीखने के सिद्धान्त

इकाई की संरचना

3.1 प्रस्तावना

3.2 इकाई के उद्‌देश्य

3.3 थार्नडाइक के सीखने की प्रयास व त्रुटि विधि

3.4 थार्नडाइक के सीखने के नियम

3.4.1 तत्परता का नियम

3.4.2 प्रभाव का नियम

3.4.3 अभ्यास का नियम

3.5 थार्नडाइक के अधिगम सिद्धान्त एवं नियमों का शैक्षिक महत्व

3.6 कोहलर का अन्तर्दृष्टि या सूझ द्वारा अधिगम सिद्धान्त

3.7 अन्तर्दृष्टि द्वारा अधिगम सिद्धान्त की शैक्षिक उपयोगिता

3.8 गैग्ने का श्रेणीबद्ध अधिगम सिद्धान्त

3.9 सारांश

3.10 अभ्यास के प्रश्न

3.11 चर्चा के बिन्दु

3.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.13 कुछ उपयोगी पुस्तकें

3.1 प्रस्तावना

थार्नडाइक ने सीखने की प्रक्रिया में चालक या अभिप्रेरक की भूमिका को अत्यधिक महत्वपूर्ण बताया, उन्होंने बिल्ली व अन्य जन्तुओं पर किए गए अपने प्रयोगों के आधार पर अधिगम के सिद्धान्त प्रयास व त्रुटि विधि का प्रतिपादन किया, उन्होंने सीखने के विभिन्न नियम भी दिए, इन नियमों का शिक्षा में अत्यधिक महत्व है। कोहलर ने कहा कि अधिगम एक उददेश्यपूर्ण एवं रचनात्मक प्रक्रिया है। उन्होने अन्तर्दृष्टि या सूझ का सिद्धान्त दिया गैग्ने ने अधिगम को मात्र वृद्धि की प्रक्रिया नहीं माना। उन्होंने श्रेणीबद्ध अधिगम सिद्धान्त दिया। इस इकाई के अन्तर्गत थार्नडाइक, कोहलर और गैग्ने के सीखने के सिद्धान्त का वर्णन किया गया है।

3.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जाएंगे कि–

1. थार्नडाइक के सीखने की प्रयास व त्रुटि सिद्धान्त को समझ सकेंगे।
2. थार्नडाइक के सीखने के नियम के सम्बन्ध में विवेचना कर सकेंगे।
3. कोहलर के अन्तर्दृष्टि या सूझ के सिद्धान्त को अभिव्यक्त कर सकेंगे।
4. अन्तर्दृष्टि द्वारा अधिगम की शैक्षिक उपयोगिताएं बता सकेंगे।
5. गैग्ने का श्रेणीकृत्य अधिगम सिद्धान्त को स्पष्ट कर सकेंगे।

3.3 थार्नडाइक क सीखने की प्रयास व त्रुटि विधि

थार्नडाइक ने बिल्ली, मुर्गियों तथा चूहों पर अपने प्रयोग किए तथा इन प्रयोगों के आधार पर सीखने सम्बन्धी अपने नियमों एवं सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया इन जन्तुओं को उन्होंने विभिन्न प्रकार की अधिगम परिस्थितियों में रखा तथा उनकी अधिगम प्रक्रिया का अध्ययन किया।

थार्नडाइक का बिल्ली पर प्रयोग

थार्नडाइक ने एक भूखी बिल्ली को एक उलझन पेटिका (Puzzle Box) में बन्द कर दिया। पेटिका इस प्रकार बनाई गयी थी कि उसमें केवल एक दरवाजा था जो एक लीवर के सही ढंग से दाबने पर खुल सकता था। पेटिका से बाहर कुछ दूरी पर बिल्ली के लिए भोजन के रूप में मछली रखी गयी थी, मछली की गंध ने इस परिस्थिति में एक प्रबल उत्प्रेरक (Motive) का कार्य किया। बिल्ली पेटिका से बाहर आने के लिए हर सम्भव प्रयास में जुट गई बिल्ली से सभी तरीके से उल्टे सीधे पंजे चलाए तथा उछल कूद की। इन उल्टे–सीधे प्रयत्नों के फलस्वरूप एक बार संयोगवश उसका पंजा ठीक तरह से लीवर पर पड़ गया और बाक्स का दरवाजा खुल गया। बिल्ली ने बाहर निकल कर अपना भोजन किया। दूसरी बार फिर इसी प्रयोग को दोहराया गया बिल्ली को भूखा रखकर उसी बॉक्स में बन्द कर दिया गया मछली की गंध ने बिल्ली को फिर से बाक्स से बाहर आने के लिए अभिप्रेरित करना प्रारम्भ कर दिया बिल्ली ने फिर से वही उल्टी–सीधी उछल कूद नोंचना, खरोंचना शुरू कर दिया, पहले प्रयोग की भांति इस बार भी काफी प्रयत्नों के बाद लीवर पर अचानक पैर पडने पर बाक्स का दरवाजा खुल गया परन्तु इस बार दरवाजा खुलने में कम समय लगा। इस प्रकार की क्रियाएं कई बार दोहराई गयी। धीरे–धीरे बिल्ली के उल्टे–सीधे प्रयत्नों की संख्या कम होती गयी बिल्ली को बॉक्स से बाहर आने में लडाने वाले समय की मात्रा घटती चली गयी। बाद के प्रयोगों में बिल्ली ने बिना किसी त्रुटि के पहली बार में ही लीवर को ठीक प्रकार से दबाकर दरवाजा खोल दिया इस प्रकार से प्रयास करते–करते बिल्ली दरवाजा खोलना सीख गयी। इस प्रयोग के आधार पर अधिगम के निम्न चरणों की जानकारी होती है–

1) चालक (Drive) या अभिप्रेरक (Motive) – इस प्रयोग में भूख ने चालक या अभिप्रेरक का कार्य किया। गन्ध ने अभिप्रेरणा को और अधिक बढ़ाया।
2) लक्ष्य (Goal) – बाक्स से बाहर निकल कर मछली खाना।
3) लक्ष्य प्राप्ति में बाधा (Block in achieving Goal) - बॉक्स से बाहर निकलने का रास्ता बन्द था।
4) उल्टे सीधे प्रयत्न (Random movements) – बिल्ली ने बाहर निकलने के लिए सभी तरह के उल्टे सीधे प्रयत्न किए।
5) संयोगवश सफलता प्राप्त होना (To get chance Success) – अपने उल्टे–सीधे प्रयत्नों को करते रहने में संयोगवश उसका एक प्रयास सफल हो गया।
6) सही प्रयास का चुनाव (Selection of proper movement) – सही गलत प्रयासों में से दरवाजा खुलने का जो सही तरीका था उसे बिल्ली द्वारा चुन लिया गया।
7) स्थिरता (Firation) – प्रयोग के अन्त में अनेकों गलत प्रयासों को छोड़कर सही प्रयत्न करना सीख लिया तथा वह बिना किसी त्रुटि के पहले ही प्रयास में दरवाजा खोलना सीख गई।

थार्नडाइक ने उपरोक्त प्रयोग में बिल्ली द्वारा बॉक्स खोलना सीखने की विधि को प्रयास एवं त्रुटि विधि (Trial and Error Method) कहा उसने कहा कि सीखने में हम निरन्तर प्रयास करते हुए अपनी त्रुटियों को कम करते जाते है तथा इस तरह से गलत अनुक्रियाओं (Incorrect Responses) के स्थान पर सही अनुक्रियाओं (Correct Responses) को करना सीख जाते हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1) थार्नडाइक के प्रयोग में चालक या अभिप्रेरक के रूप में किसने कार्य किया।

....

....

2) थार्नडाइक ने अधिगम की किस विधि का प्रतिपादन किया।

....

....

3.4 थार्नडाइक के सीखने के नियम

थार्नडाइक ने अपने प्रयत्न व त्रुटि सिद्धान्त के आधार पर अधिगम सम्बन्धी कुछ नियमों का प्रतिपादन किया उनमें से कुछ प्रमुख का विवरण निम्न है–

3.4.1 तत्परता का नियम

इस नियम के अनुसार जिस काम को सीखा जा रहा है यदि उसे सीखने के लिए मन में उत्कृष्ट अभिलाखा हो तो उसे सीखने में बहुत आसानी होती है। यदि किसी कार्य को हम सीखना न चाहे और बलपूर्वक उसे सीखाया जाय तो उसे सीखना कठिन होता है। अतः अधिगमकर्ता की मनस्थिति बडा गहरा प्रभाव अधिगम प्रक्रिया पर पडता है। अधिगम के लिए अधिगमकर्ता को तत्पर होना चाहिए अधिगम के लिए पर्याप्त रूचि या तत्परता न होने पर बालक को अधिगम के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता है। इसी प्रकार यदि बालक किसी कार्य विशेष के अधिगम के लिए अत्यधिक तत्पर है तो वह आसानी से अधिगम प्राप्त कर लेगा इस अवसर को व्यर्थ नहीं गंवाना चाहिए इस प्रकार तत्परता का नियम अधिगम प्रक्रिया में बालक की रूचि, तत्परता, अभिप्रेरणा आदि के महत्व को इंगित करता है।

3.4.2 प्रभाव का नियम

थार्नडाइक के अनुसार ''जब एक परिस्थिति और अनुक्रिया के बीच एक संशोधनशील सम्बन्ध बनता है और उसके साथ ही या परिणामस्वरूप संतोषजनक अवस्था उत्पन्न होती है तो उस सम्बन्ध (Connection) की प्रबलता बढ़ जाती है जब इस सम्बन्ध के साथ या इसके उपरान्त दुखद स्थिति उत्पन्न होती है तो इसकी प्रबलता घट जाती है।''

उपरोक्त कथन के आधार पर कहा जा सकता है कि अधिगम के दौरान या उसके परिणामस्वरूप जब उसे संतोष या आनन्द की प्राप्ति होती है तो अधिगम प्रक्रिया भली–भांति समाप्त हो जाती है। इसके विपरीत जब अधिगम के फलस्वरूप कोई संतोष या आनन्द की प्राप्ति नहीं होती बल्कि पीडा या दुख की अनुभूति होती है तब अधिगम प्रक्रिया में बाधा उत्पन्न होती है। अतः अधिगम के परिणामस्वरूप जो संतुष्टि–असंतुष्टि, प्रसन्नता–अप्रसन्नता आदि की अनुभूति होती है उसके ऊपर सीखने की सफलता या असफलता निर्भर करती है।

प्रभाव का यह नियम अधिगम प्रक्रिया में पुरस्कार और दण्ड के महत्व को दर्शाता है बालक को अधिगम के उपरानत यदि पुरस्कृत किया जाय तो उसे और आगे सीखने के लिए प्रोत्साहन प्राप्त होगा परन्तु यदि उसे बलपूर्वक अधिगम के लिए विवश किया जाय तो अधिगम उसे असंतोषजनक एवं अप्रसन्नता का अनुभव कराएगा। इस प्रकार वह बालक अधिगम के लिए निरूत्साहित होगा।

3.4.3 अभ्यास का नियम

इस नियम के दो उपनियम है जो निम्न हैं–

1) उपयोग का नियम

जब एक संशोधनशील संबंध एक परिस्थिति और अनुक्रिया के मध्य बनता है तो अन्य बातें समान होने पर उस संबंध या संयोजन की शक्ति बढ जाती है।

2) अनुप्रयोग का नियम

जब कुछ समय एक परिस्थिति एवं अनुक्रिया के बीच संशोधनशील संयोजन नहीं बनता है तो उस संयोजन की शक्ति घट जाती है।

अतः यदि अधिगम प्रक्रिया को बार–बार दोहराया जाये तो वह अधिक प्रभावपूर्ण और स्थायी बन जाती है लेकिन यदि अधिगम प्रक्रिया के अवसर अधिक न मिले तो उस संयोजन की शक्ति घट जाती है अर्थात अधिगम विस्मृत हो जाता है इस प्रकार यह नियम अधिगम प्रक्रिया में अभ्यास व पुनरावृत्ति के महत्व को दर्शाता है।

(अ) प्रभाव व अभ्यास के नियमों का परिवर्तित रूप

थार्नडाइक ने अधिगम के नियमों में थोडा परिवर्तन किया उसने एक व्यक्ति की आंखों पर पटटी बांधकर उसे 3 इंच लम्बी सीधी रेखा खींचने को कहा इस कार्य की बार–बार आवृत्ति कराई गई परन्तु यह देखा गया कि मात्र दोहराने से ही कार्य करने के तरीके में कोई सुधार नहीं आता है। इस आधार पर थार्नडाइक इस निर्णय पर पहुंचे कि सीखने की क्रिया में बिना उचित प्रंशंसा, प्रोत्साहन या पुरस्कार के केवल अभ्यास से काम नहीं चलता, पुरस्कार मिलने पर अधिगम साधारण अभ्यास से कई गुना अधिक सशक्त हो जाता है। अतः अधिगम प्रक्रिया में अभ्यास के साथ–साथ परिणाम के संतोषजनक होने या उसे पुरस्कृत किए जाने पर अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए।

प्रभाव के नियम के सम्बन्ध में थार्नडाइक ने यह परिवर्तन किया कि सीखने की प्रक्रिया में पुरस्कार एवं दण्ड का प्रभाव एक समान नहीं रहता है और न ही परस्पर विरोधी होता है। प्रशंसा या पुरस्कार का प्रभाव दण्ड से अधिक प्रभावी होता है प्रसन्नता एवं संतोष मिलने से संयोजन जितना मजबूत होता है असंतोष या अप्रसन्नता से वह उतना कमजोर नहीं होता है। अतः सीखने की प्रक्रिया में निन्दा व दण्ड के स्थान पर प्रशंसा व पुरस्कार का प्रयोग करना अधिक उपयुक्त होता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

3) थार्नडाइक द्वारा प्रतिपादित अधिगम के प्रमुख नियम कौन–कौन से हैं?

....

....

4) अधिगम में पुरस्कार एवं दण्ड का क्या महत्व है?

....

....

3.5 थार्नडाइक के अधिगम सिद्धान्त एवं नियमों का शैक्षिक महत्व

1. अधिगम से पहले बच्चे को सीखने के लिए तैयार करना आवश्यक है जिस कार्य को बालक को सिखाना है उसमें उसकी पर्याप्त रूचि तथा तत्परता का होना आवश्यक है। अतः बालक को सिखाने के लिए भली–भांति अभिप्रेरित किया जाना आवश्यक है।
2. शिक्षक को इस बात को जानने का प्रयास करना चाहिए कि उसके छात्रों को कौन–कौन सी बातें याद रखनी चाहिए, जिन बातों को याद रखना चाहिए उनसे सम्बन्धित उद्दीपन तथा अनुक्रियाओं के संयोजन को अभ्यास, पुनरावृत्ति,प्रशंसा तथा पुरस्कार आदि के द्वारा अधिक मजबूत बनाने का प्रयास करना चाहिए। दूसरी ओर जिन कार्यो या बातों को विस्मृत कराना है उनसे सम्बन्धित उद्दीपन एवं अनुक्रियाओं के संयोजन को अनुपयोग तथा निन्दा, दण्ड आदि के द्वारा कमजोर करने का प्रयास करना चाहिए।
3. थार्नडाइक का प्रयत्न एवं त्रुटि सिद्धान्त यह सिखाता है कि बालक को अपना कार्य स्वयं करने का अवसर देना चाहिए। समस्या का समाधान उसके सामने रख देने के स्थान पर स्वयं उसे समाधान खोजने के कार्य में लगाना चाहिए उसके द्वारा प्रयास करके एवं त्रुटियों को सुधारते हुए समस्या का सही समाधान ढूंढना चाहिए। प्रयास के समय सूझ–बूझ एवं मानसिक शक्तियों के समुचित उपयोग करने की आवश्यकता पर बल दिया जाना चाहिए।
4. नए कार्य के अधिगम में पूर्व अनुभव एक आधार की भांति कार्य करता है। इसलिए शिक्षक को अपने छात्रों के पूर्व ज्ञान एवं अनुभवों का समुचित प्रयोग करना चाहिए। एक परिस्थिति में सीखे गए ज्ञान का प्रयोग दूसरी परिस्थिति में उपयोग में लाने का प्रयत्न किया जाना चाहिए।

इस प्रकार थर्नाडाइक ने अपने अधिगम सिद्धान्त एवं नियमों के द्वारा अधिगम को उददेश्यपूर्ण एवं लक्ष्य निर्देशित बनाने का प्रयास किया अधिगम में अभयास कार्य तथा पुनरावृत्ति के महत्व को समझाने तथा प्रशांसा प्रोत्सासहन व पुरस्कार की उपयोगिता को परखने में सराहनीय योगदान दिया।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

5) यदि अधिगम प्रक्रिया को बार–बार दोहराया जाये तो उसका क्या परिणाम होगा?

....

....

6) प्रभावी अधिगम के लिए अभ्यास व पुनरावृत्ति के साथ–साथ और क्या आवश्यक है?

....

....

7) बालक के अधिगम में पूर्व ज्ञान का क्या महत्व है?

....

....

3.6 कोहलर का अन्तर्दृष्टि या सूझ द्वारा अधिगम सिद्धान्त

गेस्टाल्टवादी (Gestaltist) मनोवैज्ञानिकों ने अन्तर्दृष्टि द्वारा सीखना नामक सिद्धान्त का प्रतिपादन किया इन मनोवैज्ञानिकों में वर्दीमर (Wertheimer), कोहलर (Kohler), कोफ्फका (Koffka) और लेविन (Lewin)

आदि प्रमुख हैं।

गेल्टाल्ट एक जर्मन शब्द है जिसका अर्थ एक आकृति का पूर्णतया समग्रता के रूप में लिया जा सकता है। अतः गेस्टाल्ट सिद्धान्त के अनुसार व्यक्ति किसी वस्तु को आंशिक रूप से नहीं बल्कि पूर्ण रूप से सीखता है वह किसी वस्तु को एक इकाई के रूप में ही देखता है तथा उसके सम्पूर्ण रूप को ग्रहण करने के बाद ही उसके विभिन्न भागों को देखता है। उदाहरण के लिए विज्ञान प्रयोगशाला में पुष्प के अध्ययन के लिए विद्यार्थी पहले पुष्प की पूर्ण रूप से देखने के बाद ही उसके विभिन्न भागों का अध्ययन करता है।

गेस्टाल्टवादी मनोवैज्ञानिक अधिगम प्रक्रिया को एक उददेश्यपूर्ण अन्वेषणात्मक और रचनात्मक प्रक्रिया मानते हैं। उनके अनुसार अधिगमकर्ता जो कुछ सीख रहा होता है, उसका समग्र रूप में प्रत्यक्षीकरण करता है। उसमें निहित संयोजनों का सही तरीके से विश्लेषण करता है। इस प्रत्यक्षीकरण (Perception) तथा विश्लेषण (Analyesis) के उपरान्त बहुत समझदारी से वह किसी निष्कर्ष पर पहुंचता है। अतः ''अधिगमकर्ता द्वारा सम्पूर्ण परिस्थिति का प्रत्यक्षीकरण (Perception of the total situation) और बुद्धिमतापूर्ण उचित अनुक्रिया व्यक्त करने (Realling Intellingently) की योग्यता ही अन्तःदृष्टि है।''

अन्तःदृष्टि का या सूझ एक मानसिक योग्यता है जो मनुष्यों तथा उच्च श्रेणी के पशुओं में पाई जाती है इसके द्वारा किसी भी समस्या का समाधान अचानक ही दिमाग में आता है। सर्वप्रथम कोलहर ने शब्द प्रयुक्त किया, कोलहर ने चिम्पैन्जी पर अपने प्रयोग किए जिसका वर्णन निम्न है–

1. कोलहर ने सुल्तान नामक चिम्पैंजी को एक पिंजरे में बंद कर दिया तथा पिंजरे की छत पर केले को इस प्रकार लटका दिया कि वह उछल कर भी उसे प्राप्त न कर सके, पिंजरे के कोने में एक लकडी का बक्सा रख दिया गया। सुल्तान ने उछल–कूद करके उस केले को पाने का प्रयत्न किया परन्तु असफल रहा, लेकिन अचानक ही उसे एक विचार सूझा, उसने बक्से को लटकते हुए केले के नीचे रखा उस पर चढकर एक छलांग लगाई और इस तरह उसने केले को अपनी सूझ के द्वारा प्राप्त कर लिया।
2. दूसरे प्रयोग में कोलहर ने समस्या को और जटिल बना दिया अब इसमें केले तक पहुंचने के लिए छलांग लगाने में 2 बक्सों की आवश्यकता पड़ती थी, चिम्पैंजी ने इस समस्या को भी अपनी सूझ के द्वारा हल कर लिया।
3. तीसरे प्रयोग में केले को और अधिक उंचाई पर टांग दिया गया ताकि दो बक्सों पर चढकर उछलने पर भी केले प्राप्त न हो सकें। पिंजरे में एक डंडा भी रख दिया गया, इस प्रयोग में काफी देर तक चिम्पैंजी दोनों बक्सों पर चढकर केले प्राप्त करने के लिए उछल–कूद करता रहा अचानक ही उसे एक तरकीब सूझी और उसने डंडे का प्रयोग कर केले प्राप्त कर लिए।
4. एक जटिल प्रयोग में कोलहर ने भूखे चिम्पैंजी को पिंजरे में बंद कर दिया तथा पिंजरे में दो विशेष प्रकार के छोटे और बडे डंडे रख दिए इन डंडों के सिरे एक दूसरे में फंसाकर लम्बा डंडा प्राप्त किया जा सकता था। पिंजरे के बाहर केला इतनी दूर रखा गया था कि चिम्पैंजी ने अपने हाथ पैरों को इधर–उधर चला कर केले को प्राप्त करने का प्रयास किया। कुछ समय बाद उसने केले प्राप्त करने के लिए एक–एक उण्डे का प्रयोग किया परन्तु उसे सफलता नहीं मिली अपने असफल प्रयत्नों के पश्चात वह चिम्पैंजी डण्डों से खेलने लगा, अचानक ही उन दोनों डण्डों के सिरे आपस में जुड गये चिम्पैंजी ने अपनी सूझ से जान लिया कि अब लम्बे डण्डे से केला प्राप्त किया जा सकता है। उसने इस लम्बे डण्डे का प्रयोग किया और केला प्राप्त करके खा लिया।

इन प्रयोगों के आधार पर कोलहर ने निष्कर्ष निकाला कि विभिन्न समस्याओं को हल करने में चिम्पैंजी ने प्रयास व त्रुटि विधि का प्रयोग नहीं किया, चिम्पैंजी ने अन्तर्गदृष्टि या सूझ (Insight) का प्रयोग करके अपनी समस्याओं को हल करने में सफलता प्राप्त की चिम्पैजी के सूझ या अन्तदृष्टि द्वारा सीखने के प्रमाण में कोलहर ने निम्न तक्र प्रस्तुत किए–

1. चिम्पैंजी ने समग्र रूप में परिस्थितियों का प्रत्यक्षीकरण किया।
2. परिस्थितियों में उपलब्ध सामग्री एवं समस्या के हर पहलू का गम्भीरतापूर्वक विश्लेषण कर उचित

सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास किया।

3. अन्त में समस्याओं और उनसे सम्बन्धित पहलुओं को तुरन्त समझकर उनका समाधान तुरन्त ही उसके मष्तिष्क में कौंधा।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

8) कोहलर के अनुसार अन्तर्दृष्टि या सूझ क्या है?

....

....

9) कुछ प्रमुख गेस्टाल्टवादी मनोवैज्ञानिकों के नाम बताइए।

....

....

10) गेस्टाल्टवादी मनोवैज्ञानिकों के अनुसार अधिगम क्या है?

....

....

3.7 अन्तर्दृष्टि द्वारा अधिगम सिद्धान्त की शैक्षिक उपयोगिता

अन्तर्दृष्टि सिद्धान्त के कुछ महत्वपूर्ण तथ्य निम्न हैं–

1. किसी परिस्थिति का समग्र रूप में प्रत्यक्षीकरण किया जाना आवश्यक है क्योंकि सम्पूर्ण अपने अंश या अवयवों से अधिक महत्वपूर्ण होता है।
2. बिना विचार किए प्रयत्न करते हुए त्रुटियों को सुधार कर सफलता प्राप्त करना ठीक नहीं है। अधिगम के लिए अधिगमकर्ता को परिस्थिति का समग्र रूप से अध्ययन कर अपनी मानसिक शक्तियों का पूर्ण रूप से प्रयोग करना चाहिए समस्या का समधान अन्तर्दृष्टि द्वारा करने के लिए नए प्रतिमान एवं सम्बन्ध खोजने का प्रयास करना चाहिए।
3. सीखने में लक्ष्य की स्पष्टता एवं अभिप्रेरणा एक महत्वपूर्ण भूमिता निभाती है उपरोक्त तथ्यों के आधार पर अन्तर्दष्टि अधिगम सिद्धान्त का प्रयोग निम्न प्रकार से शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में किया जा सकता है–

i. अधिगम सामग्री का प्रस्तुतीकरण समग्ररूप में ही छात्र के समक्ष करना चाहिए गणित की किसी समस्या के समाधान के लिए समस्या को समग्र रूप में छात्र के सामने प्रस्तुत करना चाहिए। विज्ञान प्रयोगशाला में पुष्प के विभिन्न भागों के अध्ययन के लिए पहले उसे सम्पूर्ण रूप में छात्र को दिखाना चाहिए इसके उपरान्त पुष्प के विभिन्न भागों का अध्ययन कराना चाहिए।

ii. किसी कार्य के अधिगम से पूर्व उसके होने वाले लाभों तथा उददेश्यों का स्पष्ट ज्ञान बच्चे को कराया जाना चाहिए। छात्र को अधिगम के लिए पर्याप्त अभिप्रेरणा भी दी जानी चाहिए। अधिगम में छात्र की इच्छा व रूत्रि बने रहने के भी प्रत्यन्त किए जाने चाहिए।

iii. पाठ्यक्रम निर्माण के समय भी गेस्टाल्ट सिद्धान्त का पालन किया जाना चाहिए। किसी भी विषय को बिखरे हुए प्रकरणों तथा तथ्यों का संग्रह मात्र नहीं बनाना चाहिए। समस्त विषय एक इकाई के समान प्रतीत होने चाहिए विभिन्न विषयों एवं क्रियाकलापों से युक्त पाठयक्रम में पर्याप्त संगठन एवं संयोजन के तथ्व प्रदर्शित होने चाहिए।

iv. प्रयास एवं त्रुटि विधि में अधिगम को यांत्रिक किया बताया गया है परन्तु सूझ या अन्तर्दृष्टि सिद्धान्त में अधिगम को एक उददेश्यपूर्ण एवं अन्वेषणात्मक किया माना गया है सूझ सिद्धान्त के अनुसार अधिगम की प्रक्रिया में मानसिक शक्तियों का महत्वपूर्ण स्थान है बिना विचार किए उल्टे–सीधे प्रयत्न करके सीखने में परिश्रम तथा समय का अनावश्यक अपव्यय होता है। मनुष्य को अपनी मानसिक शक्तियों का प्रयोग करना चाहिए मनुष्य को अपनी समस्याओं का समाधान बौद्धिक स्तर पर करना चाहिए।

v. रटे–रटाये ज्ञान को ग्रहण करने तथा दूसरे के रास्ते पर चलने की अपेक्षा अपना मार्ग स्वयं ढूंढकर ज्ञान की खोज करने पर इस सिद्धान्त में बल दिया है।

vi. खोज विधि, विश्लेषण विधि, समस्या–समाधान विधि आदि शिक्षण विधियों का प्रतिपादन अन्तर्दृष्टि सिद्धान्त की ही देन है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

11) अधिगम सामग्री का प्रस्तुतीकरण छात्रों के समक्ष किस रूप में होना चाहिए?

....

....

12) अन्तर्दृष्टि सिद्धान्त के आधार पर किन शिक्षण–विधियों का प्रतिपादन हुआ?

....

....

3.8 गैग्ने का श्रेणीबद्ध अधिगम सिद्धान्त

गैग्ने ने द्वितीय विश्वयुद्ध में वायुसेना प्रशिक्षण में प्राप्त अपने अनुभवों के आधार पर प्रतिपादित किया कि सभी अधिगम समान नहीं होते हैं, उन्होंने अधिगम को मनुष्य की क्षमताओं में होने वाला परिवर्तन बताया जिसे स्थ्रि किया जा सकता है। अधिगम को मात्र वृद्धि की प्रक्रिया नहीं कहा जा सकता है। यह व्यवहार में निरीक्षण योग्य परिवर्तन है। यह निष्पादन/उपलब्धि में परिवर्तन के लिए क्षमताओं का विकास है। गैग्ने के अनुसार, मानवीय क्षमताओं की पांच प्रमुख वर्ग होते है जो अधिगम का परिणाम होते है ये निम्न हैं–

1. शाब्दिक सूचनाएं
2. बौद्धिक कौशल
3. संज्ञानात्मक व्यूह–रचनाएं
4. अभिवृत्तियां
5. चालक कौशल (Motor skills)

गैग्ने ने अपनी पुस्तक ''दी कंडिशन्स आफ लर्निग (The Conditions of Learning) में अधिगम के मुख्यतः आठ प्रकारों का वर्णन किया है। गैग्ने ने इन्हें श्रृंखलाबद्ध क्रम में प्रस्तुत किया है। इस श्रृंखला में सबसे उपर समस्या–समाधान सीखना है तथा सबसे नीचे सांकेतिक सीखना है। श्रृंखला या पिरामिड के किसी भी स्तर की अधिगम प्रक्रिया के लिए आवश्यक है कि उसके नीचे के सभी प्रकार के अधिगम पूर्ण हो चुके हों, जैसे–विभेदीकरण सीखने के लिए उसके नीचे के सभी स्तरों के अधिगम की प्रक्रिया पूर्ण हो जानी चाहिए गैग्ने द्वारा बताए गए आठों प्रकार के अधिगम की श्रृंखला निम्न है।

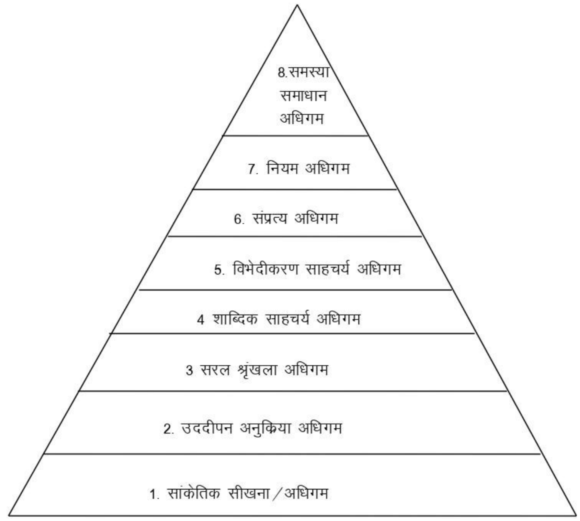

चित्र : गैग्ने द्वारा प्रतिपादित अधिगम श्रृंखला

1. सांकेतिक सीखना : सांकेतिक अधिगम शास्त्रीय अनुबन्धन अधिगम के समान होता है। इसमें किसी किसी बाहय उद्दीपन के साथ किसी स्वाभाविक उद्दीपन को एक साथ कई बार दिया जाता है। पॉवलाव के प्रयोग में बाध्य उद्दीपन अर्थात घंटी का आवाज तथा स्वाभाविक उद्दीपन अर्थात भोजन के साथ–साथ दिया गया, बाद में केवल घंटी को आवाज पर ही भोजन की अनुपस्थित में भी कुत्ते की लार का स्राव होने लगा। इस तरह के अधिगम सांकेतिक अधिगम के अन्तर्गत आते हैं।

2. उद्दीपन–अनुक्रिया अधिगम : इसमें प्राणी किसी उद्दीपन के प्रति एक ऐच्छिक क्रिया करता है जिसका परिणाम उस पर सुखद होता है और वह धीरे–धीरे उस उद्दीपन के प्रति वही अनुक्रिया करना सीख लेता है। स्कीनर का क्रिया–प्रसूत अनुबन्धन या साधनात्मक अधिगम इसका उदाहरण है, स्किनर के प्रयोग में चूहा लिवर दबाकर भोजन प्राप्त करने की प्रक्रया सीख लेता है।

3. सरल श्रृंखला अधिगम : इस प्रकार के अधिगम में एक क्रम में होने वाले अलग–अलग कई उद्दीपन–अनुक्रिया संबंधों के सेट होते है। इस प्रकार का अधिगम पेशीय अधिगम के अन्तर्गत आता है। जैसे–साइकिल चलाना, गिटार बजाना आदि जिसमें कई छोटी–छोटी अनुक्रियाएं एक क्रम में होती रहती है। जब ये सारी अनुक्रियाएं एक साथ श्रृंखला में सम्मिलित हो जाती है तो व्यक्ति साइकिल चलाना सीख जाता है या गिटार बजाना सीख जाता है।

4. शाब्दिक–साहचर्य अधिगम : इस प्रकार के अधिगम में व्यक्ति को उद्दीपन–अनुक्रिया का ऐसा क्रम सीखना होता है जिसमें शब्दिक अभिव्यक्ति निहित होता है। जैसे– शब्दावली सीखना, सूत्र याद करना, कविता याद करना आदि।

5. विभेदीकरण अधिगम : इसमें अधिगमकर्ता विभिन्न उद्दीपनों के प्रति विभिन्न अनुक्रिया करना सीखते हैं जैसे बच्चों में चतुर्भुज व 'ाटकोण में अंतर करना सीखना, अंकगणित तथा बीजगणित में अंतर करना सीखना आदि विभेदीकरण अधिगम के कुछ उदाहरण हैं।

6. संप्रत्यय सीखना : कई वस्तुओं के कुछ सामान्य गुणों या विशेषताओं के आधार पर कोई विशेष अर्थ को सीखना सम्प्रत्यय अधिगम कहलाता है। जैसे–मनुष्य, जीव–जन्तु आदि के सामान्य गुणों के कारण उन्हें सजीव होने का सम्प्रत्यय बताता है। यहां संजीव के सम्प्रत्यय को सीखना संप्रत्यय अधिगम का एक उदाहरण है।

7. नियम सीखना : इस प्रकार का अधिगम सम्प्रदाय अधिगम पर आधारित होता है। नियम (rule) से दो या दो से अधिक सम्प्रत्ययों के बीच एक नियमित सम्बन्ध का पता चलता है। इस प्रकार के अधिगम से अधिगमकर्ता के ज्ञान भण्डार में वृद्धि होती है। जैसे बच्चों द्वारा गणित, व्याकरण आदि के विभिन्न

नियमों को सीखना आदि नियम अधिगम के अन्तर्गत आते हैं।

8. समस्या समाधान अधिगम : यह अधिगम की सर्वोच्च अवस्था होती है। इस प्रकार के अधिगम में व्यक्ति किसी नियम का उपयोग करके किसी समस्या का समाधान करते है तथा नए तथ्य को सीखते हैं।

गैग्ने ने अधिगम के आठों प्रकारों के बारे में यह भी स्पष्ट किया कि इसमें चौथी अवस्था का अधिगम अर्थात शाब्दिक साहचर्य अधिगम तथा इसके ऊपर के सभी स्तरों का अधिगम ही शिक्षकों के लिए महत्वपूर्ण होता है। श्रृंखला में शिक्षकों द्वारा दिए जाने वाले निर्देशों में मुख्यतः चौथी अवस्था से आठवीं अवस्था का अधिगम निहित है। पहली से तीसरी अवस्था का अधिगम शिक्षकों के लिए मात्र इसलिए आवश्यक है कि वे चौथी अवस्था तथा उसके ऊपर की अवस्थाओं के अधिगम के लिए छात्रों को आवश्यक पृष्ठभूमि तैयार करने में सहायक होते हैं।

अधिगम अवस्थाएँ : गैग्ने ने अधिगम का आठ प्रमुख अवस्थाएं बताई हैं जो निम्न हैं–

1. प्रेरणा (Motivation) 2. अग्रसरण (Apprehending) 3. संग्रहण (Acquisition) 4. धारण (Retention) 5. प्रत्यास्मरण (Recall) 6. समान्यीकरण (Generalization) 7. निष्पादन (Performance) 8. प्रतिपुष्टि (Feed back) उपरोक्त आठों अवस्थाएँ अधिगम प्रक्रिया के दौरान घटित होने के क्रम में दी गयी है। अधिगम की प्रेरणा अवस्था तब होती है जब प्राणी किसी उददेश्य की पूर्ति चाहता है या उसे प्राप्त होने पर पुरस्कृत होना चाहता है। द्वितीय अवस्था में व्यक्ति किसी उद्दीपन द्वारा आकर्षित होता है। संग्रहण की अवस्था में वास्तविक अधिगम प्राप्ति होती है। इस दौरान प्राणी के केन्द्रीय तंत्रिका तन्त्र में ज्ञान कूट का संग्रहित होता है। कोड के उपरान्त प्राप्त ज्ञान केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र में धारण रहता है। प्रत्यास्मरण द्वारा इसे पुनः प्राप्त किया जा सकता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

13) गैग्ने के श्रृंखला अधिगम में कौन–कौन से अधिगम सम्मिलित है?

....

....

14) स्किनर का क्रिया–प्रसूत अधिगम गैग्ने के किस प्रकार के अधिगम का उदाहरण है?

....

....

15) त्रिकोण तथा आयत में अन्तर करना किस श्रेणी के अधिगम का उदाहरण है?

....

....

16) व्यक्ति द्वारा कार चलाना सीखना किस प्रकार के अधिगम का उदाहरण है?

....

....

3.9 सारांश

थार्नडाइक ने बिल्ली पर किए गए अपने प्रयोग के आधार पर अधिगम का प्रयास व त्रुटि सिद्धान्त दिया, उन्होंने सीखने के विभिन्न नियम भी दिए जो निम्न है। 1. तत्परता का नियम 2. प्रभाव का नियम 3. अभ्यास का

नियम, थार्नडाइक ने सीखने की प्रक्रिया में चालक या अभिप्रेरक की भूमिका को महत्वपूर्ण माना। थार्नडाइक के अधिगम सिद्धान्त व नियमों का अत्यधिक शैक्षिक महत्व है प्रयास व त्रुटि सिद्धान्त यह सिखाता है कि बालक को सीखने के लिए स्वयं कार्य करने के अवसर देना चाहिए कोहलर ने अन्तर्दृष्टि या सूझ का सिद्धान्त दिया। कोहलर एक गेस्टाल्टवादी मनोवैज्ञानिक थे। वर्दीमर, कोहलर, कोफ्का, लेविन आदि प्रमुख गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिक है। उनके अनुसार अधिगम एक उद्देश्यपूर्ण एवं अन्वेषणात्मक प्रक्रिया है। अधिगमकर्ता जो कुछ सीख रहा है उसका वह समग्र रूप में प्रत्यक्षीकरण करता है। कोहलर ने चिम्पैंजी पर अपने प्रयोग किए गैग्ने ने श्रेणीबद्ध अधिगम सिद्धान्त दिया। गैग्ने के अनुसार अधिगम प्रक्रिया के पांच प्रमुख वर्ग होते हैं–

1. शाब्दिक सूचनाएं 2. बौद्धिक कौशल 3. संज्ञानात्मक व्यूह रचनाएं 4. अभिवृत्तियां 5. चालक कौशल

गैग्ने ने अधिगम प्रक्रिया के होने के क्रमनुसार आठ प्रकार बताए हैं–

1. सांकेतिक सीखना, 2. उद्दीपन अनुक्रिया अधिगम 3. सरल श्रृंखला अधिगम 4. शाब्दिलक साहचर्य अधिगम 5. विभेदीकरण अधिगम 6. सम्प्रत्यय अधिगम 7. नियम अधिगम 8. समस्या समाधान अधिगम

3.10 अभ्यास के प्रश्न

1) थार्नडाइक के सीखने की प्रयास व त्रुटि सिद्धान्त का वर्णन कीजिए।
2) थार्नडाइक के सीखने के विभिन्न नियम बताइए।
3) थार्नडाइक के अधिगम सिद्धान्त व नियमों का शैक्षिक महत्व समझाइए।
4) कोहलर का प्रतिपादित अन्तर्दृष्टि या सूझ द्वारा अधिगम सिद्धान्त का वर्णन कीजिए।
5) गैग्ने द्वारा प्रतिपादित श्रेणीबद्ध अधिगम सिद्धान्त की व्याख्या कीजिए।

3.11 चर्चा के बिन्दु

1. थार्नडाइक कोहलर तथा गैग्ने द्वारा प्रतिपादित अधिगम सिद्धान्तों के शैक्षिक महत्व पर चर्चा कीजिए।
2. अन्तर्दृष्टि द्वारा अधिगम सिद्धान्त की शैक्षिक उपयोगिता पर चर्चा कीजिए।

3.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

1) थार्नडाइक के प्रयोग में भूख ने चालक या अभिप्रेरक का कार्य किया।
2) थार्नडाइक ने अधिगम की प्रयास व त्रुटि सिद्धान्त का प्रतिपादन किया।
3) थार्नडाइक द्वारा प्रतिपादित अधिगम के प्रमुख नियम हैं– 1. तत्परता का नियम, 2. प्रभाव का नियम, 3. अभ्यास का नियम
4) पुरस्कार से उद्दीपन व अनुक्रिया के मध्य संयोजन मजबूत होता है जिससे अधिगम तीव्र होता है तथा दण्ड से यह कमजोर होता है जिससे अधिगम निम्न होता है।
5) यदि अधिगम प्रक्रिया को बार–बार दोहराया जाय तो उसका सुदृढीकरण होता है।
6) प्रभावी अधिगम के लिए प्रयास व अभ्यास के साथ–साथ पुरस्कार भी दिया जाना चाहिए।
7) बालक के अधिगम में पूर्व ज्ञान एक आधार की भांति कार्य करता है।
8) अधिगमकर्ता द्वारा सम्पूर्ण परिस्थिति का प्रत्यक्षीकरण और बुद्धिमतापूर्ण उचित अनुक्रिया व्यक्त करने की योग्यता ही अन्तर्दृष्टि है।
9) कुछ प्रमुख गेस्टाल्टवादी मनोवैज्ञानिक कोहलर, कोफ्क्का, लेविन, वर्दीमर आदि हैं।
10) गेस्टाल्टवादी मनोवैज्ञानिकों के अनुसार अधिगम एक उददेश्यपूर्ण, अन्वेषणात्मक एवं रचनात्मक प्रक्रिया है।

11) अधिगम सामग्री का प्रस्तुतीकरण छात्रों के समक्ष समग्र या पूर्ण रूप से होना चाहिए।

12) अन्तर्दृष्टि सिद्धान्त के आधार पर खोज विधि, विश्लेषण विधि, समस्या–समाधान विधि आदि शिक्षण विधियों का विकास हुआ।

13) गैग्ने के श्रृंखला अधिगम में आठ प्रमुख अधिगम है–

1. सांकेतिक सीखना 2. उद्दीपन द्वारा सीखना, 3. सरल श्रृंखला अधिगम, 4. शाब्दिक साहचर्य अधिगम, 5. विभेदीकरण अधिगम, 6.सम्प्रत्यय अधिगम, 7. नियम अधिगम, 8. समस्या–समाधान अधिगम

14) स्किनर का क्रिया प्रसूत अधिगम गैग्ने के उद्दीपन–अनुक्रिया अधिगम या उद्दीपन द्वारा सीखना का उदाहरण है।

15) त्रिकोण तथाआयत में अन्तर करना विभेदीकरण अधिगम है।

16) व्यक्ति द्वारा कार चालाना सीखना सरल श्रृंखला अधिगम है।

3.13 कुछ उपयोगी पुस्तकं

1. मंगल एस0के0 (2013), ''अधिगम या सीखने के सिद्धान्त'', शिक्षा मनोविज्ञान, नई दिल्ली : पी.एच.आई. लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड।
2. गुप्ता, एस. पी. व गुप्ता, अलका (2016), ''उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान'', प्रयागराज : शारदा पुस्तक भवन।
3. चौहान, आर. (2015), शिक्षा मनोविज्ञान, आगरा : अग्रवाल पब्लिकेशन
4. सिंह ए. के. (2013), शिक्षा मनोविज्ञान, पटना : भारती भवन
5. सिंह डी. आर. (2009), शिक्षा के मनोवैज्ञानिक आधार, इलाहाबाद : न्यू कैलाश प्रकाशन
6. लाल, आर. बी. एवं मानव, आर. एन. (2011), शिक्षा मनोविज्ञान, मेरठ : रस्तोगी पब्लिकेशन्स

खण्ड 02 : अधिगम को प्रभावित करने वाले कारक

खण्ड परिचय

शिक्षण प्रक्रिया का मुख्य उद्देश्य ही अधिगम हैं प्रस्तुत खण्ड में हम अधिगम पर विस्तृत चर्चा करेंगे। इस खण्ड के अन्तर्गत हम सीखने को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों पर विस्तृत चर्चा करेंगे। इस खण्ड में हम अधिगम के स्नानान्तरण की भी विवेचना करेगें एवं अधिगम के विभिन्न उपागमों के बारे में भी चर्चा करेंगे।

इकाई– 4 में अधिगम को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों के बारे में बताया गया है। इस इकाई में अधिगम को प्रभावित करने वाले बालक सम्बन्धी कारक, शिक्षक सम्बन्धी कारक, विषय संबंधी कारक, वातावरण सम्बंधी कारक एवं शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया से संबंधित कारकों के बारे में बताया गया है।

इकाई– 5 में अधिगम के स्थानान्तरण के बारे में बताया गया है। इस इकाई में अधिगम के स्थानान्तरण का अर्थ, उसके प्रकार, अधिगम के स्थानान्तरण के विभिन्न सिद्धान्त एवं स्थानान्तरण के लिए उपयुक्त दशाओं के बारे में बताया गया हैं।

इकाई– 6 में अधिगम के विभिन्न उपागम के बारे में चर्चा की गयी है। इस इकाई में सीखने के व्यवहारवादी उपागम, मानवतावादी उपागम, संज्ञानात्मक उपागम, निर्माणवादी उपागम, सहयोगात्मक उपागम आदि के बारे में बताया गया है।

इकाई–4 : अधिगम को प्रभावित करने वाले कारक

इकाई की संरचना

4.1 प्रस्तावना

4.2 इकाई के उद्देश्य

4.3 कक्षा में अधिगम को प्रभावित करने वाले कारक

4.3.1. बालक से संबंधित कारक

4.3.2. शिक्षक से संबंधित कारक

4.3.3 विषय से संबंधित कारक

4.3.4 वातावरण से संबंधित कारक

4.3.5 शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया से संबंधित कारक

4.4 सारांश

4.5 अभ्यास के प्रश्न

4.6 चर्चा के बिन्दु

4.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

4.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

4.1 प्रस्तावना

अधिगम जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है। अधिगम द्वारा व्यवहार में परिवर्तन होता है। अनुभव तथा अभ्यास अधिगम में महत्वपूर्ण कारक हैं। सीखने की प्रक्रिया मानसिक होती है। अभिप्रेरणा, लक्ष्य, बाधा, विभिन्न प्रयास, पुनर्बलन, लक्ष्यपूर्ति आदि अधिगम प्रक्रिया के विभिन्न सोपान हैं। सीखना जटिल प्रक्रिया है क्योंकि सीखना प्रत्येक व्यक्ति में समान रूप एवं समान गति से सम्पन्न नहीं होता। इस इकाई के अन्तर्गत सीखने को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन किया गया है।

4.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि–

1. सीखने को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों का वर्गीकरण कर सकेंगे।
2. सीखने का प्रभावित करने वाले बालक संबंधी कारकों को जान सकेंगे।
3. सीखने को प्रभावित करने वाले शिक्षण संबंधी कारकों को समझ सकेंगे।
4. सीखने को प्रभावित करने वाले विषय संबंधित कारकों का वर्णन कर सकेंगे।
5. सीखने को प्रभावित करने वाले वातावरणीय कारकों को जान सकेंगे।
6. सीखने को प्रभावित करने वाले शिक्षण अधिगम प्रक्रिया सम्बंधी कारकों का वर्णन कर सकेंगे।

4.3 कक्षा में अधिगम को प्रभावित करने वाले कारक

जैसा कि आप जानते हैं कि सीखना या अधिगम व्यवहार में परिवर्तन है एवं शिक्षण का मुख्य लक्ष्य ही अधिगम की प्राप्ति है। शिक्षण प्रक्रिया तब ही सफल मानी जाती है–जब अधिगम प्राप्त हुआ हो अधिगम अथवा सीखने पर विस्तृत रूप में आप पहले के खण्ड में जान चुके है। सीखने को प्रभावित करने वाले कारकों से तात्पर्य उन तत्वों या कारकों से है जो सीखने की प्रक्रिया पर वांछित या अवांछित प्रभाव डालते हो। वांछित

प्रभाव के अन्तर्गत कारक सीखने को सरल एवं सुगम बनाते हैं तथा अवांछित प्रभाव के अन्तर्गत कारक सीखने में बाधा उत्पन्न करते हैं।

सीखने को असंख्य कारक प्रभावित करते हैं जिनमें कुछ कारक आंतरिक होते हैं एवं कुछ बाह्य होते हैं। कुछ कारक अधिक महत्वपूर्ण होते हैं और कुछ गौण होते हैं। कुछ कारक सकारात्मक प्रभाव डालते है एवं कुछ नकारात्मक प्रभाव डालते हैं। मुख्यतः सीखना कक्षा में होता है इसलिए हम यहाँ कक्षा में सीखने को प्रभावित करने वाले कारकों का अध्ययन करेंगे। कक्षा में सीखने को प्रभावित करने वाले कारकों को मुख्यतः निम्न भागों में बाँटा जा सकता है—बालक से संबंधित कारक, शिक्षक से संबंधित कारक, सीखे जाने वाले विषय से संबंधित कारक वातावरणीय कारक एवं शिक्षण—अधिगम प्रक्रिया से संबंधित कारक।

सीखने को प्रभावित करने वाले कारक

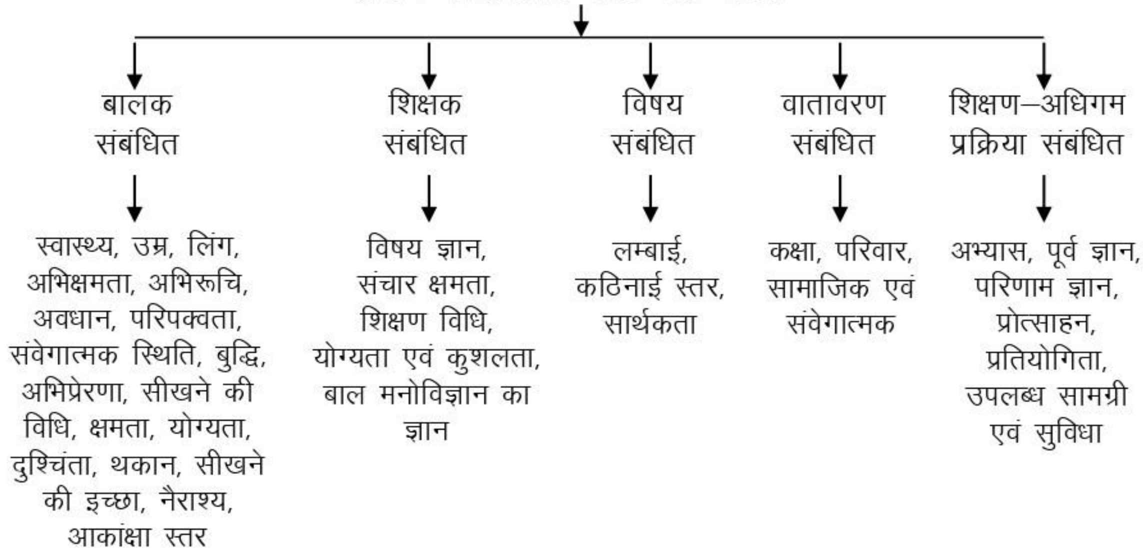

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. अधिगम का क्या अर्थ है?

....

....

2. अधिगम को प्रभावित करने वाले कारकों से क्या तात्पर्य है?

....

....

3 सीखने को प्रभावित करने वाले कारकों को किन वर्गों में बाँटा जा सकता है ?

....

....

4.3.1 बालक से संबंधित कारक

कक्षा में सीखने को अनेकों कारक प्रभावित करते हैं जिसमें बालक से संबंधित कारक महत्वपूर्ण है क्योंकि वैयक्तिक भिन्नता के कारण अलग–अलग बालकों का सीखना अलग–अलग तरह से होता है कुछ बालक शीघ्रता से सीख लेते हैं और कुछ बालक उसी कार्य को सीखने में अधिक समय लगाते हैं। अर्थात् बालक की खुद की विशेषता उसके सीखने को प्रभावित करती हैं। मनोवैज्ञानिकों ने बालकों से संबंधित सीखने के कारकों को महत्व दिया है क्योंकि आज के संदर्भ में सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था बालक–केन्द्रित हो गयी है। बालक से संबंधित सीखने को प्रभावित करने वाले कारक निम्नांकित है–

i. **स्वास्थ्य**– कक्षा में सीखने की प्रक्रिया बालक के स्वास्थ्य से प्रभावित होती है। अरस्तु के अनुसार स्वस्थ्य शरीर में ही स्वस्थ्य मस्तिष्क का निवास होता है अर्थात अगर बालक शारीरिक रूप से स्वस्थ्य है तो वह मानसिक रूप से भी स्वस्थ्य होगा और मानसिक रूप से स्वस्थ्य बालक की सीखने की क्षमता भी अधिक होती है। स्वार्ज (1977) के अनुसार, सामान्य स्वास्थ्य के बालकों में सीखने की प्रक्रिया रोगग्रस्त बालकों की तुलना में तेजी से होती हैं। अधिकांशतः यह पाया गया है कि शारीरिक रूप से अवस्वस्थ्य बालकों की तुलना में शारीरिक रूप से स्वस्थ्य बालक अपना ध्यान अधिक केन्द्रित कर पाते हैं और जल्दी सीखते हैं।

ii. **उम्र**– बालक की उम्र भी सीखने को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती है। सीखने की गति बालक की उम्र के अनुसार होती है। अलग–अलग उम्र/अवस्था में बालक के सीखने की गति भी भिन्न–भिन्न होती है। गिलफोर्ड (1952) के अनुसार, बालक अक्सर शैशवावस्था में मन्द गति से सीखते है, बाल्यावस्था में वे वैसे ही विषय को कुछ तेजी से सीखते है तथा किशोरावस्था में बालक वैसे ही विषय वस्तु को और भी तेजी से सीखते हैं।

iii. **लिंग**– बालक का लिंग भी सीखने को प्रभावित करता है। सामान्यतः देखा गया है कि लड़किया, लड़को की अपेक्षा अधिक शीघ्रता से सीखती हैं। परीक्षाओं के परिणाम जैसे–हाईस्कूल एवं इण्टरमीडिएट के भी यही इंगित करते हैं कि लड़कियों का परिणाम लड़कों की अपेक्षा अच्छा होता है। अर्थात लड़कियाँ, लड़कों की अपेक्षा अधिक अच्छा सीखतीं है। गिलफोर्ड (1952) के अनुसार, लड़कियाँ अपने समान उम्र के लड़कों की अपेक्षा किसी भी पाठ को जल्दी सीख लेती हैं। इनका प्रधान कारण यह है कि लड़कियाँ औसत रूप से लड़कों की अपेक्षा किसी पाठ को अधिक तत्परता से सीखने के लिए पहले ही परिपक्व हो जाती है। यह भी देखा गया है कि लड़कियाँ लड़को की अपेक्षा सीखने के लिए अधिक गम्भीर एवं संवेदनशील होती हैं।

iv. **बुद्धि**– बालक की बुद्धि एवं उसके सीखने में प्रत्यक्ष संबंध होता हैं। बालक की बुद्धि का प्रभाव उसके सीखने की प्रक्रिया पर पड़ता हैं। विचार, कल्पना, तर्क, चिन्तन, निर्णय आदि शक्तियाँ बुद्धि से सम्बन्धित होती हैं। सीखने में इन सब का महत्वपूर्ण स्थान हैं। शोध द्वारा यह परिलक्षित हुआ है कि सीखने और बुद्धि में धनात्मक सहसंबंध है। कम बुद्धि वाले बालक आसान विषयों को भी अधिक समय में सीखते हैं जबकि तेज बुद्धि वाले बालक कठिन विषयों को भी आसानी से और कम समय में सीख लेते हैं। बालक की बुद्धि उसके सीखने के धारण को भी प्रभावित करती है, कम बुद्धि वाले बालक सीखी गयी विषयवस्तु को जल्द भूल जाते हैं, जबकि तेज बुद्धि वाले बालक सीखी गयी विषयवस्तु को जल्दी नहीं भूलते।

v. **परिपक्वता**– अधिगम का परिपक्वता से घनिष्ठ सम्बन्ध हैं। सीखना परिपक्वता पर निर्भर करता है। प्रत्येक चीज़ को सीखने के लिए एक निश्चित परिपक्वता स्तर का होना आवश्यक हैं। जैसे लिखना सीखने के लिए हाथ की अंगुलियों का परिपक्व होना आवश्यक है, चलना सीखने के लिए पैरों का परिपक्व होना आवश्यक है। एक छह माह के बच्चे को शारीरिक अपरिपक्वता के कारण चलना नहीं सिखाया जा सकता। इसी तरह से एक पाँच वर्ष के बालक को मानसिक अपरिपक्वता के कारण उच्च गणितीय विधियाँ नहीं सिखायी जा सकती। कोलेसनिक के अनुसार, परिपक्वता और सीखना पृथक् प्रक्रियाएँ नहीं है, वरन् एक दूसरे से अविच्छिन्न रूप से सम्बद्ध और एक दूसरे पर निर्भर हैं।

जो विषय बालक सीखना चाहता है अगर उसको सीखने के अनुकूल उसके पास परिपक्वता स्तर हैं तो सीखना तेज गति से होता है परन्तु अगर परिपक्वता का अभाव हो तो सीखना धीमी गति से होता है।

vi. **अवधान**– अवधान से तात्पर्य कार्य के प्रति ध्यान केन्द्रित करने अथवा एकाग्रचितता से होता हैं। सीखने की प्रक्रिया पर बालक के अवधान का भी प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता हैं। अगर बालक सीखने की विषय वस्तु पर ध्यान

देता है तो वह उसे तेज़ी से सीख लेता है। इसके विपरीत अगर बालक पढ़ाये या सीखाये जाने वाली विषय वस्तु पर अपना ध्यान केन्द्रित नहीं करता तो सीखने पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है और सीखना धीमी गति से होता हैं अर्थात अवधान और सीखने में धनात्मक सहसंबंध होता है, बालक सीखने पर जितना अधिक ध्यान देगा, वह उसे उतनी ही सुगमता से सीख लेगा। सीगल (1968) ने भी अपने अध्ययन से इस तथ्य की पुष्टि की है।

vii. **अभिरूचि**– सीखने को प्रभावित करने वाले कारकों में अभिरूचि भी प्रासंगिक हैं। अभिरूचि से किसी के कार्य करने की चाह एवं दिशा का पता चलता हैं। अभिरूचि अवधान की उत्प्रेरक है। बालक किसी विषय को सीखने में अवधान तभी देता है जब उसे उस विषय के प्रति अभिरूचि हो। अगर किसी विषय के प्रति अभिरूचि न हो तो उसके प्रति अवधान भी नहीं होता अर्थात् जिस विषय के प्रति बालक की अभिरूचि हो वह उसे तेजी से सीख लेता है और जिस विषय में उसकी अभिरूचि नहीं होती वह उसे नहीं सीख पाता या उसे धीमी गति से सीखता है।

viii. **अभिक्षमता**– अभिक्षमता का अर्थ है अन्तः शक्ति। सीखना अभिक्षमता पर भी निर्भर करता है। बालक को जिस विषय के प्रति अभिक्षमता होती है, वह उसे तीव्र गति से सीखता है और पारंगत हो जाता है क्योंकि इस विषय को सीखने से सम्बन्धित अन्तः शक्ति उसके पास निहित होती है जिसके कारण उसे वह विषय सीखने में कोई बाधा उत्पन्न नहीं होती। उदाहरण : बी0एड0 करने वाला हर विद्यार्थी अच्छा शिक्षक नहीं बन पाता। अच्छा शिक्षक वह ही बन पाता है जिसमें शिक्षण अभिक्षमता होती हैं। अवधान, अभिरूचि एवं अभिक्षमता तीनों एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। अभिक्षमता से रूचि एवं रूचि से अवधान जागृत होता है।

ix. **अभिप्रेरणा**– अभिप्रेरणा व्यक्ति की एक आंतरिक अवस्था है जो व्यक्ति को किसी लक्ष्य की ओर निर्देशित करती है। अभिप्रेरणा व्यक्ति के व्यवहार को भी निर्देशित करती है। सीखने की प्रक्रिया में अभिप्रेरणा का स्थान बहुत महत्वपूर्ण है। अभिप्रेरणा आवश्यकता, उद्देश्य, लक्ष्य प्राप्ति तथा प्रोत्साहन से संबंधित होता है। मेल्टन (1956) के अनुसार, ''अभिप्रेरणा सीखने की एक आवश्यक शर्त है।'' गेट्स (1948) के अनुसार, ''अभिप्रेरणा सीखने के लिए अनिवार्य है।'' एण्डरसन (1944) का मत है कि सीखने की प्रक्रिया अच्छी तरह तभी होती है जब अभिप्रेरणा हों।'' सीगल (1968) ने अपने अध्ययन से यह स्पष्ट किया है कि अगर बालक किसी विषय को सीखने के प्रति आत्म अभिप्रेरित है, अथवा शिक्षकों द्वारा अभिप्रेरित किया गया है तो वह कठिन से कठिन विषय को भी तीव्रता से सीख लेता है।

x. **संवेगात्मक स्थिति**– व्यक्ति की संवेगात्मक स्थिति भी सीखने को प्रभावित करती है। संवेगात्मक कारकों में क्रोध, भय, घृणा, संकल्प शक्ति, ईर्ष्या, आत्महीनता आदि प्रमुख हैं। अगर व्यक्ति सीखते समय संवेगात्मक तनाव या चिन्ता से ग्रसित होता है तो उसका सीखना प्रतिकूल रूप से प्रभावित होता है और उसे सीखने में अधिक समय लगता है इसके विपरीत अगर व्यक्ति सीखते वक्त संवेगात्मक तनाव या चिन्ता से मुक्त होता है तब वह उस विषयवस्तु को जल्द ही सीख लेता है। संवेगात्मक स्थिति खराब होने से सीखना शून्य हो जाता है।

xi. **सीखने की विधि**– सीखना इस बात पर भी निर्भर करता है कि सीखने वाले ने सीखने के लिए किस विधि का प्रयोग किया है। सीखने की विधि जितनी अधिक प्रभावशाली होगी सीखने पर उसका उतना अधिक सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा। अगर सीखने में विवेचना, पुनरावृत्ति आदि विधियों का प्रयोग किया गया हो तो सीखने में कम समय लगता है इसके विपरीत अगर सीखने में रटने का प्रयोग किया गया हो तो व्यक्ति सीख तो लेता है परन्तु समय बीतने के साथ उसे जल्द भूल जाता है तुलना में अगर वह विषय को समझकर सीखता है।

xii. **दुश्चिंता**– दुश्चिंता एक मानसिक दशा है जो सीखने को प्रभावित करती है। अगर अधिगम कर्ता दुश्चिंता से ग्रसित हो तो अधिगम नकारात्मक रूप से प्रभावित होता है। कुछ स्तर तक दुश्चिंता का सीखने पर धनात्मक प्रभाव पड़ता है क्योंकि दुश्चिंता के कारण छात्र कठोर परिश्रम करता है; उसके सीखने की क्षमता बढ़ती है एवं ग्रहण योग्यता में भी वृद्धि होती है। परन्तु अगर दुश्चिंता सामान्य से अधिक हो जाये तो उसका प्रतिकूल प्रभाव अधिगम पर देखने को मिलता है।

xiii. क्षमता एवं योग्यता– उसीखना सीखने वाले की मूलभूत क्षमता एवं योग्यता पर भी निर्भर करता है अगर सीखने वाले की क्षमता एवं योग्यता सीखे जाने वाले विषयवस्तु के अनुरूप है तो सीखना तीव्र गति से होता है वरन् ऐसी परिस्थिति से जब सीखने वाले की क्षमता एवं योग्यता सीखे जाने वाले विषयवस्तु से निम्न स्तर की हो।

xiv. सीखने की इच्छा– यदि छात्र में सीखने की इच्छा है तो वह किसी भी विषयवस्तु को सरलता से सीख सकता है परन्तु यदि छात्र में सीखने की इच्छा नहीं है तो वह सीखने की अधिक समय लगाता है और सीखने में सफल भी नहीं हो पाता। सीखने के लिए इच्छा एवं तत्परता आवश्यक कारक हैं।

xv. थकान– थकान एक ऐसा कारक है जो सीखने की प्रक्रिया में बाधा उत्पन्न करता है थकान की स्थिति में व्यक्ति ध्यान केन्द्रित नहीं कर पाता तथा उसमें शिथिलता आ जाती है। जिससे सीखने में बाधा उत्पन्न होती है, और सीखने की गति मंद हो जाती है।

xvi. नैराश्य– मनुष्य में मानसिक हलचल जो बार–बार असफलता के कारण पैदा होती है उसे नैराश्य, कुण्ठा अथवा भग्नाशा कहते हैं। नैराश्य बालकों को उदासीन बनाती है, उनके साहस को कम करती है जिसके फलस्वरुप सीखने की प्रक्रिया बाधित होती है।

xvii. आकांक्षा स्तर– प्रत्येक बालक का जीवन में एक निश्चित आकांक्षा स्तर होता है। आकांक्षा स्तर बालक की योग्यता के अनुरूप होना चाहिए यदि आकांक्षा स्तर उच्च है तो बालक सीखने के लिए अधिक प्रेरित होता है, अधिक क्रियाशील रहता है जो सीखने में साधक का कार्य करते हैं परन्तु यदि आकांक्षा निम्न स्तर की हो तो अभिप्रेरणा एवं क्रियाशीलता भी कम होगी जो सीखने में बाधक का कार्य करेगी। आकांक्षा स्तर सीखने में तभी साधक होता है जब वह बालक की योग्यता एवं क्षमता के अनुरूप हों।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

4. बुद्धि का सीखने से किस प्रकार का संबंध है?

....

....

5. अभिक्षमता से क्या तात्पर्य है व अभिक्षमता सीखने को कैसे प्रभावित करती है?

....

....

6. सीखने में बालक को किस प्रकार की विधि का प्रयोग करना चाहिए?

....

....

4.3.2 शिक्षक से संबंधित कारक

सीखना, सिखाने वाले पर भी निर्भर करता है। प्रायः देखा गया है कि एक ही बालक कुछ विषय तीव्र गति से सीख लेता है और कुछ विषय को सीखने में अधिक समय लगाता है। अर्थात बालक की विशेषता तो एक ही है फिर भी अलग–अलग विषय सीखने में विसंगति देखी गयी है। इसका मुख्य कारण शिक्षक है क्योंकि सीखना,

सिखाने वाले अर्थात शिक्षक की विशेषताओं पर भी निर्भर करता है। शिक्षक की बुद्धिमत्ता, अध्यापन शैली, योग्यता, अनुभव आदि अधिगम को प्रभावित करता है।

सीखने को प्रभावित करने वाले शिक्षक संबंधित कारक निम्नवत है–

i. **विषय ज्ञान**– शिक्षक में विषय ज्ञान जितना अधिक होता है वह उतने ही सरल एवं प्रभावशाली ढंग से विषय को शिक्षार्थी के सामने प्रस्तुत कर पाता है और इसके कारण शिक्षार्थी का सीखना सकारात्मक रूप से प्रभावित होता है। इसके विपरीत अगर शिक्षक में विषय ज्ञान पर्याप्त नहीं है तो वह उसे सीखाने में सफल नहीं हो पाता।

ii. **संचार क्षमता**– शिक्षक की संचार क्षमता भी सीखने को प्रभावित करने वाला कारक है। संचार क्षमता से तात्पर्य है कि शिक्षक विषय संबंधित तथ्य सुस्पष्ट शब्दों में अपने छात्रों के समक्ष प्रस्तुत करे जिसे छात्र उस विषय तथ्य को सही ढंग से समझ कर ग्रहण कर सकें। जिस शिक्षक में संचार क्षमता जितनी अच्छी और प्रभावशाली होती है उसके छात्रों में सीखना भी उतना अधिक होता है। गोल्ड एवं कैम्पबेल (1989) ने अपने शोध के आधार पर यह बताया कि छात्रों का कक्षा में बताए गए विषय का सही ढंग से सीखना शिक्षक की संचार क्षमता पर निर्भर करता है। अगर शिक्षक की संचार क्षमता पर्याप्त होती है, तब छात्रों द्वारा विषय को सीखने की गति 40% अधिक होती हैं।

iii. **शिक्षण विधि**– शिक्षक द्वारा प्रयोग शिक्षण सीखने से सीधे संबंधित है। शिक्षण विधि जितनी प्रभावशाली व वैज्ञानिक होगी, वह सीखने के लिए उतनी ही अधिक लाभप्रद होगी। यदि शिक्षक शिक्षण करते समय करके सीखना, निरीक्षण द्वारा सीखना, प्रयोग द्वारा सीखना, द्रश्य–श्रव्य, खेलविधि, क्रियाविधि आदि शिक्षण विधियों का प्रयोग करे तो छात्रों में सीखना सकारात्मक रूप से प्रभावित होगा। विषयवस्तु को स्पष्ट करने के लिए शिक्षण के दौरान सहायक सामग्री के रूप में चार्ट, माडल, आदि का उपयोग किया जाना महत्वपूर्ण है। इन विधियों के द्वारा शिक्षण से छात्र कम समय में विषयवस्तु को ठीक ढंग से समझकर सीखते है और सीखे गये ज्ञान का धारण भी अधिक समय तक रहता है।

iv. **मनोविज्ञान का ज्ञान**– शिक्षक में मनोविज्ञान का ज्ञान होना अत्यन्त आवश्यक हैं। यदि शिक्षक को बाल मनोविज्ञान का ज्ञान है तो वह व्यक्तिगत विभिन्नताओं, सीखने के नियमों बालक की आवश्यकता, रूचि, उचित प्रोत्साहन आदि को संज्ञान में लेकर शिक्षण करता है जिससे छात्रों में सीखने का स्तर बढ़ता है।

v. **शिक्षक की योग्यता एवं कुशलता**– अधिगम में शिक्षक की योग्यता एवं कुशलता का स्थान सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। बालक की सीखने की क्षमता शिक्षक की योग्यता एवं कुशलता पर निर्भर करती है। शिक्षक को नवीन शिक्षण विधियों के साथ–साथ बाल मनोविज्ञान का ज्ञान होना भी आवश्यक है। शिक्षक अपनी योग्यता एवं कुशलता के प्रयोग द्वारा सीखने की प्रक्रिया को सरल एवं तीव्रगामी बना सकता हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

7. शिक्षक का बाल मनोविज्ञान का ज्ञान सीखने को कैसे प्रभावित करता है?

....

....

8. शिक्षक में संचार क्षमता क्यों आवश्यक है?

....

....

4.3.3 विषय से संबंधित कारक

सीखना इस बात पर भी निर्भर करता है कि सीखे जाने वाले विषयवस्तु का स्वरूप कैसा है। प्रायः देखा गया है कि एक ही बालक एक ही शिक्षक द्वारा पढ़ाये गये विषय में कुछ विषयवस्तु को सीखने में पारंगत हो जाता है और कुछ में नहीं अर्थात् कि विषयवस्तु का स्वरूप भी सीखने को प्रभावित करता है। कठिन, उबाऊ एवं अरूचिकर पाठ्यवस्तु की अपेक्षा सरल एवं रोचक विषयवस्तु जल्दी सीख ली जाती है। अतः विषयवस्तु बालक के मानसिक योग्यता के अनुकूल होनी चाहिए।

विषयवस्त में संबंधित कारक जो कि सीखने को प्रभावित करते हैं निम्न हैं–

i. **विषय की लम्बाई**– प्रायः देखा गया है कि सीखे जाने वाले विषय या पाठ की लम्बाई भी सीखने को प्रभावित करती है। विषय/पाठ लम्बा होने पर उसे सीखने में अधिक प्रयासों की आवश्यकता होती है तथा सीखने में अधिक समय लगता है। तथा विषय/पाठ की लम्बाई कम होने से उसे सीखने में कम प्रयासों की आवश्यकता होती हैं अर्थात् विषय के अधिक लम्बा होने पर सीखना जटिल हो जाता है।

ii. **विषय का कठिनाई स्तर**– विषय का कठिनाई स्तर भी सीखने को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है। जब सीखे जाने वाले विषय का कठिनाई स्तर सीखने वाले की क्षमता व योग्यता से अधिक होता है तो उसे सीखने में कठिनाई होती हैं और अधिक समय भी लगता है। ऐसी स्थिति में व्यक्ति विषय वस्तु को समझकर नहीं बल्कि सिर्फ रटकर सीखता है और परिणाम स्वरूप जल्द ही भूल जाता है। परन्तु अगर सीखे जाने वाले विषय–वस्तु का कठिनाई स्तर सीखने वाले की क्षमता व योग्यता के अनुरूप होता है तो उसे सीखने में सरलता होती है और व्यक्ति विषयवस्तु को समझकर सीखता है, उसे सीखने में कम समय लगता है और सीखे गये ज्ञान को अधिक दिनों तक धारण कर पाता है।

iii. **विषय की सार्थकता**– सीखना विषयवस्तु की सार्थता पर भी निर्भर करता हैं। यदि सीखे जाने वाली विषयवस्तु अधिक सार्थक है तो सीखने वाला उसमें अधिक रूचि दिखाता है और जल्दी ही सीख लेता है। इसके विपरीत यदि सीखे जाने वाली विषयवस्तु कम सार्थक है तो सीखने वाला उसमें कम रूचि दिखाता है और उसे सीखने में भी अधिक समय लेता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

9. विषय की लम्बाई एवं सीखने के मध्य क्या सम्बन्ध है?

....

....

10. विषय का कठिनाई स्तर सीखने को कैसे प्रभावित करता है?

....

....

4.3.4 वातावरण से संबंधित कारक

सीखना वातावरण से प्रभावित होता है अगर वातावरण अनुकूल हो तो सीखना सुगम होता है और अगर वातावरण प्रतिकूल हो तो सीखने में कठिनाई होती है क्योंकि सीखने की प्रक्रिया ठीक तरह से सम्पन्न नहीं हो पाती। पर्यावरणवादी मनोवैज्ञानिकों के अनुसार उपयुक्त वातावरण प्रदान करने पर किसी को भी मनचाही बातें सिखायी जा सकती हैं।

सीखने को प्रभावित करने वाले वातावरणीय कारक निम्नवत है–

i. कक्षा का भौतिक वातावरण– सीखना की प्रक्रिया पर कक्षा के भौतिक वातावरण का प्रभाव पड़ता है। कक्षा के भौतिक वातावरण में रोशनी, वायु बैठने की व्यवस्था सफाई आदि आते हैं। अगर कक्षा की भौतिक अवस्था संतोषजनक हो तो छात्र तीव्र गति से सीखते हैं अपेक्षाकृत उस कक्षा के जिसमें भौतिक वातावरण असंतोषजनक हों। स्वार्ज (1977) के अनुसार, सीखने की प्रक्रिया कक्षा में पर्याप्त रोशनी की मात्रा, गर्मी तथा सर्दी से बचने की व्यवस्था, मेज, कुर्सी, बेंच के आराम दायक होने पर निर्भर करती हैं। अगर कक्षा में बाहर का कोलाहल सुनाई देता है तब भी सीखने की प्रक्रिया नकारात्मक ढंग से प्रभावित होती है।

ii. पारिवारिक वातावरण– पारिवारिक वातावरण से भी सीखना प्रभावित होता है। अगर परिवार का वातावरण कलहपूर्ण है, तो अधिगम सही ढंग से नहीं हो पाता। जिन परिवारों का वातावरण शांतिपूर्ण और सौहार्दपूर्ण होता है, उनके बालक जल्दी सीखने में पारंगत होते हैं। पारिवारिक वातावरण में परिवार के सदस्यों की शैक्षिक योग्यता भी शामिल है। परिवार के सभी सदस्य शिक्षित है तो बालकों का सीखना जल्दी होता है अपेक्षाकृत उन परिवारों के जहाँ परिवार के सदस्य अशिक्षित हों।

iii. सामाजिक एवं संवेगात्मक वातावरण– सीखने की प्रक्रिया को सामाजिक वातावरण भी प्रभावित करता है। अगर छात्रों को परिवार एवं विद्यालय में अनुकूल सामाजिक एवं संवेगात्मक वातावरण मिलता है अर्थात छात्रों एवं परिवार के सदस्य तथा छात्रों एवं अध्यायपकों के आपसी सम्बन्धों में मधुरता होती है तो सीखने की प्रक्रिया सुगम एवं सरल होती है। उचित मनोवैज्ञानिक वातावरण जैसे सहयोग एवं सहानुभूति की भावना से सीखने में सहायता मिलती है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

11. अधिगम प्राप्ति के लिए कक्षा का वातावरण कैसा होना चाहिए?

....

....

12. परिवारिक वातावरण एवं अधिगम का क्या संबंध है?

....

....

4.3.5. शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया से संबंधित कारक

अधिगम को शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती है। सीखना, शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया पर निर्भर करता है। यदि शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया सुगम व प्रभावशाली हो तो सीखना भी उतना की शीघ्र और तीव्र गति से होता है। प्रोत्साहन, प्रतियोगिता, पूर्व ज्ञान, अभ्यास आदि शिक्षण–अधिगम से संबंधित तत्व है जो अधिगमकर्ता के अधिगम को प्रभावित करते हैं, ये तत्व निम्नवत हैं–

i. अभ्यास– सीखना अभ्यास पर निर्भर करता है। अगर छात्र किसी विषयवस्तु को अभ्यास के द्वारा सीखते हैं तो सीखा हुआ ज्ञान स्थायी हो जाता है क्योंकि किसी कार्य को बार–बार करने से उसका धारण बढ़ जाता है और त्रुटियाँ कम हो जाती है। यदि किसी सीखी गयी विषय वस्तु का बहुत दिनों तक प्रयोग न किया जाय वह भूलने लगता है। अतः सीखने की प्रक्रिया में लगातार अभ्यास का बहुत महत्व होता हैं।

ii. पूर्वज्ञान– पहले से सीखा हुआ ज्ञान अथवा कौशल भी सीखने को प्रभावित करता हैं। अधिगमकर्त्ता द्वारा पूर्व अर्जित ज्ञान नये अधिगम के लिए आरम्भ बिन्दु का कार्य करता है। अगर सीखे जाने वाली विषयवस्तु से सम्बंधित पूर्व अनुभव/ज्ञान छात्र के पास है तो सीखने की प्रक्रिया अधिक सुचारू ढंग से चलती है।

iii. परिणाम का ज्ञान– व्यक्ति में, सीखने की प्रक्रिया परिणाम के ज्ञान या सूचनात्मक प्रतिपुष्ठि द्वारा भी प्रभावित होती है। परिणाम के ज्ञान या सूचनात्मक प्रतिपुष्ठि का अर्थ है सीखने वाले को उसके सीखने के लिए किए गये प्रयासों के परिणामों की जानकारी देना। शिक्षक द्वारा दिया गया परिणाम ज्ञान सीखने वाले के लिए बहुत ही लाभप्रद होता है क्योंकि अगर सीखते समय ही किये गये प्रयासों के परिणाम स्पष्ट हो जाये तो सीखने वाले को सही दिशा मिल जाती है। अगर सीखने वाले के प्रयास गलत दिशा में है तो परिणाम ज्ञान/सूचनात्मक प्रतिपुष्ठि से उसे अपने प्रयास सुधारने का पर्याप्त मौका मिलता है। दूसरी तरफ अगर शिक्षक द्वारा परिणाम ज्ञान सीखने की प्रक्रिया के दौरान नही दिया जाता तो इससे सीखने की प्रक्रिया प्रतिकूल रूप से प्रभावित होती है और सीखने की गति भी धीमी हो जाती है। इसलिए शिक्षक को अधिगमकर्ता को उनकी प्रगति तथा परिणाम का ज्ञान कराते रहना चाहिए जिससे उन्हें त्रुटि सुधार करने की प्रेरणा मिलती है।

iv. प्रोत्साहन– प्रोत्साहन भी एक ऐसा कारक है जो सीखने को प्रभावित करता है। प्रोत्साहन के द्वारा व्यक्ति सीखने के लिए प्रेरित होता है। शिक्षक द्वारा सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों प्रकार के प्रोत्साहन का प्रयोग किया जाता है। सकारात्मक प्रोत्साहन में प्रशंसा, पुरस्कार, धन आदि सम्मलित है। सकारात्मक प्रोत्साहन से आनन्द की अनुभूति होती है तथा जिस व्यवहार के लिए सकारात्मक प्रोत्साहन प्राप्त हुआ होता है, व्यक्ति वह व्यवहार बार–बार दुहराता है। नकारात्मक प्रोत्साहन के अन्तर्गत कष्ट, निन्दा एवं दण्ड आते हैं। नकारात्मक प्रोत्साहन के द्वारा किसी आपेक्षित व्यवहार को रोका जा सकता है क्योंकि नकारात्मक प्रोत्साहन से व्यक्ति बचना चाहता है। कक्षा में शिक्षक द्वारा प्रयोग किया गया सकारात्मक एवं नकारात्मक प्रोत्साहन अधिगम को प्रभावित करते हैं।

v. उपलब्ध सामग्री एवं सुविधाएँ– यदि छात्रों को उचित अध्ययन सामग्री एवं सुविधाएँ प्राप्त होती हैं जैसे– पाठ्य पुस्तक, प्रयोगशाला, पुस्तकालय आदि, तो सीखना अधिक सरल हो जाता है क्योंकि सामग्री एवं सुविधा सीखने में सहायक होती है। इसके विपरीत यदि छात्रों को उचित अध्ययन सामग्री एवं सुविधाओं का अभाव होता है तो वह सीखने में पिछड़ जाते हैं।

vi. प्रतियोगिता पूर्ण वातावरण– यदि छात्र का सामाजिक वातावरण प्रतियोगिता पूर्ण है तो सीखना सकारात्मक रूप से प्रभावित होता हैं। प्रतियोगिता की भावना प्रेरणा का कार्य करती है और अधिगमकर्ता को सीखने के लिए प्रेरित करती है परन्तु यह प्रतियोगितापूर्ण वातावरण स्वस्थ्य होना चाहिए। प्रतियोगिता के कारण ही अधिगमकर्ता उच्च उपलब्धि के लिए प्रयत्नशील रहते है और अधिगम की गति भी तीव्र होती है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

13. परिणाम ज्ञान सीखने को कैसे प्रभावित करता है?

....

....

....

14. प्रोत्साहन कितने प्रकार के होते हैं ? उदाहरण दीजिए।

....

....

4.4 सारांश

अधिगम जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है। जन्म से मृत्यु तक व्यक्ति कुछ न कुछ सीखना रहता है। परन्तु अधिगम प्रत्येक व्यक्ति में समान रूप एवं समान गति से सम्पन्न नहीं होता। सीखने को असंख्य कारक प्रभावित करते हैं जिसमें कुछ कारक आंतरिक एवं कुछ बाह्य होते हैं। यह कारक सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों प्रकार के प्रभाव सीखने पर डालते हैं। मुख्यतः सीखने को प्रभावित करने वाले कारकों को पाँच भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है – बालक संबंधित, शिक्षक संबंधित, विषय संबंधित, वातावरण संबंधित एवं शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया संबंधित।

बालक संबंधित अनेक कारक है जो आन्तरिक होते हैं एवं जो सीखने को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं जैसे बालक की उम्र, यौन, स्वास्थ्य, परिपक्वता, अभिप्रेरण, बुद्धि, संवेगात्मक स्थिति, रूचि, अभिक्षमता, अवधान, योग्यता, क्षमता, थकान, सीखने की इच्छा आदि।

सीखना सिखाने वाले पर भी निर्भर करता है अधिगम का स्तर शिक्षक के विषय ज्ञान, संचार क्षमता, शिक्षण विधि, योग्यता, कुशलता आदि पर प्रत्यक्ष रूप से निर्भर करता है।

बालक के सीखने को वह विषय भी प्रभावित करता है जिसे वो सीख रहा है। विषय की लम्बाई, सार्थकता एवं कठिनाई स्तर कुछ ऐसे तत्व है जो सीखने को प्रभावित करते है।

वातावरण एक ऐसा कारक है जो बालक के सीखने की गति को नियंत्रित करता है। वातावरण में विद्यालयी वातावरण एवं पारिवारिक वातावरण दोनों आते हैं। अच्छा वातावरण सीखने को सरल, सुगम एवं तीव्र बनाता है।

सीखना या अधिगम शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया का उत्पाद है अतः सीखना शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया पर भी निर्भर करता हैं। अभ्यास, पूर्वज्ञान, परिणाम का ज्ञान, प्रोत्साहन, प्रतियोगिता, उपलब्ध सामग्री एवं सुविधा आदि कुछ ऐसे शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया संबंधित कारक है जो सीखने को प्रभावित करते हैं।

4.5 अभ्यास के प्रश्न

1. अधिगम को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों का वर्णन कीजिए।
2. सीखने को प्रभावित करने वाले विषय संबंधित कारक की विवेचना कीजिए।
3. ''सीखना वातावरण पर निर्भर करता है।'' टिप्पणी कीजिए।
5. सीखने में प्रोत्साहन की क्या भूमिका है ?
4. शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया किस प्रकार से सीखने को प्रभावित करती है ? विवेचना करें।
5. सीखने को प्रभावित करने वाले आंतरिक एवं बाह्य कारकों पर प्रकाश डालिए।
6. अधिगम में अभिप्रेरण की भूमिका की विवेचना कीजिए।

4.6 चर्चा के बिन्दु

1. अधिगम को प्रभावित करने वाले विभिन्न कारकों पर चर्चा कीजिए।
2. अधिगम को सुगम एवं तीव्र बनाने में शिक्षक की भूमिका पर चर्चा कीजिए।
3. सीखने में बाधक कारकों की चर्चा कीजिए।

4.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. व्यवहार में परिवर्तन ही अधिगम है।
2. सीखने को प्रभावित करने वाले कारकों से तात्पर्य है वह तत्व या कारक जो सीखने को वांछित या

अवांछित रूप से प्रभावित करते हैं।

3. सीखने को प्रभावित करने वाले कारकों को पाँच भागों में बाँटा जा सकता है – बालक संबंधित, शिक्षक संबंधित, विषय संबंधित, वातावरण संबंधित एवं शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया संबंधित कारक।
4. बुद्धि एवं सीखने में धनात्मक संबंध हैं।
5. अभिक्षमता का अर्थ है अन्तः शक्ति जिस विषय के प्रति अभिक्षमता हो उस विषय को तीव्र गति से सीखा जा सकता है क्योंकि उस विषय सम्बंधित अन्तः शक्ति निहित होती है।
6. सीखते समय बालक को विवेचना, पुनरावृत्ति कर के सीखने जैसी विधियों का प्रयोग करना चाहिए।
7. यदि शिक्षक को बाल मनोविज्ञान का ज्ञान है तो वह व्यक्तिगत भिन्नताओं को ध्यान में रखकर शिक्षण करेगा एवं बालक की आवश्यकता, रूचि, प्रोत्साहन आदि को ध्यान में रखकर शिक्षण करेगा जिससे छात्रों में सीखना तीव्र गति से होगा।
8. शिक्षक में संचार क्षमता महत्वपूर्ण है क्योंकि अगर शिक्षक अपने विचार स्पष्ट शब्दों में छात्र तक पहुँचा सके तभी अधिगम सरल एवं सुगम हो सकता है।
9. अगर विषय की लम्बाई अधिक है तो सीखने में अधिक प्रयासों की आवश्यकता होती है एवं समय भी अधिक लगता है परन्तु अगर विषय की लम्बाई कम हो तो कम प्रयासों एवं कम समय में अधिगम प्राप्त किया जा सकता है।
10. अगर विषय का कठिनाई स्तर, सीखने वाले की योग्यता से अधिक हो तो सीखने में कठिनाई होती है।
11. अधिगम प्राप्ति के लिए कक्षा में उचित रोशनी, हवा, सफाई एवं बैठने की व्यवस्था होनी चाहिए।
12. यदि पारिवारिक वातावरण अनुकूल हो अर्थात शान्तिपूर्ण एवं सौहाद्रपूर्ण हो तो सीखना तीव्र गति से होता है।
13. यदि बालक को परिणाम ज्ञान हो तो वह अपने सीखने के प्रयासों को सही दिशा में लगा सकता है।
14. प्रोत्साहन दो प्रकार के होते है – सकारात्मक प्रोत्साहन जैसे प्रशंसा, पुरस्कार एवं नकारात्मक प्रोत्साहन जैसे दण्ड, निन्दा आदि।

4.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- यादव सियाराम (2010), अधिगमकर्ता का विकास, इलाहाबाद : शारदा पुस्तक भवन
- गुप्ता एस. पी. एवं गुप्ता अलका (2014), उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान, इलाहाबाद : शारदा पुस्तक भवन
- गर्ग, ओ. पी. एवं चतुर्वेदी एस. (2006), अधिगम का मनो–सामाजिक आधार एवं शिक्षा, जयपुर : अपोलो प्रकाशन
- चौहान, आर. (2015), शिक्षा मनोविज्ञान, आगरा : अग्रवाल पब्लिकेशन
- सिंह ए. के. (2013), शिक्षा मनोविज्ञान, पटना : भारती भवन
- सिंह डी. आर. (2009), शिक्षा के मनोवैज्ञानिक आधार, इलाहाबाद : न्यू कैलाश प्रकाशन
- लाल, आर. बी. एवं मानव, आर. एन. (2011), शिक्षा मनोविज्ञान, मेरठ : रस्तोगी पब्लिकेशन्स
- परवीन, ए. (2006), शिक्षण एवं अधिगम के मनो–सामाजिक आधार, जयपुर : आस्था प्रकाशन

इकाई–5 : अधिगम का स्थानान्तरण

इकाई की संरचना

5.1 प्रस्तावना

5.2 इकाई के उद्देश्य

5.3 अधिगम का स्थानान्तरण : अर्थ एवं परिभाषाएँ

5.4 स्थानान्तरण के प्रकार

5.5 अधिगम के स्थानान्तरण के सिद्धान्त

- 5.5.1 मानसिक अनुशासन का सिद्धान्त
- 5.5.2 समरूप तत्वों का सिद्धान्त
- 5.5.3 सामान्यीकरण का सिद्धान्त
- 5.5.4 आरोपण का सिद्धान्त
- 5.5.5 सीखना सीखने का सिद्धान्त
- 5.5.6 आदर्शों एवं मूल्यों का सिद्धान्त
- 5.5.7 सामान्य एवं विशिष्ट तत्वों का सिद्धान्त

5.6 अधिगम स्थानान्तरण की दशायें

5.7 अधिगम स्थानान्तरण का महत्व

5.8 अधिगम स्थानान्तरण एवं शिक्षक

5.9 सारांश

5.10 अभ्यास के प्रश्न

5.11 चर्चा के बिन्दु

5.12 बोध प्रश्न के उत्तर

5.13 कुछ उपयोगी पुस्तकें

5.1 प्रस्तावना

अधिगम का अर्थ है व्यवहार में परिवर्तन एवं शिक्षण का मुख्य उद्देश्य भी है बालक के व्यवहारों में परिवर्तन उत्पन्न करना, जिसे वे अपने जीवन में प्रयोग कर सके। अधिगम के साथ स्थानान्तरण निहित होता है। शिक्षा का मुख्य उद्देश्य है कि बालक अपने जीवन में संतोषप्रद सामन्जस्य स्थापित कर सके और यह तभी संभव है जब बालक सीखे हुए ज्ञान का प्रयोग अपनी वास्तविक जीवन में कर सके। यदि बालक सीखे हुए ज्ञान का प्रयोग नहीं कर पाता तो इसका अर्थ है कि उसकी शिक्षा व्यर्थ है। उदाहरणार्थ कक्षा में सीखा हुआ गणित का ज्ञान जैसे घटाना, जोड़ना आदि का प्रयोग बालक अपने वास्तविक जीवन में करता है। इस प्रकार एक परिस्थिति में सीखा हुआ ज्ञान दूसरी परिस्थिति में सहायक सिद्ध होता है। शिक्षा की परिधि में अधिगम का स्थानान्तरण हमेशा होता रहता है। इसलिए शिक्षा प्रक्रिया में अधिगम के स्थानान्तरण का महत्वपूर्ण स्थान हैं। शिक्षण को सफल तभी माना जाता है जब बालक सीखे गये ज्ञान, बोध कौशल, अनुभव का प्रयोग अपने जीवन के विभिन्न कार्यों एवं समस्याओं के समाधान में करें। जब भी बालक कुछ नया कार्य करता है अथवा कुछ नया सीखता है तो पहले से सीखा हुआ ज्ञान एवं अनुभव उसके सीखने को प्रभावित करता है। इस इकाई में अधिगम का स्थानान्तरण पर विस्तृति विवेचना की गई है।

5.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि–

1. अधिगम स्थानान्तरण को परिभाषित कर सकेंगे।
2. अधिगम स्थानानतरण के विभिन्न प्रकारों का वर्णन कर सकेंगे।
3. अधिगम स्थानान्तरण के विभिन्न सिद्धान्तों का उल्लेख कर सकेंगे।
4. अधिगम स्थानानतरण की दशाओं को जान सकेंगे।
5. शिक्षा के क्षेत्र में अधिगम स्थानान्तरण के महत्व का वर्णन कर सकेंगे।
6. अधिगम स्थानान्तरण में शिक्षक की भूमिका का वर्णन कर सकेंगे।

5.3 अधिगम का स्थानान्तरण : अर्थ एवं परिभाषाएँ

अधिगम स्थानान्तरण का अर्थ

अधिगम के स्थानानतरण का अर्थ है किसी एक परिस्थिति में अर्जित ज्ञान, कौशल, आदतों, विचारों आदि का किसी अन्य परिस्थिति में प्रयोग करना। अर्थात सीखे गए ज्ञान का किसी अन्य परिस्थिति में प्रयोग करना ही सीखने का अन्तरण है। जब भी व्यक्ति किसी कार्य को करता है तो पहले से प्राप्त योग्यता, ज्ञान, अनुभव उसे प्रभावित करते हैं इसे ही अधिगम का स्थानान्तरण कहते हैं। पहले से प्राप्त अधिगम नई परिस्थिति में सीखी जा रही बातों, ज्ञान, कौशलो में सहायक अथवा घातक हो सकता है। विद्यालय में सीखा गया ज्ञान एवं कौशल तभी सफल माना जाता है जब बालक उसे अपने जीवन में प्रयोग कर सके। बालक कक्षा में सीखे गये विभिन्न विषयों जैसे – गणित, विज्ञान, भाषा, सामाजिक विज्ञान आदि के ज्ञान का प्रयोग अपने दैनिक जीवन की समस्याओं के समाधान में करता है। उदाहरणार्थ बालक विज्ञान के ज्ञान का प्रयोग विभिन्न वैज्ञानिक उपकरणों के सही ढंग से उपयोग करने में करता है, भाषा के ज्ञान का प्रयोग सम्प्रेषण में करता है, सामाजिक विज्ञान के ज्ञान का प्रयोग दैनिक जीवन की समस्याओं के समाधान में करता है आदि। प्रायः अधिगम का स्थानान्तरण या सीखने के अन्तरण को प्रशिक्षण अन्तरण अथवा प्रशिक्षण स्थानान्तरण भी कहा जाता है।

अधिगम स्थानान्तरण की परिभाषाएं

ब्लेयर, जोन्स एवं सिम्पसन (1962) के अनुसार, ''जब पहले के सीखने का प्रभाव किसी नई अनुक्रिया के निष्पादन या सीखने पर पड़ता है तो सीखने का अन्तरण होता माना जाता है।''

विटेकर (1970) के अनुसार, ''प्रशिक्षण के अन्तरण से तात्पर्य किसी एक कौशल या विषय–वस्तु के सीखने का, किसी दूसरे कौशल या विषय–वस्तु के सीखने पर पड़ने वाले प्रभाव से होता है।''

सोरेन्सन के अनुसार– ''स्थानान्तरण एक परिस्थिति में अर्जित ज्ञान, प्रशिक्षण और आदतों का दूसरी परिस्थिति में स्थानान्तरित किए जाने का उल्लेख करता है।''

क्रो एवं क्रो के अनुसार– ''सीखने के एक क्षेत्र में प्राप्त होने वाले ज्ञान या कुशलताओं का और सोचने, अनुभव करने या कार्य करने की आदतों का सीखने के दूसरे क्षेत्र में प्रयोग करना ही प्रशिक्षण का स्थानान्तरण कहा जाता है।''

कालसनिक के अनुसार– ''स्थानान्तरण, पहली परिस्थिति से प्राप्त ज्ञान, कुशलता, आदतों, योग्यताओं या अन्य क्रियाओं का दूसरी परिस्थिति में प्रयोग करना है।''

अण्डरवुड के अनुसार– ''वर्तमान क्रियाओं पर पूर्व अनुभवों के प्रभाव को प्रशिक्षण अंतरण करते हैं।''

हिलगार्ड एवं स्टकिन्सन : के अनुसार–एक कार्य को सीखने का आगामी कार्यो को सीखने अथवा करने पर पड़ने वाले प्रभाव को प्रशिक्षण अन्तरण कहते है।''

कैन्डलैंड के अनुसार– ''अन्तरण पूर्व सीखे गये व्यवहार का वर्तमान में सीखे गए व्यवहार पर पड़ने वाले प्रभाव

से संबंधित होता है।''

पीटरसन के अनुसार– ''स्थानान्तरण सामान्यीकरण है, क्योंकि वह एक नए क्षेत्र तक विचारों का विस्तार है।''

उपरोक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि जब अर्जित ज्ञान, कौशल, दक्षता किसी नये अधिगम में सहायक या घातक सिद्ध हो अर्थात जब पहले से सीखा ज्ञान, कौशल नये सीखने को प्रभावित करे तो उसे अधिगम स्थानान्तरण की स्थिति कहते हैं। दूसरे शब्दों में जब एक परिस्थिति में अर्जित ज्ञान, कौशल, आदत, विचार आदि का किसी अन्य परिस्थिति में उपयोग हो तो उसे अधिगम या सीखने के प्रशिक्षण का स्थानान्तरण कहते हैं।

अधिगम स्थानान्तरण की विशेषताएँ

1. सीखने का स्थानान्तरण एक सोद्देश्य क्रिया है।
2. अधिगम स्थानान्तरण में पहले से सीखे गए ज्ञान, कौशल, अनुभव का प्रभाव नई अनुक्रिया के सीखने पर पड़ता है।
3. पूर्व ज्ञान, कौशल एवं अनुभव नये अधिगम में सहायक अथवा घातक हो सकते हैं।
4. अधिगम स्थानान्तरण, ज्ञान, कौशल, अनुभव, प्रशिक्षण, आदत, अयोग्यता, व्यवहार का हो सकता है।
5. अधिगम स्थानान्तरण सामान्यीकरण है।
6. स्थानान्तरण से सूझ या अन्तर्दृष्टि का विकास होता है।
7. स्थानान्तरण का आधार प्राप्त ज्ञान तथा कौशल का नवीन परिस्थिति में प्रयोग करना है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. अधिगम के स्थानान्तरण का क्या अर्थ है?

....

....

2. अधिगम के स्थानान्तरण को परिभाषित कीजिए।

....

....

3. अधिगम स्थानान्तरण की विशेषताएं क्या है?

....

....

5.4 स्थानान्तरण के प्रकार

सीखने में स्थानान्तरण कई प्रकार के होते है जो निम्न चित्र से स्पष्ट होता है–

स्थानान्तरण के प्रकार
- धनात्मक स्थानान्तरण / सकारात्मक स्थानान्तरण
- ऋणात्मक स्थानान्तरण / नकारात्मक स्थानान्तरण
- शून्य स्थानान्तरण
- क्षैतिज स्थानान्तरण
- लम्बात्मक स्थानान्तरण
- द्विपक्षीय स्थानान्तरण

(1) धनात्मक स्थानान्तरण – जब पहले से सीखा हुआ ज्ञान अथवा कौशल किसी नये सीखे जाने वाले ज्ञान अथवा कौशल या कुछ भी नया सीखने में सहायक हो तो इसे धनात्मक या सकारात्मक स्थानान्तरण कहते हैं। मार्गन एवं किंग के अनुसार, जब पहले सीखी गई कुछ चीज एक नयी परिस्थिति में कार्य या अधिगम को लाभान्वित करती है तो सकारात्मक अधिगम स्थानान्तरण होता है। जैसे– साईकिल चलाने का कौशल, स्कूटर, बाईक या स्कूटी चलाना सीखना में सहायक होना। गणित का ज्ञान भौतिकशास्त्र की संख्यात्मक समस्याओं के हल करने में सहायक होना। धनात्मक स्थानान्तरण शिक्षा के क्षेत्र में अत्यधिक महत्वपूर्ण है। शिक्षा के क्षेत्र में अधिगम के स्थानान्तरण का अर्थ धनात्मक स्थानान्तरण से ही होता है।

(2) ऋणात्मक स्थानान्तरण – जब पहले से सीखा हुआ ज्ञान अथवा कौशल किसी नये सीखे जाने वाले ज्ञान अथवा कौशल में बाधक हो तो उसे ऋणात्मक या नकारात्मक स्थानान्तरण कहते हैं। ऋणात्मक स्थानान्तरण में पूर्व ज्ञान, कौशल, अनुभव, योग्यता अथवा प्रशिक्षण कुछ नया सीखने में व्यवधान उत्पन्न करता है। नकारात्मक स्थानान्तरण में पूर्व ज्ञान का नवीन ज्ञान सीखने पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। मार्गन एवं किंग के शब्दों में, नकारात्मक स्थानान्तरण तब होता है जब पहले सीखी गयी कोई चीज एक नयी परिस्थिति में कार्य अथवा अधिगम को रोकती है। जैसे– नया साल (2016) आने पर कुछ दिनों तक पुराना सन (2015) ही लिखना।

(3) शून्य स्थानान्तरण – जब पूर्व ज्ञान, योग्यता अथवा कौशल नये ज्ञान, योग्यता अथवा कौशल सीखने पर कोई प्रभाव न डाले तो उसे शून्य स्थानान्तरण कहते है। जैसे– साईकिल चलाना आने का कोई प्रभाव मोबाइल चलाना सीखने पर नही पड़ता। शून्य स्थानान्तरण में स्थानान्तरण नही होता बल्कि स्थानान्तरण की अनुपस्थिति होती है।

(4) क्षैतिज स्थानान्तरण – जब किसी एक स्तर पर सीखा हुआ ज्ञान अथवा कौशल उसी स्तर के किसी और ज्ञान अथवा कौशल सीखने में सहायक हो तो उसे क्षैतिज स्थानान्तरण कहते हैं। जैसे– कक्षा में सीखा हुआ जोड़, घटाना को बालक घर पर भी प्रयोग करता है। हिन्दी का ज्ञान संस्कृत सीखने में सहायक होता है।

(5) अनुलम्ब स्थानान्तरण – जब किसी एक स्तर पर सीखा हुआ ज्ञान अथवा कौशल उच्च स्तर के ज्ञान अथवा कौशल सीखने में सहायक हो या प्रयोग किया जाये तो उसे अनुलम्ब या लम्बात्मक स्थानान्तरण कहते है। जैसे– हिन्दी भाषा में अक्षर ज्ञान, शब्द ज्ञान सीखने में सहायक होता है एवं शब्द ज्ञान वाक्य ज्ञान सीखने में सहायक होता है।

(6) द्विपक्षीय स्थानान्तरण – हमारे शरीर के दो भाग होते हैं– बायाँ और दायाँ। जब शरीर के एक अंग द्वारा सीखा हुआ कौशल शरीर के दूसरे अंग में स्वतः स्थानन्तरित हो जाये तो उसे द्विपक्षीय स्थानान्तरण

कहते हैं। जैसे अगर बालक दाएँ हाथ से लिखना सीखता है या कोई भी कार्य करता है तो वह कौशल स्वतः बाएँ हाथ में स्थानान्तरण हो जाता है और बालक बाएँ हाथ से भी लिख पाता है अथवा कार्य कर पाता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

4. स्थानान्तरण कितने प्रकार का होता है?

....

....

5. शिक्षा के क्षेत्र में कौन सा स्थानान्तरण कार्य करता है?

....

....

6. द्विपक्षीय स्थानान्तरण का क्या अर्थ है ?

....

....

5.5 अधिगम के स्थानान्तरण के सिद्धान्त

मनोवैज्ञानिकों ने अधिगम के स्थानान्तरण के सम्बन्ध में अनेक प्रयोग किये है, और स्थानान्तरण के अनेक सिद्धान्त प्रतिपादित किये। अधिगम के स्थानान्तरण के कुछ प्रमुख सिद्धान्त निम्नवत् है–

(1) मानसिक अनुशासन का सिद्धान्त

(2) समरूप तत्वों का सिद्धान्त

(3) सामान्यीकरण का सिद्धान्त

(4) आरोपण का सिद्धान्त

(5) सीखना सीखने का सिद्धान्त

(6) आदर्शों एवं मूल्यों का सिद्धान्त

(7) सामान्य एवं विशिष्ट तत्वों का सिद्धान्त

5.5.1 मानसिक अनुशासन का सिद्धान्त

सीखने के स्थानान्तरण का मानसिक अनुशासन सिद्धान्त अत्यंत प्राचीन है। इस सिद्धान्त के अनुसार अधिगम का स्थानान्तरण स्वतः होता है। मानसिक अनुशासन या मानसिक शक्तियों के सिद्धान्त के अनुसार मस्तिष्क में बहुत सी मानसिक शक्तियाँ होती है जैसे – तर्क, चिन्तन, निरीक्षण, स्मरण, कल्पना, विचार आदि। यह शक्तियाँ मस्तिष्क की मांसपेशियों की तरह होती है जिन्हें शरीर की मांसपेशियों की तरह समुचित उपयोग एवं अभ्यास के द्वारा शक्तिशाली बनाया जा सकता है और उनकी कार्यक्षमता को बढ़ाया जा सकता है। इस सिद्धान्त के अनुसार स्थानान्तरण के लिए मानसिक क्रियाओं का विकास एवं अभ्यास आवश्यक है। मानसिक

शक्तियों के विकसित हो जाने पर व्यक्ति सभी परिस्थिति में उसका उपयोग करके सीखना सरल बना सकता है। मानसिक शक्तियां जैसे तर्क, चिन्तन, निरीक्षण क्षमता आदि, यदि विकसित हो जाए तो सीखने में सहायक भूमिका निभाती है। परन्तु आधुनिक मनोवैज्ञानिक इस सिद्धान्त को स्वीकार नहीं करते हैं।

5.5.2 समरूप तत्वों का सिद्धान्त

अधिगम स्थानान्तरण के समरूप तत्वों या समान अवयव सिद्धान्त का प्रतिपादन थॉर्नडाइक ने किया था। यह सिद्धान्त थॉर्नडाइक द्वारा प्रतिपादित सादृश्यता के नियम पर आधारित है। इस सिद्धान्त के अनुसार अधिगम का स्थानान्तरण समान तत्वों पर आधारित होता है अर्थात एक परिस्थिति से दूसरी परिस्थिति में अधिगम का स्थानान्तरण उस अनुपात में होता है जिस अनुपात में दोनों परिस्थितियों में समानता हो। थार्नडाइक के अनुसार जब हम कोई मानसिक कार्य करते है तो मस्तिष्क में बहुत से स्नायु संयोग बनते हैं। भविष्य में जब हम उसी प्रकार के और कार्य करते हैं तो वे स्नायु संयोग जागृत हो जाते हैं और हमारा पूर्व अनुभव, नया कार्य करने में मद्द करता है। यदि दोनों परिस्थिति का दृष्टिकोण, विषयवस्तु, उद्देश्य आदि समान है तो अधिगम का स्थानान्तरण होगा। यदि दोनों परिस्थिति में समानता अधिक है तो स्थानान्तरण भी अधिक होगा और यदि समानता कम है तो स्थानान्तरण भी कम होगा। उदाहरणतः कार चलाने का ज्ञान बस चलाना सीखने में सहायक है क्योंकि दोनों में समानता है। कार चलाने का ज्ञान खाना बनाना, सीखने में सहायक नहीं है क्योंकि दोनों में समानता नहीं है। गणित का ज्ञान भौतिक विज्ञान की समस्याओं के समाधान में सहायक है।

5.5.3 सामन्यीकरण का सिद्धान्त

अधिगम स्थानान्तरण के सामान्यीकरण सिद्धान्त का प्रतिपादन चार्ल्स जुड ने 1908 में किया। इस सिद्धान्त के अनुसार, स्थानान्तरण सामान्य तत्वों के कारण नही बल्कि सामान्यीकरण के कारण होता है। जुड के अनुसार अधिगम का स्थानान्तरण, सामान्यीकृत सिद्धान्तों के निर्माण के कारण होता है। यह सिद्धान्त सामान्यीकरण पर बल देता है। छात्र अपने ज्ञान एवं अनुभव के आधार पर कुछ नियम बनाते हैं तथा उसका उपयोग अन्य परिस्थिति में करते हैं। जुड ने एक प्रयोग द्वारा इस बात को सिद्ध किया– उन्होंने दो समूह को पानी के अन्दर की किसी वस्तु पर निशाना लगाने का अभ्यास कराया। एक समूह को अपवर्तन के नियमों का प्रशिक्षण दिया गया और दूसरे समूह को अपवर्तन के नियम का प्रशिक्षण नहीं दिया गया। अंत में पानी में रखी हुई वस्तु की गहराई परिवर्तित कर दी गयी और उस पर निशाना लगवाया गया एवं यह पाया गया कि जिस समूह को अपवर्तन के नियम का प्रशिक्षण दिया था उसका निष्पादन, दूसरे समूह, जिसको अपवर्तन के नियम का प्रशिक्षण नहीं दिया गया था, उससे अच्छा था। जुड के अनुसार ऐसा इसलिए हुआ क्योंकि अपवर्तन प्रशिक्षण प्राप्त समूह ने अपवर्तन के नियमों का सामान्यीकरण किया और उसका प्रयोग नई परिस्थिति में किया।

5.5.4 आरोपण का सिद्धान्त

अधिगम स्थानान्तरण के आरोपण सिद्धान्त का प्रतिपादन गेस्टालट मनोवैज्ञानिक के द्वारा किया गया। गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिकों के अनुसार किसी भी विषय अथवा कौशल को सीखने में सूझ का प्रयोग होता है एवं विषय अथवा कौशल सीखने में सूझ का विकास भी होता है। आरोपण सिद्धान्त के अनुसार किसी दूसरे कार्य को करने में या किसी दूसरे विषय, या कौशल को सीखने में पहले से विकसित सूझ का ही स्थानान्तरण होता है। व्यक्ति एक परिस्थिति में अर्जित सूझ का प्रयोग दूसरी परिस्थिति की समस्या के समाधान करने के लिए करता है। गेस्टालट मनोवैज्ञानिक कोहलर के अनुसार एक बार समस्या समाधान की सूझ उत्पन्न हो जाने पर अन्य समस्याओं का समाधान अपेक्षाकृत कम समय में होता है। यह सिद्धान्त समरूप तत्वों के सिद्धान्त के आधार पर विकसित हुआ है।

5.5.5 सीखना सीखने का सिद्धान्त

इस सिद्धान्त के अनुसार जब व्यक्ति एक ही प्रकार का कार्य बार–बार करता है तो वह उस प्रकार के कार्यों को करना सीख लेता है। उदाहरणार्थ मोटर मकैनिक गाड़ी ठीक करते–करते किसी भी प्रकार की गाड़ी ठीक कर सकता है।

5.5.6 आदर्शों एवं मूल्यों का सिद्धान्त

अधिगम के स्थानान्तरण के आदर्शों एवं मूल्यों के सिद्धान्त का प्रतिपादन डब्ल्यू.सी. बागले ने किया। इस सिद्धान्त के अनुसार सामान्यीकरण के स्थानान्तरण का आधार मूल्य एवं आर्दश है। स्थानान्तरण मूल्यों एवं आदर्शों का होता है। अतः छात्रों में मूल्यों एवं आदर्शों का विकास करने की आवश्यकता है। अगर मूल्य एवं आर्दश का विकास हो जाए तो उसका स्थानान्तरण हर क्षेत्र में हो जाता है। उदाहरणार्थ अगर कोई व्यक्ति किसी कार्य को स्वच्छतापूर्ण करना सीख लेता है तो वह हर कार्य को स्वच्छतापूर्ण ही करता है।

5.5.7 सामान्य एवं विशिष्ट तत्वों का सिद्धान्त

अधिगम के स्थानान्तरण के सामान्य एवं विशिष्ट तत्वों का सिद्धान्त का प्रतिपादन स्पीयरमैन ने किया था। स्पीयरमैन के अनुसार बुद्धि दो प्रकार की होती है– सामान्य बुद्धि एवं विशिष्ट बुद्धि। सामान्य बुद्धि हर व्यक्ति में पायी जाती है एवं सभी कार्य करने में सहायक होती है। विशिष्ट बुद्धि विशिष्ट व्यक्तियों में पायी जाती है एवं विशिष्ट कार्यों को करने में सहायक होती है। इस सिद्धान्त के अनुसार, अंतरण विशेष योग्यता का न होकर सामान्य योग्यता का होता है। अर्थात अधिगम का स्थानान्तरण सामान्य बुद्धि के कारण होता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

7. समरूप तत्वों का सिद्धान्त किस नियम पर आधारित है?

....

....

8. सामान्यीकरण का सिद्धान्त किसके द्वारा प्रतिपादित है?

....

....

9. अधिगम स्थानान्तरण के आरोपण सिद्धान्त की व्याख्या कीजिए?

....

....

5.6 स्थानान्तरण की दशायें

रेबर्न के अनुसार, स्थानान्तरण निश्चित परिस्थितियों में निश्चित मात्रा में हो सकता है। एक क्षेत्र अथवा परिस्थिति में सीखा हुआ ज्ञान एवं कौशल दूसरे क्षेत्र अथवा परिस्थिति में सीखे जाने वाले ज्ञान एवं कौशल को सीखने में तभी सहायक होता है जब परिस्थितियाँ अनुकूल हों। सीखने के स्थानान्तरण के लिए अनुकूल परिस्थिति का होना आवश्यक है। परिस्थितियाँ जितनी अधिक अनुकूल होंगी स्थानान्तरण उतना ही अधिक होगा। सीखने का स्थानान्तरण हेतु निम्नलिखित अनुकूल दशायें होनी आवश्यक है–

(1) विषयवस्तु की समानता – अधिगम का स्थानान्तरण विषयवस्तु अथवा दो परिस्थितियों में समानता पर निंभर करता है। जब दो विषय अथवा परिस्थिति समान हो तो स्थानान्तरण अधिक होता है और यदि विषयों में समानता न हो तो अन्तरण भी नहीं होता है।

(2) **विषयों के गुण** – स्थानान्तरण विषय के गुणों पर भी आधारित होता है। हर विषय के ज्ञान का स्थानान्तरण भिन्न–भिन्न होता है। गैरेट के अनुसार, विद्यालय विषयों में स्थानान्तरण के गुण में विभिन्नता होती है। जैसे गणित और विज्ञान के ज्ञान का स्थानान्तरण, भाषा एवं इतिहास के ज्ञान के स्थानान्तरण की अपेक्षा अधिक होता है।

(3) **सामान्यीकरण करने की योग्यता** – अधिगम के स्थानान्तरण के लिए सामान्यीकरण करने की योग्यता आवश्यक है। सीखने वाले में जितना अधिक ज्ञान एवं अनुभवों को सामान्यीकृत करने की योग्यता होगी अधिगम के स्थानान्तरण की सम्भावना भी उतनी अधिक होगी।

(4) **सूझ** – अधिगम का स्थानान्तरण सीखने वाले की सूझ पर निर्भर करता है। व्यक्ति में सूझ अथवा अन्तर्दृष्टि जितनी अधिक होगी स्थानान्तरण भी उतना अधिक होगा क्योंकि नये विषय, ज्ञान या कौशल सीखने में पहले से विकसित सूझ का ही स्थानान्तरण होता है।

(5) **सामान्य बुद्धि** – अधिगम के स्थानान्तरण के लिये सामान्य बुद्धि महत्वपूर्ण है। स्थानान्तरण सामान्य बुद्धि के कारण होता है। यदि सीखने वाले की सामान्य बुद्धि अधिक हो तो स्थानान्तरण भी अधिक होता है।

(6) **सीखने वाले की इच्छा** – अधिगम का स्थानान्तरण सीखने वाले की इच्छा पर निर्भर करता है। मर्सेल के अनुसार, किसी नई परिस्थिति में अधिगम स्थानान्तरण की एक अनिवार्य शर्त है कि सीखने वाले में उसे स्थानान्तरित करने की इच्छा अवश्य होनी चाहिए। यदि व्यक्ति में सीखने की इच्छा है, वह सीखने के लिए तत्पर एवं तैयार है, व अभिप्रेरित है तो पूर्व अर्जित अधिगम का स्थानान्तरण होगा अर्थात यदि सीखने वाले में सीखने की इच्छा है तभी पूर्व अर्जित ज्ञान एवं कौशल का स्थानान्तरण होता है। इसके विपरीत अगर सीखने वाले में सीखने की इच्छा न हो तो सीखने का स्थानान्तरण भी नहीं होता।

(7) **प्रशिक्षण** – अधिगम के स्थानान्तरण पर प्रशिक्षण का प्रभाव भी पड़ता है। प्रशिक्षण के द्वारा स्थानान्तरण की क्षमता एवं सम्भावना को बढ़ाया जा सकता है।

(8) **रूचि व अभिक्षमता** – सीखने का स्थानान्तरण तभी होता है जब सीखे जाने वाले विषय वस्तु के प्रति सीखने वाले की रूचि एवं अभिक्षमता हो।

(9) **ज्ञान एवं कौशल पर पूर्ण अधिकार** – अधिगम का स्थानान्तरण सीखने वाले के पूर्व अर्जित ज्ञान एवं कौशल के पूर्ण अधिकार पर भी निर्भर करता है। सीखने वाले को पूर्व में अर्जित ज्ञान एवं कौशल पर जितना अधिक अधिकार होता है वो उतना अधिक उसका स्थानान्तरण करने में सक्षम होता है।

(10) **योग्यता** – अधिगम का स्थानान्तरण सीखने वाले की सामान्य एवं शैक्षिक योग्यता पर आधारित होता है। सीखने वाले का ज्ञान एवं शैक्षिक योग्यता जितनी अधिक होती है, उसकी अधिगम स्थानान्तरण करने की योग्यता भी उतनी अधिक होती है। परन्तु अगर सीखने वाले ने रटकर ज्ञान प्राप्त किया है तो उसका स्थानान्तरण नहीं होता। स्थानान्तरण तभी होता है जब अध्ययन सोच–समझकर किया गया हो। मर्सेल के अनुसार, जब हम किसी बात को वास्तव में सीख लेते है, तभी उसका स्थानान्तरण कर सकते हैं। मन्द बुद्धि वाले बालकों की अपेक्षा कुशाग्र बुद्धि वाले बालकों में स्थानान्तरण करने की क्षमता अधिक होती हैं।

(11) **समझने की क्षमता** – अधिगम का स्थानान्तरण बालक की परिस्थितियों को समझने की क्षमता पर भी निर्भर करती है। जिन छात्रों में परिस्थिति को समझने की क्षमता अधिक होती है वे अधिगम का स्थानान्तरण भी अधिक कर पाते हैं।

(12) **विषय के प्रति अभिवृत्ति** – यदि व्यक्ति/बालक का सीखे जाने वाले विषय के प्रति अनुकूल अभिवृत्ति है तो अधिगम का धनात्मक स्थानान्तरण होता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

10. अधिगम के स्थानान्तरण के लिए विषय सम्बन्धी कौन सी दशाए होना आवश्यक है?

....

....

11. अभिप्रेरणा स्थानान्तरण को कैसे प्रभावित करती है?

....

....

5.7 अधिगम स्थानान्तरण का महत्व

अधिगम स्थानान्तरण के कारण बालकों में अधिगम कुशलता में वृद्धि होती है, वे नवीन ज्ञान व कौशल सरलता से सीख लेते हैं। शिक्षा के क्षेत्र में अधिगम स्थानान्तरण अत्यन्त महत्वपूर्ण है। शिक्षा का मुख्य उद्देश्य ही है कि बालक प्राप्त ज्ञान का अपने दैनिक जीवन में प्रयोग कर सकें। शिक्षा तभी सफल मानी जाती है जब बालक अर्जित ज्ञान का प्रयोग अपने जीवन में कर सके। शिक्षा के विभिन्न क्षेत्र जैसे– पाठ्यक्रम, उद्देश्य, शिक्षण विधि, अध्यापक, छात्र आदि के लिए अधिगम स्थानान्तरण अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं।

पाठ्यक्रम निर्माण करते समय अधिगम स्थानान्तरण को ध्यान में रखा जाना आवश्यक है। अधिगम का स्थानान्तरण किस प्रकार से होता है तथा वह किन–किन बातों से प्रभावित होता है, इसे ध्यान में रखकर पाठ्यक्रम की रचना की जानी चाहिए। पाठ्यक्रम ज्ञात से अज्ञात की ओर बनाया जाता है ताकि बालक पूर्व अधिगम का स्थानान्तरण एवं प्रयोग कर सके। पाठ्यक्रम सीखने वाले की रूचि, अभिक्षमता, योग्यता, परिपक्वता, आवश्यकता के अनुकूल होना चाहिए। पाठ्यक्रम सीखने वाले के लिए सार्थक एवं उपयोगी होने पर ही बालक की रूचि जागृत कर सकता है एवं तभी अधिगम का स्थानान्तरण संभव है। पाठ्यक्रम के सभी विषय आपस में सम्बन्धित होने चाहिए जिससे अधिगम का स्थानान्तरण सुचारू रूप से हो सके और ज्ञान प्राप्ति में सहायता मिल सके। शिक्षण विधि का चयन भी अधिगम स्थानान्तरण पर निर्भर करता है। अधिगम स्थानान्तरण की उपयोगिता को ध्यान में रखकर ही शिक्षण–विधियों का प्रयोग किया जाता है जिससे पूर्व ज्ञान एवं कौशल के आधार पर नये ज्ञान एवं कौशल का विकास किया जा सके। शिक्षक को ऐसी शिक्षण विधियों का प्रयोग करना चाहिए जिनसे स्थानान्तरण अधिकतम हो सकें। शिक्षक के लिए भी अधिगम स्थानान्तरण अत्यन्त उपयोगी है। शिक्षक अधिगम स्थानान्तरण को ध्यान में रखकर शिक्षा प्रक्रिया अपना सकता है जैसे सामान्य सिद्धान्तों का ज्ञान देना, उदाहरणों का प्रयोग करना, जीवन की परिस्थितियों से शिक्षा को संबंधित करना, पाठ से संबंधित पूर्व ज्ञान का पता लगाना, पाठ के मुख्य बिन्दुओं को स्पष्ट करना, नया ज्ञान देते समय पूर्व ज्ञान से उसे सम्बंधित करना आदि।

5.8 अधिगम स्थानान्तरण एवं शिक्षक

अधिगम प्रक्रिया शिक्षक द्वारा संचालित होती है। इस प्रक्रिया में शिक्षक की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है। अधिगम के स्थानान्तरण का ज्ञान शिक्षक के लिए बहुत लाभप्रद है क्योंकि स्थानान्तरण के ज्ञान का प्रयोग कर के शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाया जा सकता है। अधिगम स्थानान्तरण के ज्ञान का सार्थक उपयोग शिक्षण प्रक्रिया में कर के शिक्षक छात्रों में भी स्थानान्तरण करने के कौशल विकसित कर सकता है।

1. कक्षा में पढ़ाते समय शिक्षक को सामान्य सिद्धान्तों एवं नियमों का ज्ञान एवं उनकी व्यावहारिकता का ज्ञान छात्रों को देना चाहिए।
2. शिक्षकों को पढ़ाते समय अलग–अलग क्षेत्रों से संबंधित अधिक से अधिक उदाहरणों का प्रयोग करना चाहिए।
3. शिक्षक को कक्षा शिक्षण की विषय वस्तु को छात्रों के दैनिक जीवन से संबंधित कर के पढ़ानी चाहिए।
4. विभिन्न विषयों का ज्ञान एक दूसरे से सम्बंधित करके छात्रों के समक्ष प्रस्तुत करना शिक्षक का दायित्व होना चाहिए।
5. कक्षा शिक्षण करते समय शिक्षक को नवीन ज्ञान को पूर्व ज्ञान से संबंधित करके पढ़ाना चाहिए।
6. शिक्षक को चाहिए कि वे विषयवस्तु को मनोवैज्ञानिक क्रम में छात्रों के सामने प्रस्तुत करे जैसे सरल से कठिन, ज्ञात से अज्ञात आदि।
7. शिक्षकों को पढ़ाते समय छात्रों को सामान्य बुद्धि के प्रयोग के अवसर देना चाहिए इससे छात्रों में सामान्य योग्यता का विकास होगा जिससे भविष्य में स्थानान्तरण सरलता से हो सकेगा।
8. शिक्षकों को छात्रों को पूर्व ज्ञान एवं कौशलों को नवीन अधिगम में प्रयोग करने के लिए अभिप्रेरित करना चाहिए।
9. शिक्षकों को छात्रों को अपने ज्ञान का प्रयोग करने के अधिकाधिक अवसर प्रदान करना चाहिए।
10. छात्रों में स्थानान्तरण की योग्यता विकसित करने के लिए शिक्षक को छात्रों में सूझ विकसित करने की चेष्ठा करनी चाहिए। इसके लिए आवश्यक है कि शिक्षक छात्रों के समक्ष समस्या पूर्णरूप से प्रस्तुत करें। इससे सूझ या अन्तर्दृष्टि विकसित होने के अवसर प्रबल होंगे।
11. शिक्षकों को छात्रों में चिन्तन शक्ति का विकास करना चाहिए तभी स्थानान्तरण सफल रूप से हो सकता है।
12. शिक्षक को छात्रों को अर्जित ज्ञान एवं कौशल का उपयोग सामान्य जीवन में करने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए।
13. शिक्षण करते समय शिक्षक को साहचर्य के नियमों का ध्यान रखना चाहिए।
14. मरसेल के अनुसार अवबोध स्थानान्तरण प्रक्रिया को प्रभावित करता है अतः शिक्षक को छात्रों में अवबोध विकसित करने का प्रयास करना चाहिए।
15. शिक्षण प्रक्रिया के दौरान शिक्षक को सैद्धान्तिक ज्ञान एवं व्यवहारात्मक अनुभवों में समन्वय स्थापित करने की चेष्टा करनी चाहिए।
16. शिक्षकों को छात्रों में रटन्त ज्ञान को निरूत्साहित करना चाहिए एवं सोच–समझकर सीखने पर बल देना चाहिए क्योंकि स्थानान्तरण रटन्त ज्ञान का सम्भव नहीं होता।
17. शिक्षकों को छात्रों में मानसिक शक्तियों को अभ्यास द्वारा विकसित करने का प्रयास करना चाहिए। क्योंकि अधिगम स्थानान्तरण मानसिक शक्तियों के विकास द्वारा स्वतः हो जाता है।
18. शिक्षक को छात्रों में ऐसी समझ विकसित करनी चाहिए कि वे सीखे हुए ज्ञान का भविष्य में उपयोग कर सकें।

5.9 सारांश

एक परिस्थिति में अर्जित ज्ञान एवं कौशल का दूसरे कार्य को करने में प्रयोग को अधिगम स्थानान्तरण कहते हैं। अधिगम स्थानान्तरण के विभिन्न प्रकार है, जैसे–धनात्मक, ऋणात्मक, शून्य, क्षैतिज, लम्बवत, द्विपार्शिवक। अधिगम स्थानान्तरण की व्याख्या के लिए मनोवैज्ञानिकों ने अनेक सिद्धान्त दिये है जैसे थार्नडाइक का समरूप तत्वों का सिद्धान्त, जुड का सामान्यीकरण का सिद्धान्त, गेस्टालट का आरोपण का सिद्धान्त, आदि।

अधिगम स्थानान्तरण का शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण स्थान है। विषयवस्तु की समानता, सीखने वाले की सूझ, रूचि, अभिक्षमता, सामान्यीकरण योग्यता, बुद्धि, इच्छा, प्रशिक्षण, योग्यता, आदि कारक अधिगम के स्थानान्तरण को प्रभावित करते हैं। शिक्षक के लिए अधिगम के स्थानान्तरण की प्रक्रिया का ज्ञान शिक्षण प्रक्रिया की सफलता के लिए अन्यन्त लाभप्रद है।

5.10 अभ्यास के प्रश्न

1. अधिगम स्थानान्तरण को परिभाषित कीजिए एवं उसके प्रकारों का उल्लेख कीजिए।
2. अधिगम के स्थानान्तरण में शिक्षक की भूमिका पर प्रकाश डालिए।
3. अधिगम के स्थानान्तरण को किस प्रकार से प्रभावशाली बनाया जा सकता है?
4. अधिगम स्थानान्तरण के विभिन्न सिद्धान्तों की विवेचना कीजिए।
5. अधिगम स्थानान्तरण का शिक्षा के क्षेत्र में क्या महत्व है?
7. सीखने के स्थानान्तरण के विभिन्न रूप कौन से है? उदाहरण द्वारा स्पष्ट कीजिए।

5.11 चर्चा के बिन्दु

1. अधिगम के स्थानान्तरण से क्या अभिप्राय है? सकारात्मक स्थानान्तरण को किस प्रकार विकसित किया जा सकता है? चर्चा कीजिए।
2. अधिगम के स्थानान्तरण का शिक्षा में क्या महत्व है? चर्चा कीजिए।

5.12 बोध प्रश्न के उत्तर

1. अधिगम के स्थानान्तरण का अर्थ है किसी एक परिस्थिति में अर्जित ज्ञान, कौशल, आदतों, विचारों आदि का किसी अन्य परिस्थिति में प्रयोग करना।
2. ब्लेयर, जोन्स एवं सिम्पसन (1962) के अनुसार जब पहले के सीखने का प्रभाव किसी नई अनुक्रिया के निष्पादन या सीखने पर पड़ता है तो उसे सीखने का अन्तरण माना जाता है।
3. अधिगम स्थानान्तरण एक सोद्देश्य क्रिया है जिसमें पहले से सीखे गए ज्ञान, कौशल, अनुभव का प्रभाव नये सीखने पर पड़ता है। यह प्रभाव सहायक अथवा घातक हो सकता है। अधिगम स्थानान्तरण में सामान्यीकरण होता है।
4. स्थानान्तरण छः प्रकार का होता है–धनात्मक स्थानान्तरण, ऋणात्मक स्थानान्तरण, शून्य स्थानान्तरण, क्षैतिज स्थानान्तरण, अनुलम्ब स्थानान्तरण एवं द्विपार्शीय स्थानान्तरण।
5. शिक्षा के क्षेत्र में धनात्मक स्थानान्तरण कार्य करता है।
6. जब शरीर के एक भाग द्वारा सीखा गया कौशल स्वतः दूसरे भाग में स्थानान्तरित हो जाये तो उसे द्विपार्शीय स्थानान्तरण कहते हैं।
7. समरूप तथ्यों का सिद्धान्त थार्नडाइक द्वारा प्रतिपादित सादृश्यता के नियम पर आधारित है।
8. सामान्यीकरण का सिद्धान्त चार्ल्स जुड द्वारा प्रतिपादित है।
9. अधिगम के आरोपण सिद्धान्त के अनुसार व्यक्ति एक परिस्थिति में अर्जित सूझ का प्रयोग दूसरी परिस्थिति की समस्या समाधान करने के लिए करता है अर्थात् स्थानान्तरण सूझ का होता है।
10. अधिगम के अधिक स्थानान्तरण के लिए विषयवस्तु में समानता होना आवश्यक हैं।
11. यदि बालक सीखने के लिए अभिप्रेरित है तो वह अधिगम का स्थानान्तरण सफलतापूर्वक कर पाता है।

5.13 अध्ययन हेतु उपयोगी पुस्तकें

1. चौहान, आर. (2015), शिक्षा मनोविज्ञान, आगरा : अग्रवाल पब्लिकेशन्स
2. सिंह, ए.के. (2013), शिक्षा मनोविज्ञान, पटना : भारती भवन
3. परवीन, ए. (2006), शिक्षण एवं अधिगम के मनोसामाजिक आधार, जयपुर : आस्था प्रकाशन
4. गर्ग, ओ.पी. एवं चतुर्वेदी, एस. (2006), अधिगम का मनोसामाजिक आधार एवं शिक्षा, जयपुर : अपोलो प्रकाशन
5. गुप्ता, एस.पी. एवं गुप्ता ए. (2015), उच्चतर शिक्षा मनोविज्ञान, इलाहाबाद : शारदा पुस्तक भवन।
6. लाल, आर.बी. एवं मानव, आर.एन. (2011), शिक्षा मनोविज्ञान, मेरठ : रस्तोगी पब्लिकेशन्स

इकाई – 6 : अधिगम के उपागम

इकाई की संरचना

6.1 प्रस्तावना

6.2 इकाई के उद्देश्य

6.3 अधिगम के उपागम

- 6.3.1 अधिगम का व्यवहारवादी उपागम
- 6.3.2 अधिगम का संज्ञानात्मक उपागम
- 6.3.3 अधिगम का मानवतावादी उपागम
- 6.3.4 अधिगम का निर्माणवादी उपागम

6.4 सारांश

6.5 अभ्यास के प्रश्न

6.6 चर्चा के बिन्दु

6.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

6.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

6.1 प्रस्तावना

अधिगम प्रक्रिया की जाँच हेतु अनेक सिद्धान्त विकसित हुए। अधिकतर अधिगम सिद्धान्त इस बात पर केन्द्रित है कि अधिगम कैसे होता है? सीखने के विभिन्न तरीके होते हैं जैसे औपचारिक, अनौपचारिक, सामूहिक, व्यक्तिगत आदि। अलग–अलग परिस्थिति में व्यक्ति अलग–अलग तरीके से सीखता है। प्रत्येक परिस्थिति में सीखने का ढंग एक जैसा हो यह आवश्यक नहीं है। प्रस्तुत इकाई में सीखने/अधिगम के मुख्य उपागमों की विवेचना की गई है जैसे–व्यवहारवादी उपागम, संज्ञानात्मक उपागम, मानवतावादी उपागम एवं निर्माणवादी उपागम। अधिकांश अधिगम सिद्धान्त इन्हीं उपागमों के अन्तर्गत आते हैं। व्यवहारवादी उपागम उद्दीपक के प्रति अधिगमकर्ता की अनुक्रिया से संबंधित है। संज्ञानात्मक उपागम ज्ञान एवं ज्ञान के धारण पर आधारित हैं। मानवतावादी उपागम व्यक्ति के अनुभवों की व्याख्या पर आधारित है। इस इकाई में अधिगम में उपागम पर विस्तृत चर्चा की गई हो।

6.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि–

1. व्यवहारवादी उपागम की विशेषताओं का वर्णन कर सकेंगे।
2. अधिगम के संज्ञानात्मक उपागम का उल्लेख कर सकेंगे।
3. मानवतावादी उपागम का उल्लेख कर सकेंगे।
4. निर्माणवादी उपागम की विशेषताओं का वर्णन कर सकेंगे।

6.3 अधिगम के उपागम

अधिगम के अनेक उपागम हैं जो इस प्रकार हैं–

6.3.1 अधिगम का व्यवहारवादी उपागम

व्यवहारवाद का जन्म 1912–1914 में अमेरिका में हुआ। इसके जन्मदाता वॉटसन थे। व्यवहारवाद

मनोविज्ञान का एक ऐसा उपागम है जो इस बात पर आधारित हैं कि व्यवहार का वैज्ञानिक शोध हो सकता है।

व्यवहारवाद की मुख्य मान्यता है कि सभी प्रकार के व्यवहार संगति या पुर्नबलन के द्वारा वातावरण से निर्धारित होते हैं। यह उपागम इस विचार पर आधारित है कि अधिगमकर्ता अपने वातावरण में प्रस्तुत उद्दीपक पर अनुक्रिया करता है। वातावरण में जब कोई समस्या उद्दीपक के रूप में व्यक्ति के सामने आती है तो व्यक्ति उस समस्या रूपी उद्दीपक के समाधान हेतु विभिन्न अनुक्रियाएँ करता है। उन विभिन्न अनुक्रियाओं में से सही अनुक्रिया द्वारा इस समस्या का समाधान हो जाता हैं अतः व्यक्ति सही अनुक्रिया एवं उद्दीपक के बीच एक संबंध स्थापित करता है जिसे सीखना कहते हैं। अतः सीखने के दौरान अधिगमकर्ता को प्रासंगिक एवं उपयोगी उद्दीपक प्रदान किये जाने चाहिए ताकी वह उन उद्दीपकों के प्रति अनुक्रिया कर सकें और ज्ञान एवं अनुभव प्राप्त कर लाभांवित हो अधिगम प्राप्त कर सकें।

व्यवहारवादी उपागम के अनुसार अधिगम अनुबंधन के परिणाम स्वरूप होता है। अधिगम का व्यवहारवादी उपागम इस बात पर केन्द्रित है कि उपयुक्त व्यवहार, किसी कार्य के लगातार दुहराव एवं सीखाने वाले की प्रतिक्रिया के द्वारा सीखाया जा सकता है। कुछ मनोवैज्ञानिकों का विचार है कि, व्यक्ति उपयुक्त व्यवहार, उद्दीपक–अनुक्रिया के बीच संबंध की बारंबारता के आधार पर सीखता है जब व्यक्ति किसी उद्दीपक के प्रति कोई व्यवहार या अनुक्रिया को बार–बार करता है तो व्यक्ति उस व्यवहार/अनुक्रिया को उद्दीपक के साथ संबंधित कर लेता है जिसे सीखना कहते हैं। इस विचार के अन्तर्गत गुथरी, वाटसन आदि के अधिगम के सिद्धान्त आते हैं। कुछ मनोवैज्ञानिकों का मत है कि उपयुक्त व्यवहार का अधिगम पुर्नबलन के द्वारा होता है। जब व्यक्ति किसी उद्दीपक के प्रति कोई अनुक्रिया या व्यवहार करता है और उसे पुनर्बलन मिलता है तो व्यक्ति उस व्यवहार या अनुक्रिया को उद्दीपक के साथ संबंधित कर लेता है जिसे सीखना कहते हैं। पुनर्बलन से तात्पर्य उस उद्दीपक से है जो किसी अनुक्रिया की भविष्य में होने की संभावना को बढ़ाता है। पुनर्बलन दो प्रकार का हो सकता है–धनात्मक पुनर्बलन जैसे–पुरस्कार, प्रशंसा, भोजन आदि एवं ऋणात्मक पुनर्बलन जैसे ढंड, निन्द्रा, आदि।

धनात्मक पुनर्बलन सफलता को पुर्नबलित एवं प्रोत्साहित करता है जबकि ऋणात्मक पुनर्बलन आवांछित व्यवहार एवं गलतियों के दुहराने को हतोत्साहित करता है। इस मत के अन्तर्गत थार्नडाइक, पैवलव, स्कीनर, हल आदि के अधिगत के सिद्धान्त आते हैं।

1927 में इवान पॉवलव ने बहुत ही प्राख्यात प्रयोग किया। पैवलाव एक कुत्ते को प्रतिदिन एक निश्चित समय पर भोजन दिया करता था। भोजन को देखते ही कुत्ते के मुँह से लार टपकने लगता था। कुछ प्रयासों के बाद पॉवलाव भोजन (स्वाभाविक उद्दीपक) देने से पहले घण्टी (अस्वाभाविक उद्दीपक) बजाने लगा। इसके फलस्वरूप कुत्ता घण्टी बजने पर भी लार टपकाने लगा। इस प्रकार पॉवलाव ने भोजन देखकर लार टपकाने की स्वाभाविक क्रिया को घण्टी (अस्वाभाविक उद्दीपक) से सम्बद्ध कर दिया। कुत्ते ने सीख लिया कि घण्टी बजने का अर्थ है भोजन का मिलना। इस प्रकार कुत्ते ने घण्टी की आवाज और भोजन के मध्य साहचर्य स्थापित किया। दूसरे शब्दों में, सीखा गया व्यवहार तथ्यों के अनुक्रम के अनुभवों के परिणाम स्वरूप होता है न कि चेतन विचार प्रक्रिया के द्वारा। इस तरह से पॉवलव ने शास्त्रीय अनुबंधन की खोज की। अनुबंधन का अर्थ है अस्वाभाविक उद्दीपक के प्रति स्वाभाविक अनुक्रिया करना। इस अनुबंधन का प्रयोग क्रिया को उत्पन्न करने में प्रयोग में लाया जा सकता है।

उद्दीपक अनुक्रिया के बीच की संगति को पुर्नबलन के द्वारा अधिक प्रभावशाली बनाया जा सकता है। स्कीनर (1957) ने अपने क्रिया–प्रसूत अनुबंधन सिद्धान्त में पुनर्बलन पर बल दिया है। स्कीनर ने चूहों पर प्रयोग किया। उनके प्रयोग में एक भूखे चूहे को बाक्स में रख दिया गया। चूहे से एकाएक बाक्स का लीवर दब जाता है और उसे भोजन मिल जाता है। इस कारण से चूहा खाना प्राप्त करने के लिए लीवर दबाना सीख लेता है। भोजन यहाँ पुनर्बलन के रूप में है जिसके प्राप्त होने के कारण चूहे की लीवर दबाने की सम्भावना बढ़ जाती है। पुनर्बलन धनात्मक एवं ऋणात्मक दोनों रूप में कार्य कर सकता है। धनात्मक पुनर्बलन वांछित अनुक्रिया के होने की प्रायिकता को बढ़ाता है।

शिक्षण एवं प्रशिक्षण के दौरान अधिगम के लिए व्यवहारवादी उपागम को उपयोग करने का मुख्य तरीका यह है कि अधिगम प्रक्रिया शुरु होने से पहले ही व्यवहारिक उद्देश्य स्पष्ट कर देने चाहिए फिर उसके बाद अधिगम अवसर प्रदान करने चाहिए जिससे की उद्देश्य पूर्ति हो सके।

अधिगम के व्यवहारवादी उपागम की मान्यताएँ

- व्यवहारवादी सभी व्यवहार को उद्दीपक के प्रति अनुक्रिया मानते हैं।
- व्यवहारवादियों का मानना है कि हम जो भी कार्य करते हैं वह हमारे वातावरण के द्वारा ही निर्धारित होता है। हमारा वातावरण ही हमें उद्दीपक प्रदान करता है जिसके प्रति हम अनुक्रिया करते हैं एवं अनुक्रिया करना सीखते हैं।
- व्यवहारवादियों का मानना है कि व्यवहार की व्याख्या के लिए आंतरिक मानसिक प्रक्रिया के बारे में सोचना आवश्यक नहीं है। व्यवहार की व्याख्या करने के लिए सिर्फ यह जानना आवश्यक है कि अनुक्रिया किस उद्दीपक के कारण होती है या कौन सा उद्दीपक किस अनुक्रिया को जन्म देता है।
- व्यवहारवादियों का मानना है कि व्यक्ति कुछ जन्मजात प्रतिवर्त के साथ पैदा होता है जिसे उसे सीखने की आवश्यकता नहीं होती। व्यक्ति जटिल व्यवहारों को वातावरण के साथ अन्तः क्रिया के परिणामस्वरूप सीख लेता है।
- व्यवहारवादी यह भी मानते हैं कि सीखने की प्रक्रिया सभी में एक समान ढंग से होती है चाहे वह जानवर हो या इन्सान।
- व्यवहारवादियों का मानना है कि सभी प्रकार का व्यवहार पुनर्बलन या संगति के कारण होते है।

व्यवहारवादियों के अनुसार मानव व्यवहार की व्याख्या

व्यवहारवादी व्यवहार की व्याख्या दो संदर्भ में करते है–पहला उद्दीपक के संदर्भ में दूसरा उस परिस्थिति के संदर्भ में जिसके कारण व्यक्ति उस उद्दीपक के प्रति अनुक्रिया करना सीखता है। व्यवहारवादी उपागम के अनुसार अधिगम अनुबंधन के परिणामस्वरूप होता है। व्यक्ति किस प्रकार से सीखता है इसकी व्याख्या करने के लिए व्यवहारवादियों ने दो प्रक्रिया का प्रयोग किया है – शास्त्रीय अनुबंधन एवं क्रियाप्रसूत अनुबंधन। शास्त्रीय अनुबंधन में, व्यक्ति एक साथ घटित हुए दो उद्दीपकों के बीच संगति बनाना सीखता है। इस सीखने के कारण व्यक्ति वास्तविक उद्दीपक पर की गई अनुक्रिया को दूसरे उद्दीपक पर भी स्थानान्तरित करने लगता है। उदाहरणार्थ : बालक किसी प्रकार की तेज ध्वनी पर दुश्चिंता भरी अनुक्रिया करता है, अगर उस ध्वनी के साथ बालक को चूहा दिखाया जाये तो बालक चूहे को देखकर भी वैसी ही अनुक्रिया करने लगता है।

क्रिया प्रसूत अनुबंधन में, व्यक्ति अपने किये गये कार्य के परिणामस्वरूप नये व्यवहार को करना सीख लेता है। अगर व्यक्ति द्वारा किये गये व्यवहार पर उसको धनात्मक पुर्नबलन मिलता है तो भविष्य में उस व्यवहार के होने की प्रायिकता बढ़ जाती है। इसके विपरीत, अगर व्यक्ति द्वारा किये गये व्यवहार पर उसको ऋणात्मक पुर्नबलन मिलता है तो भविष्य में उस व्यवहार के विपरीत व्यवहार के होने की प्रायिकता बढ़ जाती है।

शास्त्रीय अनुबंधन व्यक्ति को नये उद्दीपक पर अनुक्रिया करना सीखाता है और क्रियाप्रसूत अनुबंधन व्यक्ति को नये व्यवहार सीखने में मदद करता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. व्यवहारवाद का जन्म कब, कहाँ और किसके द्वारा हुआ?

....

....

2. व्यवहारवादी चिन्तन धारा की मुख्य मान्यता क्या है?

....

....

3. पुनर्बलन से क्या तात्पर्य है?

....

....

4. अनुबन्धन क्या है?

....

....

6.3.2 अधिगम का संज्ञानात्मक उपागम

संज्ञानात्मक उपागम मनोविज्ञान का ऐसा उपागम है जो मानव की मानसिक प्रक्रिया के अध्ययन से संबंधित हैं। संज्ञानात्मक उपागम, मनुष्य के द्वारा सूचनाओं का संसाधन कैसे होता है इस बात पर बल देता है। अधिगम का संज्ञानात्मक उपागम अधिगम को एक आन्तरिक एवं जटिल प्रक्रिया मानता है जिसमें सूचनाएं व्यक्ति के संज्ञानात्मक या बौद्धिक संरचना में एकीकृत हो जाती है। व्यवहारवादी अवधारणा के तहत सीखने को अधिगमकर्ता के बाहरी व्यवहारों के रूप में देखा गया है। जबकि संज्ञानात्मक अवधारणा के अनुसार अधिगम आन्तरिक परिवर्तन है जो अधिगमकर्ता में समस्या–समाधान क्षमता विकसित करता है जिससे व्यक्ति में नवीन सोच, विश्वास एवं दृष्टि विकसित होती है। अधिगम सूचनाओं के आन्तरिक संसाधन के कारण होता है। संज्ञानात्मक दृष्टि से अधिगम के लिए नई सूचना किस प्रकार से प्रस्तुत की जाती है महत्वपूर्ण है।

संज्ञानवादियों की पहली पीढ़ी ने अधिगम प्रक्रिया में सूझ या अन्तदृष्टि का प्रयोग किया एवं बाद के संज्ञानवादियों ने सीखने की प्रक्रिया में सूचना संसाधन का प्रयोग किया जिसमें अधिगमकर्ता में अपने और अपने वातावरण के बारे में सूझ बूझ, अवबोध एवं गहन सोच विकसित होती है। संज्ञानात्मक उपागम के अनुसार, सीखने के तीन चरण होते हैं – सीखने का पहला चरण या सीखने का संज्ञानात्मक चरण, सीखने का दूसरा चरण या सीखने का नियतन चरण एवं सीखने का तीसरा चरण या सीखने का स्वचालित चरण। सीखने के प्रथम चरण या संज्ञानात्मक चरण में अधिगमकर्ता कार्य को समग्र रूप में समझता है। दूसरे चरण या नियतन चरण में अधिगमकर्ता कार्य को करने के कौशल सीखता है। तीसरे चरण में अधिगमकर्ता आत्मविश्वास एवं सक्षमता के साथ कार्य को करना सीखता है।

सीखने के संज्ञानात्मक उपागम के अर्न्तगत गेस्टाल्ट मनोवैज्ञानिक आते हैं जैसे कोहलर, कोफ्का, जिन्होंने प्रसिद्ध सीखने के सूझ के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। इस सिद्धान्त के अनुसार व्यक्ति सूझ या अंतर्दृष्टि के द्वारा सीखता है। जब भी व्यक्ति किसी कार्य, विषय या पाठ को सीखता है तो वह सीखने से संबंधित परिस्थिति के हर पहलू का प्रत्यक्षीकरण करता है और पूरी परिस्थिति को समझने की कोशिश करता है। प्रत्यक्षीकरण के दौरान व्यक्ति परिस्थिति के विभिन्न पहलुओं के आपसी संबंधों को समझता है और अचानक उसमें सूझ या अन्तर्दृष्टि उत्पन्न होती है। सूझ या अन्तर्दृष्टि का अर्थ है संबंध देखना, परिस्थिति को नये ढंग से समझना एवं नवीन संज्ञानात्मक संरचना विकसित करना। सूझ उत्पन्न होने से व्यक्ति तुरन्त सही अनुक्रिया करता है और वह सही अनुक्रिया करना सीख लेता है। अतः सीखना, सूझ विकसित होने के कारण होता है, सूझ अचानक विकसित होती है, और इसके लिए अभ्यास की आवश्यकता नहीं होती। अधिगम में सूझ/अन्तःदृष्टि के विशिष्ट स्थान की पुष्टि हेतु कोहलर ने चिम्पैंजी पर एक प्रयोग किया। चिम्पैंजी को एक पिंजरे में रखा गया और पिंजरे की छत पर केला लटकाया गया। केला इतना ऊँचा था कि चिम्पैंजी छलाँग लगा कर भी उसे प्राप्त नहीं कर सकता था। उसी पिंजरे में एक संदूक भी रखा था। चिप्पैंजी ने केला को उछल कर प्राप्त करने के कुछ असफल प्रयास किये। फिर उसने संदूक को केले के नीचे रखा और उसपर चढ़ कर केला प्राप्त कर लिया। अर्थात् चिम्पैंजी ने केले की ऊँचाई और संदूक के संबंध को समझा और अपने लक्ष्य तक पहुँच गया। इससे यह स्पष्ट है कि चिम्पैंजी में अन्तःर्दृष्टि का विकास हुआ जिससे उसने केले तक पहुँचने का रास्ता सीख लिया।

संज्ञानात्मक उपागम के अन्तर्गत पियाजे का अधिगम संबंधी विकासात्मक सिद्धांत भी आता है। पियाजे ने अधिगम को प्रक्रियाओं द्वारा घटित परिणाम के रूप में लिया है। ब्रूनर का अन्वेषणात्मक अधिगम भी संज्ञानात्मक उपागम के ही अन्तर्गत आता है। ब्रूनर के अनुसार अधिगम में अधिगमकर्ता को समस्यात्मक परिस्थिति से सामना कराया जाना चाहिए जिसमें वह समाधान के विभिन्न विकल्प स्वयं खोजे। ब्रूनर की दृष्टि से, अधिगम हेतु, अधिगमकर्ता के लिए समस्यात्मक परिस्थिति एक चुनौती या उद्दीपक की तरह होती है जो अधिगमकर्ता को क्रिया करने के लिए उन्मुख करती है। समस्या समाधान हेतु अधिगमकर्ता विभिन्न विकल्प ढूँढ़ता है जिसमें उसकी सक्रियता बनी रहती है। विभिन्न विकल्पों के बारे में प्रतिपुष्टि के आधार पर अधिगमकर्ता समस्या समाधान की ओर बढ़ता है और समस्या का हल प्राप्त करता है।

लेविन के क्षेत्र सिद्धांत के अनुसार, अधिगम एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा किसी परिस्थिति में व्यक्ति की आवश्यकताओं के संदर्भ में किसी लक्ष्य की प्रप्ति हेतु व्यक्ति के जीवन दायरे की संज्ञानात्मक संरचना में अपेक्षित परिवर्तन लाये जाते हैं। दूसरे शब्दों में सीखना एक सापेक्षिक प्रक्रिया है जिसके माध्यम से अधिगमकर्ता में नवीन अन्तर्दृष्टि का विकास होता है अथवा पहले की अन्तर्दृष्टि में परिवर्तन होता है।

संज्ञानात्मक उपागम के अनुसार, अधिगम से तात्पर्य है संज्ञानात्मक संरचना में परिवर्तन होना। संज्ञानात्मक संरचना का अर्थ है व्यक्ति की अपने मनोवैज्ञानिक, भौतिक एवं सामाजिक परिवेश के परिप्रेक्ष्य में होती तबदीली। संज्ञानात्मक परिप्रेक्ष्य में अधिगम, एक सक्रिय, गतिशील एवं आंतरिक प्रक्रिया है जिसमें अधिगमकर्ता की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। संज्ञानवादी यह मानते है कि अधिगम हेतु संज्ञानात्मक प्रयास एवं उचित सम्प्रत्यात्मक अवबोध होना आवश्यक हैं। संज्ञानात्मक दृष्टि से अधिगम वाह्य व्यवहार से विज्ञापित न होकर आन्तरिक क्षमता से बदलाव के जरिए प्रदर्शित होता है। आंतरिक क्षमता में बदलाव व्यक्ति की संज्ञानात्मक संरचना में बदलाव के कारण होता है। अधिगम के लिए संज्ञानात्मक प्रयत्न तथा बोधात्मक विवेक की आवश्यकता होती है।

अधिगम के संज्ञानात्मक उपागम की विशेषताएँ

संज्ञानात्मक उपागम की विशेषताएँ निम्नलिखित है–

- प्रारम्भ में संज्ञानवादियों ने अधिगम के लिए सूझ या अन्तर्दृष्टि पर बल दिया एवं बाद में संज्ञानवादियों ने मनुष्य की मानसिक प्रक्रियाओं को अधिक महत्व दिया।
- संज्ञानात्मक उपागम, अधिगम को सक्रिय व गतिशील मानता है।
- संज्ञानात्मक उपागम अधिगम में अवबोध को महत्व देता है।
- इस उपागम के अन्तर्गत अधिगम, संज्ञानात्मक संरचना में आया परिवर्तन है। अधिगमकर्ता के अवबोधनों का संसाधन, विभेदीकरण, सामान्यीकरण तथा पुनर्संरचना के द्वारा होती है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

5. संज्ञानात्मक उपागम के अनुसार सीखने के कितने चरण हैं?

....

....

6. गेस्टाल्ट के अनुसार सीखने का मुख्य आधार क्या है?

....

....

7. अन्वेषणात्मक अधिगम किसके द्वारा प्रतिपादित है?

....

....

6.3.3 अधिगम का मानवतावादी उपागम

मानवतावादी उपागम 20वीं सदी के अन्तिम दशकों में उजागर हुआ। मनोविज्ञान का मानवतावादी उपागम, एक गतिशील, व्यापक एवं उदारवादी दृष्टि का परिसूचक है। मानवतावादी उपागम मनुष्य की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा एवं क्षमता पर आधारित है।

मानवतावादी उपागम में कार्ल रोजर्स एवं अब्राहम मॉसलो के सिद्धान्त सम्मिलित है। सीखने के मानवतावादी उपागम का मानना है कि सीखना, अवलोकन का परिणाम है। व्यक्ति दूसरों के व्यवहार का अवलोकन करता है और उस व्यवहार के परिणाम का अवलोकन करता है और इसके परिणामस्वरूप वह सीखता है अर्थात व्यक्ति अवलोकन करके सीखता है। अधिगम के मानवतावादी उपागम के अनुसार अधिगम तब तक संभव नहीं है जब तक ज्ञानात्मक एवं भावात्मक पक्ष साथ न हो अर्थात अधिगम हेतु ज्ञानात्मक एवं भावात्मक पक्ष दोनों का साथ होना आवश्यक है। मानवतावादी दृष्टिकोण के अनुसार व्यक्ति में आत्म–निर्भरता की क्षमता होना महत्वपूर्ण है।

मानववादी उपागम की यह मान्यता है कि सीखने में संवेग एवं अनुभूति महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यह उपागम सृजनात्मकता एवं इच्छा को अधिगम प्रक्रिया को बढ़ाने वाला कारक मानते हैं।

कार्ल रोजर्स के अनुसार, अधिगम प्राप्ति हेतु अधिगमकर्ता को सीखने की आजादी होनी चाहिए साथ ही साथ अधिगमकर्ता को यह भी बताना चाहिए कि कैसे सीखा जाए तथा सीखने की प्रक्रिया में मार्गदर्शन भी उपलब्ध होना चाहिए। अधिगम के लिए अधिगम–अनुभवों का सुव्यवस्थित होना आवश्यक है। रोजर्स के अनुसार, मानवीय अधिगम में अधिगमकर्ता जिन समस्याओं को वास्तविक मानता है, उन्हीं से जुड़ी हुई अधिगम प्रक्रियाओं को सृजित करता है, इसे स्व–चालित अधिगम कहते हैं। अतः इस अधिगम में दो बातें महत्वपूर्ण है प्रथम, समस्या, अधिगमकर्ता के अनुसार वास्तविक हो और द्वितीय, अधिगमकर्ता द्वारा समस्या का सामना करना।

अब्राहम मॉसलो का आवश्यकता अधिक्रम या जिसे अभिप्रेरण संबंधी संकल्पना भी कहते हैं, अधिगम के मानवतावादी परिप्रेक्ष्य को एक आयाम देता है। मॉसलो का सिद्धान्त इस तथ्य पर आधारित है कि अनुभव, मानव व्यवहार एवं अधिगम का प्राथमिक तथ्य है। मॉसलों के अनुसार मानव व्यवहार पाँच प्रकार की आवश्यकताओं से अभिप्रेरित होता है, जिनमें कुछ आवश्यकताएँ अधिक महत्वपूर्ण होती है। यह आवश्यकताएँ है– शारीरिक आवश्यकता, सुरक्षा की आवश्यकता, सम्बद्धता एवं स्नेह की आवश्यकता, सम्मान की आवश्यकता, आत्मसिद्धि की आवश्यकता। मॉसलो का मानना है कि अधिगम के लिए पहले आधारभूत आवश्यकताओं का संतुष्ट होना जरूरी है उसके बाद उच्चस्तरीय आवश्यकता प्रभावी होती है अर्थात अधिगम के लिए व्यक्ति की आवश्यकता महत्वपूर्ण होती है। व्यक्ति अपनी विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्रयास करता है जिसके परिणामस्वरूप उसे विभिन्न अनुभव प्राप्त होते हैं और ये अनुभव ही अधिगम के स्रोत बनते हैं। मासलो के अनुसार अधिगम का मुख्य उद्‌देश्य आत्मसिद्धि प्राप्त करना है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

8. मानवतावादी उपागम के अनुसार सीखना कैसे होता है?

....

....

9. आवश्यकता अधिक्रम सिद्धान्त किसके द्वारा प्रतिपादित है?

....

....

10. मॉसलो के अनुसार अधिगम का मुख्य उद्देश्य क्या है? ....

6.3.4 अधिगम का निर्माणवादी उपागम

निर्माणवादी उपागम वर्तमान समय में सर्वाधिक प्रचलित उपागम है। निर्माणवादी उपागम, मनोविज्ञान का ऐसा उपागम है जो इस बात पर बल देता है कि व्यक्ति हमेशा अर्थ के निर्माण के लिए सक्रिय रहता है अर्थात व्यक्ति हमेशा सक्रिय रूप से अपने लिए बातों के अर्थ, ज्ञान का निर्माण करता रहता है। निर्माणवाद, अधिगम का एक ऐसा दृष्टिकोण है जो इस मान्यता पर आधारित है कि ज्ञान कोई वस्तु नहीं है जो शिक्षक द्वारा प्रदान की जा सकती है। बल्कि अधिगमकर्ता ज्ञान का निर्माण खुद सक्रिय मानसिक प्रक्रिया द्वारा करता है। अधिगमकर्ता ज्ञान एवं अर्थ के निमार्णकर्ता होते हैं।

अधिगम का निर्माणवादी उपागम, अधिगम प्रक्रिया में अधिगमकर्ता को अधिक महत्व देता है। इस उपागम के अनुसार अधिगम प्रक्रिया में अधिगमकर्ता अपने लिए प्रत्ययों का निर्माण करता है और समस्या समाधान के लिए उपाय खोजता है। प्रत्यय निर्माण व्यक्ति के अनुभव के आधार पर होते हैं। निर्माणवादी उपागम का मानना है कि सीखना मानसिक संरचना के निर्माण का परिणाम है जिसमें अधिगमकर्ता नयी सूचना को पुरानी सूचना से अर्थपूर्ण रूप से जोड़ता है। अतः निर्माणवादी उपागम के अनुसार, सीखना अधिगमकर्ता की पृष्ठभूमि, विश्वास एवं मनोवृत्ति से प्रभावित होता है।

निर्माणवादी उपागम का यह मानना है कि सीखना एक सक्रिय सामाजिक प्रक्रिया है। सीखने की प्रक्रिया अधिगमकर्ता का अन्य लोगों से संबंध जैसे परिवार, संगी–साथी शिक्षण आदि पर निर्भर करता है। सीखते समय शरीर एवं मस्तिष्क दोनों का सक्रिय होना आवश्यक है। सीखने की प्रक्रिया में भाषा निहित होती है। सीखना हमेशा किसी परिप्रेक्ष्य में होता है, अधिगमकर्ता अपने पूर्व ज्ञान, विश्वास, भय आदि के संबंध में नयी–चीज़ सीखता है। सीखने के लिए ज्ञान आवश्यक है। अधिगमकर्ता के पास जितना अधिक ज्ञान होगा वह उतना ही अधिक सीख सकेगा। निर्माणवादी उपागम अभिप्रेरणा को सीखने का मुख्य तत्व मानता है।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में निर्माणवाद भाषा अधिगम को सबसे अधिक सहयोग देने वाला उपागम है। शिक्षा मनोविज्ञान के क्षेत्र में निर्माणवाद का सबसे महत्वपूर्ण योगदान है– बाल–केन्द्रित शिक्षा जो कि शिक्षण प्रक्रिया में अधिगमकर्ता की स्वायत्तता पर बल देता है।

निर्माणवादी उपागम की विशेषताएं

- अधिगमकर्ता अपने ज्ञान का निर्माण खुद करता है।
- सभी प्रकार का अधिगम विचारों की वैधता शंका के साथ प्रारम्भ होता है।
- सर्वोत्तम अधिगम तब प्राप्त होता है जब वह मानव विकास की अवस्थाओं के साथ संगत हो।
- अधिगम, पूछताछ करने, खोज करने, कार्य करने, अन्वेषण करने की अनुभव आधारित प्रक्रिया है।
- अधिगम एक सक्रिय प्रक्रिया है जिसमें अधिगमकर्ता संवेदी input का प्रयोग करके अर्थ का निर्माण करता है।
- अधिगम की प्रक्रिया में अर्थ का निर्माण मानसिक प्रक्रिया है।
- अधिगम सामाजिक क्रिया है।
- अधिगम सन्दर्भजन्य होता है।
- अधिगम में प्रेरणा महत्वपूर्ण कारक है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

11 निर्माणवाद ने सीखने को किस प्रकार परिभाषित किया है?

....

....

12 निर्माणवादियों के अनुसार सीखने का मुख्य तत्व क्या है?

....

....

6.4 सारांश

अधिगम की व्याख्या विभिन्न उपागमों के द्वारा की गई है। अधिकतर अधिगम सिद्धान्त इन्हीं उपागम के अन्तगर्त आते हैं। अधिगम का व्यवहारवादी उपागम उद्दीपक के प्रति अधिगमकर्ता की अनुक्रिया से संबंधित है। इस उपागम के अनुसार सीखना बारम्बारता अथवा पुनर्बलन के कारण होता है। संज्ञानात्मक उपागम सीखने में सूझ या अन्तर्दृष्टि पर बल देता है। यह उपागम ज्ञान एवं ज्ञान के धारण पर आधारित है। मानवतावादी उपागम अधिगम में अनुभवों के महत्व पर बल देता है। निमार्णवादी उपागम के अनुसार व्यक्ति अपने लिए ज्ञान का निर्माण खुद करता है।

6.5 अभ्यास के प्रश्न

1. अधिगम के व्यवहारवादी उपागम की मान्यताओं का उल्लेख कीजिए।
2. व्यवहारवादियों के अनुसार मानव व्यवहार की व्याख्या कीजिए।
3. अधिगम के संज्ञानात्मक उपागम की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
4. कार्ल रोजर्स एवं अब्राहम मॉसलो के अनुसार अधिगम प्राप्ति कैसे होती है?

6.6 चर्चा के बिन्दु

1. अधिगम के निर्माणवादी उपागम क्या है? चर्चा कीजिए।
2. संज्ञानात्मक उपागम के अनुसार सीखने की प्रक्रिया पर चर्चा कीजिए।

6.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. व्यवहारवाद का जन्म 1912–1914 में अमेरिका में वाट्सन के द्वारा हुआ।
2. व्यवहारवादी चिन्तनधारा की मुख्य मान्यता है कि सभी प्रकार के व्यवहार संगति या पुनर्बलन के द्वारा वातावरण से निर्धारित होते हैं।
3. पुर्नबलन से तात्पर्य उस उदीपक से है जो किसी अनुक्रिया की भविष्य में होने की संभावना को बढ़ाता है।
4. किसी अस्वाभाविक उदीपक के प्रति स्वाभाविक अनुक्रिया करना ही अनुबन्धन है।

5. संज्ञानात्मक उपागम के अनुसार सीखने के तीन चरण है—संज्ञानात्मक चरण, नियतन चरण एवं स्वाचालित चरण
6. गेस्टाल्ट के अनुसार सीखने का मुख्य कारण सूझ या अन्तर्दृष्टि का विकास है।
7. अन्वेषणात्मक अधिगम ब्रूनर द्वारा प्रतिपादित है।
8. मानवतावादी उपागम के अनुसार सीखना अवलोकन के द्वारा होता है। व्यक्ति दूसरे के व्यवहार का अवलोकन करता है और सीखता है।
9. आवश्यकता अधिक्रम सिद्धान्त अब्राहम मॉसलो द्वारा प्रतिपादित है।
10. मासलो के अनुसार अधिगम का मुख्य उद्देश्य आत्मसिद्धि की प्राप्ति है।
11. निमार्णवाद के अनुसार सीखना मानसिक संरचना के निर्माण का परिणाम है जिसमें अधिगमकर्ता नयी सूचना को पुरानी सूचना से अर्थपूर्ण ढंग से जोड़ता है।
12. निर्माणवादियों के अनुसार सीखने का मुख्य तत्व अभिप्रेरणा है।

6.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. पाण्डेय, के.पी. (2005), नवीन शिक्षा मनोविज्ञान, वाराणसी : विश्वविद्यालय प्रकाशन।
2. परवीन, ए. (2006), शिक्षण एवं अधिगम के मनो—सामाजिक आधार, जयपुर : आस्था प्रकाशन।

खण्ड 03 : शिक्षण की प्रकृति

खण्ड परिचय

प्रस्तुत खण्ड में अधिगम और शिक्षण पर चर्चा करेंगे। इस खण्ड के अन्तर्गत शिक्षण की अवधारणा, शिक्षण स्तर, शिक्षण की अवस्थाओं, शिक्षण कौशल, सूक्ष्म शिक्षण एवं शिक्षण की अवस्थाओं में शिक्षक की भूमिका एवं उनके कार्यों की चर्चा की जायेगी। शिक्षण–प्रशिक्षण के विद्यार्थियों को इन प्रत्ययों से परिचित होना अति आवश्यक है। अधिगम एवं शिक्षण से सम्बन्धित उपरोक्त प्रकरणों की चर्चा तीन इकाईयों में विभक्त करके किया जायेगा, जिनका विवरण निम्नवत् है–

ईकाई– 7 में शिक्षण की अवधारणा, शिक्षण के विभिन्न प्रकारों (एकतन्त्रात्मक, प्रजातन्त्रात्मक, एवं हस्तक्षेपरहित शिक्षण), शिक्षण के विभिन्न स्तरों (स्मृति स्तर, अवबोध स्तर एवं चिंतन स्तर), शिक्षण के विभिन्न अवस्थाओं (पूर्व–क्रिया अवस्था, अन्तःक्रिया अवस्था एवं पश्च–क्रिया अवस्था) को विवेचित किया गया है।

ईकाई– 8 में शिक्षण कौशल की परिभाषा, विशेषताएँ, शिक्षण के विभिन्न कौशल, सूक्ष्म शिक्षण की अवधारणा, इतिहास, परिभाषा, आवश्यकता, विशेषताओं, मान्यताओं, सिद्धांतों, प्रक्रियाओं, प्रयुक्त प्रविधियों, सूक्ष्म शिक्षण चक्र एवं सूक्ष्म शिक्षण के भारतीय प्रतिरूप को विवेचित किया गया है।

ईकाई– 9 में शिक्षण के पूर्व क्रिया अवस्था, अन्तःक्रिया अवस्था एवं पश्च क्रिया अवस्था में शिक्षकों की भूमिका एवं उस दौरान शिक्षकों के द्वारा किये जाने वाले कार्यों को विस्तार से विवेचित किया गया है।

इकाई– 7 : शिक्षण : अवधारणा, स्तर तथा अवस्थाएं

इकाई की संरचना

7.1 प्रस्तावना

7.2 इकाई के उद्देश्य

7.3 शिक्षण की अवधारणा

7.3.1 शिक्षण की परिभाषाएँ

7.4 शिक्षण के चर

7.4.1 शिक्षण प्रक्रिया विश्लेषण

7.5 शिक्षण के प्रकार/शिक्षण प्रणाली

7.5.1 एकतन्त्रात्मक शिक्षण

7.5.2 प्रजातंत्रात्मक शिक्षण

7.5.3 हस्तक्षेपरहित शिक्षण

7.6 शिक्षण के स्तर

7.7 स्मृति स्तर शिक्षण

7.8 स्मृति स्तर शिक्षण के प्रतिमान, कमियाँ तथा सुझाव

7.8.1 स्मृति स्तर शिक्षण प्रतिमान

7.8.2 स्मृति स्तर शिक्षण की कमियाँ

7.8.3 स्मृति स्तर शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के सुझाव

7.9 अवबोध स्तर शिक्षण

7.9.1 अवबोध स्तर शिक्षण का अर्थ

7.9.2 अवबोध स्तर शिक्षण का प्रतिमान

7.10 अवबोध स्तर शिक्षण की विशेषताएँ, कमियाँ तथा सुझाव

7.10.1 अवबोध स्तर शिक्षण की विशेषताएँ

7.10.2 अवबोध स्तर शिक्षण की कमियाँ

7.10.3 अवबोध स्तर के शिक्षण को सफल बनाने हेतु सुझाव

7.11 चिंतन स्तर शिक्षण

7.12 चिंतन स्तर शिक्षण का प्रतिमान

7.13 चिंतन स्तर शिक्षण की कमियाँ तथा सुझाव

7.13.1 चिंतन स्तर शिक्षण की कमियाँ

7.13.2 चिंतन स्तर के शिक्षण के लिए सुझाव

7.14 शिक्षण की अवस्थाएँ

7.14.1 पूर्व–क्रिया अवस्था

7.14.2 अन्तःक्रिया अवस्था

7.14.3 उत्तर क्रिया अवस्था

7.15 सारांश

7.16 अभ्यास के प्रश्न

7.17 चर्चा के बिन्दु

7.18 बोध प्रश्नों के उत्तर

7.19 कुछ उपयोगी पुस्तकें

7.1 प्रस्तावना

शिक्षण, शैक्षिक प्रक्रिया का मुख्य अंग है, यह वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से शिक्षा की औपचारिक अवधारणा पूर्ण होती है। शिक्षण के माध्यम से औपचारिक ज्ञान प्रदान किया जाता है। इसका प्रमुख उद्देश्य विषय ज्ञान प्रदान करना है, परन्तु साथ ही साथ यह सामाजिक मूल्यों के विकास में भी सहायक है।

शिक्षण कार्य विभिन्न स्तरों पर किया जाता है क्योंकि शिक्षण सीखने वाले (विद्यार्थियों) के स्तर पर आधारित होता है, साथ ही शिक्षण की विभिन्न अवस्थाएँ होती है, शिक्षक इन अवस्थाओं से गुजरते हुए शिक्षण की प्रक्रिया को पूर्ण करता है।

अधिगम एवं शिक्षण की यह 7वीं इकाई है। इस इकाई में शिक्षण, शिक्षण की अवधारणा, शिक्षण के स्तर एवं शिक्षण की अवस्थाओं का विस्तृत वर्णन किया गया है। इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आपको शिक्षण, शिक्षण की अवधारणा, शिक्षण के स्तर एवं शिक्षण की अवस्थाओं को समझने में सुविधा होगी।

7.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि –

1. शिक्षण की अवधारणा को जान सकेंगे।
2. शिक्षण की अवधारणा को समझकर उसका विस्तार से वर्णन कर सकेंगे।
3. शिक्षण के स्तर को समझ सकेंगे।
4. शिक्षण के स्तर का विस्तार से वर्णन कर सकेंगे।
5. शिक्षण की अवस्था के विषय में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
6. शिक्षण की अवस्था को समझ सकेंगे।
7. शिक्षण की अवस्था का विस्तार से वर्णन कर सकेंगे।

7.3 शिक्षण की अवधारणा

शिक्षण एक प्रक्रिया है जो समाज में अनवरत् चलती रहती है। इसमें एक सिखाने वाला होता है और एक सीखने वाला। अनौपचारिक शिक्षण समाज एवं परिवार में होता है, परन्तु औपचारिक शिक्षण कार्य विद्यालयों, महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में होता है। शिक्षण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें एक अधिक अनुभवी व्यक्ति अपने से कम अनुभवी को अपने अधिक अनुभव के आधार पर अर्जित ज्ञान को कम अनुभव वाले व्यक्ति को हस्तान्तरित करता है।

शिक्षण एक उद्देश्य पूर्ण क्रिया है जो अधिगम को प्रभावित करती है। शिक्षण और अधिगम दोनों एक–दूसरे पर आधारित है, ये एक सिक्के के दोनों पहलुओं के समान हैं। शिक्षण व्यवहार परिवर्तन का माध्यम है, इसके द्वारा सीखने वाले (विद्यार्थी) के व्यवहार में परिवर्तन लाने का प्रयास किया जाता है। यह प्रयास शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया का परिणाम होता है। शिक्षण कार्य, कक्षागत परिस्थितियों में विचारों के आदान–प्रदान

से शुरू किया जाता है, जिससे बालक के व्यवहार में परिवर्तन धीरे–धीरे आता है। शिक्षण प्रक्रिया में विद्यार्थी व अध्यापक दोनों की अंतःक्रिया सम्मिलित रहती है। अध्यापक शिक्षण प्रभावपूर्ण रीति से कर सकें, इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक सिद्धान्तों व अधिनियमों का शिक्षण–प्रक्रिया में अनुप्रयोग किया जाता है। शिक्षण दार्शनिक लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए मनोवैज्ञानिक उपागमों के सहारे, सामाजिक परिवेश में रहकर सामाजिक उपयोगिता के संदर्भ में किया जाता है। दार्शनिक लक्ष्य व्यवहारिक पक्ष को ध्यान में रखकर निर्धारित किये जाते हैं। शिक्षण का लक्ष्य दार्शनिक लक्ष्यों के अनुसार बालक के व्यवहार में परिवर्तन करना है।

शिक्षण एक वैज्ञानिक तथा कलात्मक प्रक्रिया है। इसमें कुछ सुनिश्चित पदों का अनुपालन किया जाता है जिनकों शिक्षण की अवस्थाओं के नाम से जाना जाता है, शिक्षण करने वाला व्यक्ति (शिक्षक) सदैव इन अवस्थाओं के व्यवस्थित क्रम को अपनाकर ही शिक्षण कार्य करता है। प्रत्येक व्यक्ति के शिक्षण कार्य का प्रभाव अलग–अलग होता है क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति की पढ़ाने की शैली अलग–अलग होती है, इसलिए इसे कलात्मक प्रक्रिया के अधीन भी माना जाता है। अधिकतर शिक्षाविदों ने शिक्षण को विज्ञान तथा कला दोनों माना है। शिक्षण को प्रचीन समय में केवल एक कला के रूप मे माना जाता था, परन्तु आधुनिक शिक्षाविदों ने इसमें अपनाये जाने वाले पदो के आधार पर शिक्षण को विज्ञान कहा है।

7.3.1 शिक्षण की परिभाषाएँ

विभिन्न शिक्षाविदों ने शिक्षण को अपने–अपने तरीके से परिभाषित किया है जिसमें से कुछ निम्नवत् हैं–

ब्लूम के अनुसार– "सार्वजनिक स्तर पर शिक्षण, शिक्षक व विद्यार्थी के मध्य चलने वाली अन्योन्याश्रित और प्रभावशाली सम्बन्धों का विकास करने वाली ऐसी प्रक्रिया है जो कि विशेषज्ञ, शिक्षक और विद्यार्थियों के मध्य ज्ञानार्जन हेतु चलती है।"

आर0 ए0 शर्मा के अनुसार– "शिक्षण पारस्परिक अतंःक्रिया का वह प्रयास है जो शिक्षार्थी को कुछ उद्देश्यों की ओर अग्रसारित करता है।"

जेक्सन के अनुसार– "शिक्षण को सामान्य रुप से दो या अधिक व्यक्तियों के बीच आमने–सामने चलने वाली प्रक्रिया के रुप में परिभाषित किया जा सकता है।"

एच0 सी0 मौरीसन के अनुसार– "शिक्षण वह प्रक्रिया है जिसमें अधिक विकसित व्यक्तित्व कम विकसित व्यक्तित्व के संपर्क में आता है और कम विकसित व्यक्तित्व की अग्रिम शिक्षा के लिए विकसित व्यक्तित्व व्यवस्था करता है।"

नागेन्द्र कुमार के अनुसार– "शिक्षण एक सामाजिक प्रक्रिया है जिसमें शिक्षक एवं शिक्षार्थी के मध्य पाठ्यवस्तु के आधार पर अंतःक्रिया होती है।"

स्मिथ के अनुसार– शिक्षण क्रियाओं का वह समूह है जो अधिगम उत्पन्न करने के लिए प्रेरित करती है।"

7.4 शिक्षण के चर

शिक्षण प्रक्रिया में मुख्यतः तीन प्रकार के चर होते हैं–

1. **स्वतंत्र चर**– शिक्षण प्रक्रिया में शिक्षक स्वतंत्र चर के रुप में कार्य करता है, शिक्षक अपने अध्यापन प्रणाली मे विद्यार्थियों की आवश्यकता के अनुसार परिवर्तन करता है, वह कक्षा के समस्त विद्यार्थियों को ध्यान में रखकर, शिक्षण व्यूह, शिक्षण विधि एवं तकनीकियों का प्रयोग करता है, परन्तु आवश्यकतानुसार वह कक्षा शिक्षण के दौरान इनमें परिवर्तन कर सकता है। शिक्षक के कार्य का प्रभाव विद्यार्थियों के व्यवहार पर पड़ता है। इसलिए इस प्रक्रिया में शिक्षक को स्वतंत्र चर के रुप में विवेचित किया गया है।

2. **आश्रित चर**– शिक्षण प्रक्रिया में दूसरा पक्ष विद्यार्थी होता है शिक्षण प्रक्रिया का मुख्य उद्देश्य विद्यार्थियों के व्यवहार में परिवर्तन करना है, अर्थात् शिक्षक के कार्य से विद्यार्थी पूर्ण रुपेण प्रभावित होता है। यदि किसी विषय के शिक्षक अपने शिक्षणदायित्व का निर्वहन सही ढंग से नहीं करते हैं तो उस विषय में विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि प्रभावित हो जाती है, और साथ ही जिस विषय के

अध्यापक अपनी कक्षा में शिक्षण कार्य को प्रभावी ढंग से करते हैं उनके विषय की शैक्षिक उपलब्धि अच्छी होती है, इसलिए कहा जा सकता है कि विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर शिक्षक के द्वारा किये गये कार्य का प्रभाव पड़ता है, अर्थात् विद्यार्थी, शिक्षण प्रक्रिया के दौरान शिक्षक पर आश्रित होता है इसलिए इस प्रक्रिया को आश्रित चर के रुप में विवेचित किया जाता है।

3. **हस्तक्षेपी चर**— शिक्षण प्रक्रिया में शिक्षक एवं विद्यार्थी के अलावा अन्य कई अवयव इस प्रक्रिया में अपना प्रभाव डालते हैं, इन्हें हस्तक्षेपी चर के नाम से जाना जाता है, जैसे— पाठ्यवस्तु, शिक्षण विधियाँ, शिक्षण व्यूह, युक्तियां, विद्यालय वातारण, कक्षा—कक्ष वातावरण इत्यादि। ये सभी किसी न किसी रुप में शिक्षण कार्य को प्रभावित करते हैं इसलिए इन्हें हस्तक्षेपी चर/मध्यवर्ती चर कहते है।

अग्रलिखित तीनों चरों का समन्वय ही शिक्षण प्रक्रिया को पूर्ण करता है। यदि शिक्षक (स्वतंत्रत चर) और हस्तक्षेपी चरों का समन्वय अच्छे ढंग से हो तो इसका अच्छा प्रभाव आश्रित चर (विद्यार्थी) पर पड़ेगा, अर्थात् विद्यार्थियों के व्यवहार में वांछित परिवर्तन होगा, और शिक्षण के द्वारा निर्धारित उद्देश्य की प्राप्ति होगी।

शिक्षण की संरचना को निम्नवत् रेखाचित्र से आसानी से समझा जा सकता है—

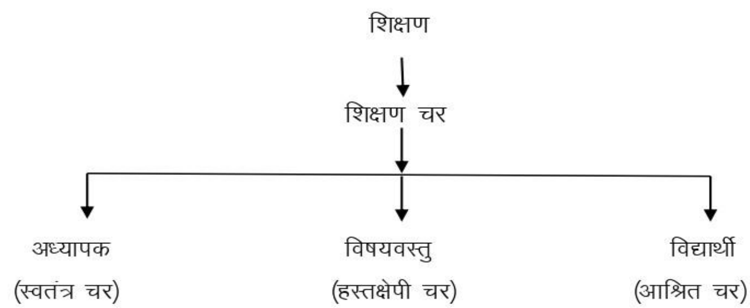

7.4.1 शिक्षण प्रक्रिया विश्लेषण

शिक्षण प्रक्रिया मुख्यतः दो अवयवों पर निर्भर रहती है—

1. विषय वस्तु 2. संप्रेषण तकनीकी

शिक्षण, शिक्षक पर मुख्यतः निर्भर करता है। एक अच्छे शिक्षक की विशेषता है कि वह विषय वस्तु पर अपनी अच्छी पकड़ रखता हो अर्थात् अपने विषय का विशेषज्ञ हो, साथ ही वह विषय को सही ढंग से विद्याार्थियों तक संप्रेषित भी कर सके, अर्थात् उसे संप्रेषण तकनीकी का सही ज्ञान हो। विषय वस्तु को शिक्षक, विद्यार्थियों के स्तर के अनुसार एवं विषय वस्तु की जटिलता के अनुसार स्मृति स्तर, बोध स्तर एवं चिन्तन स्तर के आधार पर विश्लेषित करके यदि शिक्षण कार्य करें तो निश्चित ही शिक्षण के उद्देश्यों की पूर्ति हो सकेगी साथ ही इसके लिए सही संप्रेषण तकनीकी, मौखिक, लिखित, प्रयोगात्मक, तकनीकी आधारित, क्रिया आधारित इत्यादि का प्रयोग कर शिक्षण की प्रभावात्मकता को बढ़ाया जा सकता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. आर.ए. शर्मा के शब्दों में शिक्षण को परिभाषित कीजिए।

....

....

2. हस्तक्षेपी चर से क्या तात्पर्य है?

....

....

7.5 शिक्षण के प्रकार / शिक्षण प्रणाली

कक्षा में शिक्षण करते समय शिक्षक के व्यवहार के आधार पर शिक्षण को तीन प्रकार से विवेचित कर सकते हैं–

7.5.1 एकतंत्रात्मक शिक्षण

यह शिक्षण परम्परागत शिक्षण का उदाहरण है इसमें शिक्षक पूर्ण रुप से सक्रिय रहता है एवं विद्यार्थी निष्क्रिय होता है। इसमें शिक्षक ब्याख्यान देता है और विद्यार्थी श्रोता के रुप में सुनते हैं। इस शिक्षण की मान्यता है कि विद्यार्थी को शिक्षा के निर्धारित उद्देश्यों के अनुसार चलना चाहिए अर्थात् विद्यार्थी शिक्षक को आदर्श माने और उनका अनुकरण करें, विद्यार्थी शिक्षा के लिए है।

एकतंत्रात्मक शिक्षण प्रणाली परम्परागत शिक्षण का स्वरुप है इसमें विद्यार्थियों को शिक्षकों के निर्देशों का पालन पूर्णरुपेण करना पड़ता है यह प्रणाली केवल स्मृति स्तर तक के शिक्षण व्यवस्था तक ही सीमित होती है इसमें विद्यार्थियों की क्षमताओं के विकास का कोई अवसर नहीं मिलता है। इसमें वाद–विवाद को स्थान नहीं दिया जाता है शिक्षक जो कह रहा है उसे सत्य मानकर उसका अनुपालन करना ही छात्र का कार्य होता है। इसमें शिक्षक विद्यार्थियों को अशुद्ध / मिथ्य ज्ञान भी प्रदान कर सकता है।

वर्तमान में यह अमनोवैज्ञानिक प्रणाली के अंतर्गत आती है फिर भी उच्च कक्षाओं में इसे अपनाया जा रहा है।

7.5.2 प्रजातंत्रात्मक शिक्षण

यह शिक्षण 'मानवीय संबंध–व्यवस्था सिव्द्धान्त' पर आधारित है। यह शिक्षण सहयोग के आधार पर आधारित है, इसमें शिक्षक और विद्यार्थियों के मध्य अंतःक्रिया संचालित होती है, जो प्रजातंत्र का मूल आधार है, इसमें विद्यार्थियों के अनुक्रियाओं को पूर्ण समर्थन मिलता है, सही अनुक्रियाओं को शिक्षक, शिक्षण कार्य में अपनाकर विद्यार्थियों के सहभागिता पक्ष को बढ़ाने के लिए प्रेरित करते हैं।

एन0एल0 गेज के अनुसार– "शिक्षण प्रक्रियाओं में पारस्परिक प्रभावों को सम्मिलित किया जाता है जिसमें दूसरों की व्यावहारिक क्षमताओं के विकास का लक्ष्य होता है।" इस कथनानुसार इस प्रक्रिया में शिक्षक एवं विद्यार्थी दोनों ही एक–दूसरे के व्यवहारिक–क्षमताओं को विकसित करने में मदद करते हैं।

इस शिक्षण प्रणाली में शिक्षक मार्गदर्शक एवं व्याख्याता दोनों की भूमिका निर्वहन करता है। व्याख्यान देने के उपरान्त प्रश्न पूछकर विद्यार्थियों की समझ शक्ति की जॉच करने के लिए एवं उन्हें शिक्षण में सहभागी बनाने के लिए प्रजातंत्रात्मक प्रणाली को अपनाया जाता है। यह प्रणाली विद्यार्थियों को विचारशील व्यक्तित्व के रूप में विकसित होने का मौका देता है, जिससे वह प्रत्यय को रटे नहीं अपितु उसे सोच समझकर आत्मसात करें। इस प्रकार के शिक्षण में शिक्षक एंव विद्यार्थी दोनों एक दूसरे के विचारों का सम्मान करते हैं, इस प्रकार के शिक्षण में स्वतंत्रता एवं समानता के मौलिक सिद्धांत का पूर्णतः अनुपालन किया जाता है।

स्वतंत्रता एवं समानता प्रजातंत्र की रीढ़ है, इसलिए इस शिक्षण को प्रजातंत्रात्मक शिक्षण के नाम से जाना जाता है। प्रजातंत्रात्मक शिक्षण में शिक्षक एवं विद्यार्थी समान रूप से क्रियाशील रहते हैं। यह प्रणाली स्मृति स्तर, बोध स्तर को समाहित करके कार्य करती है, इसमें वाद–विवाद को पूर्ण स्थान मिलता है। यह शिक्षण केवल प्रारंभिक स्तर को छोड़कर प्रत्येक स्तर पर उपयोगी है।

7.5.3 हस्तक्षेप रहित शिक्षण

इस शिक्षण में विद्यार्थी को स्वतंत्र रूप से सीखने के अवसर प्रदान किये जाते हैं। इस शिक्षण में विद्यार्थी सक्रिय रहकर स्वयं सीखने का प्रयास करता है तथा इस शिक्षण प्रक्रिया में शिक्षक मार्गदर्शक का कार्य करता है।

यह शिक्षण 'आधुनिक व्यवस्था सिद्धांत', 'कार्य तथा संबंध केन्द्रित' सिद्धांतों पर आधारित है। इन सिद्धांतों की धारणा यह है कि व्यवस्था के सदस्यों में समस्या समाधान की क्षमता भी होती है और निर्णय भी ले सकते हैं। हस्तक्षेप रहित शिक्षण के संबंध में जॉन ब्रूबेकर ने कहा है कि–"शिक्षण में ऐसी परिस्थितियों की व्याख्या की जाती हैं जिनमें कुछ रिक्त स्थान छोड़ दिये जाते हैं तथा कठिनाइयाँ उत्पन्न की जाती हैं, विद्यार्थी उन कठिनाइयों पर विजय पाने का प्रयास करता है तथा रिक्त स्थानों की पूर्ति करने का प्रयास करता है। विद्यार्थी की इस प्रकार की क्रियायें सीखने में सहायक होती है।"

इस परिभाषा से स्पष्ट है कि इस प्रकार के शिक्षण में शिक्षक विद्यार्थियों के लिए ऐसी परिस्थितियों को प्रस्तुत करता है, जो अपूर्ण होती हैं। विद्यार्थी अपूर्ण परिस्थिति को पूर्ण करने का प्रयास करते है, और स्वंय करके सीखते हैं। इसमें शिक्षक मार्गदर्शक के रूप में आस–पास रहता है, आवश्यकता पड़ने पर अथवा विद्यार्थियों के द्वारा पूछे जाने पर उनकी मदद करता है, अर्थात् इस प्रकार के शिक्षण में शिक्षक एक मित्र के समान कार्य करता है।

हस्तक्षेप रहित शिक्षण से विद्यार्थियों में सृजनात्मक क्षमता का विकास होता है, क्यों? कैसे? इत्यादि जिज्ञासाओं को पूर्ण करने का मौका मिलता है। इस प्रकार के शिक्षण में विद्यार्थी पूर्णरूपेण सक्रिय रहकर सीखता है। इस प्रकार के शिक्षण का उदाहरण प्रयोगशाला कार्य, क्षेत्र–भ्रमण आदि हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

3. एकतंत्रात्मक शिक्षण किसे कहते हैं?

....

....

4. प्रजातंत्रात्मक शिक्षण किस सिद्धान्त पर आधारित होती है?

....

....

5. हस्तक्षेप रहित शिक्षण में शिक्षक की क्या भूमिका है?

....

....

7.6 शिक्षण के स्तर

शिक्षण एक प्रक्रिया है जो शिक्षक के द्वारा विद्यार्थियों के मध्य संपादित की जाती है और विद्यार्थियों में व्यवहारिक परिवर्तन लाने के लिए संपादित की जाती है। शिक्षण एक ऐसी प्रक्रिया है जो किन्हीं निश्चित उद्देश्यों को ध्यान में रखकर की जाती है। शिक्षण और अधिगम, अन्योन्याश्रित रूप से एक दूसरे पर आधारित हैं, अर्थात दोनों एक सिक्के के दो पहलू हैं। शिक्षण के द्वारा जिन उद्देश्यों की प्राप्ति होती है उनका पता व्यवहार परिवर्तन द्वारा ही लगाया जा सकता है, अर्थात् शिक्षण का केंद्र बिन्दु व्यवहार परिवर्तन ही है। शिक्षण कार्य कक्षागत परिस्थितियों में विचारों के आदान प्रदान से होता है इस प्रक्रिया को शिक्षक इस तरह करता है कि वांछित व्यवहार परिवर्तन विद्यार्थियों में लाया जा सके। विद्यार्थियों के व्यवहार में परिवर्तन लाने के लिए शिक्षण, विद्यार्थियों के आयु और मानसिक स्तर के अनुरूप किया जाता है, क्योंकि अधिगम, आयु और मानसिक स्तर के अनुसार ही होता है। बच्चा जैसे ही सीखना प्रारंभ करता है उसे प्रत्ययों को रटाया जाता है परन्तु जैसे–जैसे उसकी समझ विकसित होती जाती है, उसके सीखने की जटिलता बढ़ती जाती है, उसके द्वारा पूछे गये प्रश्न,

ये क्या है? ये कैसा बना है? यह ऐसे क्यों है? अगर ऐसा करेंगे तो क्या होगा? बच्चे की समझने की प्रक्रिया को विकसित करते है। परन्तु सीखने के दौरान एक उम्र (लगभग किशोरावस्था) के दौरान बच्चा परिकल्पना करना शुरू कर देता है, विचारों के आधार पर कुछ नया सोचने लगता है। अग्रलिखित बातों से स्पष्ट है कि बच्चे की सीखने की क्षमता उसके आयु और मानसिक स्तर के अनुसार विकसित होती है और वह स्मृति, बोध एवं चिंतन को सीखने का आधार बनाता है। इससे यह स्पष्ट है कि सीखना और सीखाना एक दूसरे पर पूर्णतः आश्रित है, सिखाना ही शिक्षण है अर्थात् शिक्षण भी सीखने के तीनो स्तरों (स्मृति, बोध एवं चिंतन) पर ही किया जाता है। यदि बच्चों के सीखने के स्तर पर शिक्षण किया जायेगा, तो सिखाना आसान होगा। सिखाने (शिक्षण) के उद्देश्य भी बच्चो की आयु और उनके मानसिक स्तर के अनुसार ही निर्धारित किये जाते हैं।

मॉरीस एल0 बिग्गी ने सीखने के स्तरों को एक सातत्य/पैमाने पर प्रदर्शित किया है यह पैमाना विचारहीनता की मानसिकता से शुरू होकर विचारपूर्णता की ओर जाता है। जिसमें निश्चित अनुक्रम भी विद्यमान है। स्मृति स्तर के आधार पर अवबोध स्तर तक तथा अवबोध स्तर के आधार पर चिंतन स्तर पर पहुँचा जा सकता है।

स्मृति स्तर→ अवबोध स्तर→ चिंतन स्तर

7.7 स्मृति स्तर शिक्षण

स्मृति स्तर, शिक्षण की प्रथम अवस्था है क्योंकि जब कोई चीज सिखाया जाता है तो उसे हम याद करते हैं और स्मृति में रखते हैं। इसलिए शिक्षण का प्रथम स्तर, स्मृति स्तर पर आधारित है।

बिग्गी के अनुसार– "स्मृति स्तर का अधिगम तथ्यपूर्ण सामग्री की स्मृति कराता है, इससे अधिक कुछ नहीं।"

फलायड, एल0 रूच के अनुसार– "किसी व्यक्ति की प्रत्यास्मरण तथा पूर्व में अधिगमित विषयवस्तु से, नवीन विषय वस्तु से संबद्ध करने की योग्यता, स्मृति कहलाती है।

कुमार, एन0 के अनुसार– "स्मृति, मस्तिष्क की एक प्रक्रिया है जिसमें सीखे गये अनुभवों को एकत्रित किया जाता है तथा आवश्यकता पड़ने पर उन्हें प्रत्यास्मरित किया जाता है।"

स्मृति के चरण–

1. अधिगम – अनुभव द्वारा सीखना।
2. धारणा – अनुभवों का अचेतन स्तर पर बने रहना।
3. प्रत्यास्मरण – अनुभवों को अचेतन मन से चेतन मन में लाना।
4. अभिज्ञान या पुनर्पहचान – पूर्व परिचित वस्तु/प्रत्यय का चेतन मन में आना।

i. **अधिगम–** अधिगम अनुभव से निर्मित होता है, बच्चा बचपन में अपनी माँ को पहचानने में अपने अनुभव का प्रयोग करके, विभिन्न औरतों में से अपनी माँ को पहचान लेता है। इस स्तर पर उसका मानसिक विकास बड़े ही धीमी गति से होता है, जो औरत बच्चे की देखभाल करती है, उससे उसका संवेगात्मक लगाव प्रारंभ होता है और रोज उसे अपने पास देखने, दूध पिलाने, देखभाल करने के आधार पर उससे वह जुड़ाव स्थापित कर लेता है, परन्तु इस प्रक्रिया में यदि रोज दूसरी औरत एक बच्चे का देखभाल करें तो एक औरत के लिए माँ की अवधारणा उसकी नहीं बनेगी, क्योंकि वह मानसिक विकास के प्रथम अवस्था पर है। धीरे–धीरे यही बालक जब लगभग दो वर्ष का हो जाता है और उस समय यदि वह एक बार आग की लपट से जल जाय तो वह दुबारा आग की लपट में हाथ नहीं डालेगा। यह अनुभव उसका अधिगम होगा।

ii. **धारणा–** आग में जलना उसके अचेतन मन में स्थापित हो गया, इस कारण वह दुबारा आग की लपट में हाथ नहीं डालेगा, इसे उसके मस्तिष्क ने धारण कर लिया अथवा संचय कर लिया, धारण स्मृति का केन्द्र है। मस्तिष्क में चेतन और अचेतन पक्ष होते हैं, जो वस्तुएं लगातार हमारे सम्मुख आती जाती रहती हैं वह चेतन मन में और जो वस्तुएं कभी–कभार हमारे सामने आती है, वो अचेतन मन में धारित

हो जाती है।

iii. **प्रत्यास्मरण**– मस्तिष्क द्वारा धारित सामग्री कुछ समय उपरान्त यदि पुनः हमारे सम्मुख आती है तो हम अचेतन मन से धारित सामग्री को चेतन मन में लाते हैं, यह हमारे मस्तिष्क द्वारा ही किया जाता है, इसे ही प्रत्यास्मरण कहते हैं। यह धारण पर ही निर्भर करेगा। यदि धारण नहीं हुआ होगा तो प्रत्यास्मरण संभव नहीं होगा। प्रत्यास्मरण, समानता, विरोधाभास इत्यादि के आधार पर संभव होता है।

iv. **अभिज्ञान या पुनर्पहचान**– रॉस के अनुसार– "अभिज्ञान हमारी सामान्य संचय शक्ति की अभिव्यक्ति का प्रथम स्वरूप है, जिसे हम स्मृति कहते हैं।" अभिज्ञान से अभिप्राय परिचय की चेतना से है जो यह संकेत देती है कि प्रस्तुत सामग्री पहले से धारण में विद्यमान है, अभिज्ञान या पनुर्पहचान ही स्मृति को पूर्णता प्रदान करता है। स्मृति स्तर शिक्षण, विचारहीन शिक्षण के रूप में माना जाता है। स्मृति स्तर शिक्षण में अध्यापक, विद्यार्थियों को विषयवस्तु को रटाने का प्रयास करता है। सीखने का मूलभूत आधार स्मृति ही है, स्मृति स्तर का शिक्षण प्रारंभ में किया जाता है जो आगे सीखने के लिए आधार बनता है, जैसे हिन्दी भाषा में वर्णमाला; क, ख, ग, घ.............. ज्ञ। अंग्रेजी भाषा में वर्णमाला; A, B, C, D, ...Z गणित में 1, 2, 3................100। इनको प्रारंभ में प्रत्येक विद्यार्थी रटकर ही सीखता है। शिक्षण में स्मृति स्तर के महत्व को दरकिनार नहीं किया जा सकता है क्योंकि बोध स्तर एवं चिंतन स्तर के शिक्षण में यह अपने आप समाहित रहता है। स्मृति स्तर को सभी स्तरों के लिए नींव माना जा सकता है। स्मृति स्तर के शिक्षण की निष्पत्ति का बुद्धि से सहसंबंध नहीं माना जाता है, परन्तु इस स्तर के शिक्षण से बौद्धिक व्यवहार को विकसित करने में सहायता मिलती है। इस स्तर के शिक्षण में तथ्यों को रटकर, पुनः प्रस्तुतीकरण करने पर विशेष बल दिया जाता है। अधिकांशतः विद्यालयों की परिस्थितियों में एक प्रभावशाली शिक्षक के पास स्मृति स्तर के शिक्षण के अतिरिक्त अन्य कोई उपाय नहीं रहता है, जैसे उपरोक्त वर्णित विषय हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत के वर्णमालाएं (मूलभूत आधार), गणित (गिनती), इतिहास (घटित घटनाएं), विज्ञान (तथ्य), नागरिक शास्त्र (अनुच्छेद), भूगोल (स्थान) इत्यादि। अग्रलिखित विषय अथवा किसी भी भाषा का प्रारंभतः शिक्षण करने के लिए स्मृति स्तर का ही सहारा लिया जाता है।

स्मृति स्तर के शिक्षण को सही ढंग से समझने के लिए इस स्तर के शिक्षण के प्रतिमान को समझना अति आवश्यक है। इस स्तर के शिक्षण के प्रतिमान को हरबर्ट ने विकसित किया है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

6. शिक्षण के कितने स्तर होते हैं?

....

....

7. प्रत्यास्मरण से क्या तात्पर्य है?

....

....

7.8 स्मृति स्तर शिक्षण के प्रतिमान, कमियाँ तथा सुझाव

स्मृति स्तर शिक्षण के प्रतिमान कमियॉ तथा सुझाव इस प्रकार है–

7.8.1 स्मृति स्तर शिक्षण प्रतिमान (Model of Memory level Teaching)

स्मृति स्तर शिक्षण प्रतिमान को हरबर्ट महोदय ने विकसित किया, इन्होंने इस प्रतिमान के प्रारूप को

निम्न पक्षों में वर्णित किया है–

1. उद्देश्य (Focus), 2. संरचना (Syntax), 3. सामाजिक प्रणाली (Social System), 4. संचरण प्रणाली, (Support System), 5. मूल्यांकन प्रणाली (Evaluation System).

1. उद्देश्य / केन्द्र बिन्दु–

स्मृति स्तर के शिक्षण का उद्देश्य विद्यार्थियों में निम्नलिखित क्षमताओं को विकसित करना है–

a) मानसिक पक्षों को प्रशिक्षित करना।

b) तथ्यों का ज्ञान प्रदान करना।

c) सीखे तथ्यों को स्मरण कराना।

d) सीखे हुए ज्ञान को प्रत्यास्मरित कराकर पुनः प्रस्तुत कराना।

2. संरचना

इसमें संरचना का आधार हरबर्ट की पंचपदीय प्रणाली को माना जाता है।

a) योजना– अध्यापक स्मृति स्तर के शिक्षण को ध्यान में रखकर विषय–वस्तु के प्रस्तुतीकरण हेतु योजना बनाते हैं। इसमें शिक्षक विषय–वस्तु को छोटे–छोटे खण्डों में विभाजित करता है। जिससे विद्यार्थी आसानी से खण्डों को याद रख सकें। इसकी तैयारी वह प्रस्तुतीकरण से पूर्व करता है।

b) प्रस्तुतीकरण– शिक्षक नवीन ज्ञान को विद्यार्थियों के पूर्व ज्ञान से जोड़कर प्रस्तुत करता है, यहाँ शिक्षक निश्चित व विशिष्ट पाठ्यवस्तु को प्रस्तुत करता है। योजना के अनुसार ही प्रस्तुतीकरण किया जाता है।

c) तुलना एवं पृथक्कीकरण– शिक्षक प्रस्तुतीकरण के उपरान्त विद्यार्थियों से पूर्व में सीखें गये एवं वर्तमान में सिखाये गये ज्ञान की तुलना करके उनमें समानता एवं पृथक्कीकरण का प्रत्यय विकसित करता है।

CAT	–	कैट		CUT	–	कट	
BAT	–	बैट	→समानता	BUT	–	बट	→पृथक्कीकरण
RAT	–	रैट		PUT	–	पुट	

इससे विद्यार्थी आसानी से प्रत्ययों को कंठस्थ कर लेते हैं।

d) सामान्यीकरण– इस सोपान के अन्तर्गत सिखाने का एक सामान्य नियम विकसित किया जाता है, इसमें विद्यार्थियों की सहायता ली जाती है।

e) अनुप्रयोग– सिखाये गये ज्ञान को अन्य परिस्थिति में प्रयोग करने की परिस्थिति का निर्माण शिक्षक द्वारा करना। यह करके शिक्षक सिखाये गये ज्ञान का तुरन्त ही प्रयोग कराके स्मृति स्तर पर सीखे हुए ज्ञान को स्थायित्व की ओर ले जाता है।

3. सामाजिक प्रणाली– शिक्षण एक सामाजिक प्रक्रिया है, इसमें शिक्षक और विद्यार्थी, शिक्षण समाज के अंग होते हैं। स्मृति स्तर शिक्षण प्रक्रिया में अध्यापक पूर्ण रूप से सक्रिय तथा विद्यार्थी निष्क्रिय श्रोता के रूप में होता है। इसमें शिक्षक का व्यवहार अधिकारपूर्ण होता है। शिक्षक पाठ्य वस्तु को प्रस्तुत करता है एवं विद्यार्थियों को निर्देश देता है। विद्यार्थी, शिक्षक को आदर्श मानकर उनका अनुसरण करते हैं। इस स्तर पर शाब्दिक अभिप्रेरकों का प्रयोग किया जाता है।

4. संभरण प्रणाली– स्मृति स्तर के शिक्षण पर दृश्य–श्रव्य सहायक सामग्रियों का प्रयोग करके शिक्षण को रूचिकर बनाया जा सकता है इससे विद्यार्थी सिखाये जाने वाले ज्ञान को आसानी से कंठस्थ कर लेते हैं। दृश्य–श्रव्य सामग्री को सहायक / संभरण के रूप में प्रयोग किया जाता है।

5. मूल्यांकन प्रणाली– स्मृति स्तर के शिक्षण का मूल्यांकन मौखिक व लिखित दोनों ही परीक्षाओं के द्वारा किया जाता है। इस स्तर पर परीक्षा में रटने पर ही बल दिया जाता है। इस स्तर पर प्रत्यास्मरण एवं प्रत्याभिज्ञान पदों का प्रयोग करके मूल्यांकन किया जाता है। यहाँ पर निबंधात्मक परीक्षायें अधिक उपयोगी नहीं मानी जाती हैं।

7.8.2 स्मृति स्तर के शिक्षण की कमियाँ

1. स्मृति के शिक्षण की प्रक्रिया को अमनोवैज्ञानिक माना गया है, क्योंकि इसमें केवल रटने पर बल दिया गया है।
2. विद्यार्थी, इस स्तर के शिक्षण से रट्टू तो बन जाते हैं परन्तु विवेकशील नहीं बन पाते है, अर्थात् प्रत्यय के अर्थ को समझ नहीं पाते हैं।
3. रटने से विद्यार्थियों का मानसिक विकास संभव नहीं हो पाता है, यह प्रक्रिया मानव एवं जानवरों को एक जैसा समझती है, बार–बार एक ही प्रक्रिया से गुजार कर जानवरों को भी प्रशिक्षित किया जा सकता है।
4. इस स्तर के शिक्षण में शिक्षक पूर्ण रूप से सक्रिय रहता है, विद्यार्थी उसका अनुकरण करता है, अर्थात् विद्यार्थी को अपनी समझ का प्रयोग करने का कोई अवसर उसे नहीं मिलता है।
5. इस स्तर के शिक्षण से भावात्मक विकास की कोई संभावना नहीं होती है, क्योंकि विद्यार्थी को केवल तथ्य स्मरण करने से ही मतलब होता है।
6. इस स्तर के शिक्षण से सीखे हुए ज्ञान को विद्यार्थी आसानी से भूल जाते हैं।

7.8.3 स्मृति स्तर शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के सुझाव

1. विद्यार्थी के सम्मुख विषय–वस्तु को छोटे–छोटे खण्डों में प्रस्तुत करना चाहिए, जिससे कि विद्यार्थी विषय वस्तु को आसानी से कंठस्थ कर सकें।
2. स्मरण कराये जाने वाली विषय वस्तु को विद्यार्थियों के सम्मुख कई बार प्रस्तुत करके उन्हें प्रभावी ढंग से कंठस्थ कराया जा सकता है।
3. विषय वस्तु को पढ़ाने के बाद प्रश्नों के द्वारा पूछकर तथ्यों को पुनः विद्यार्थियों के सम्मुख प्रस्तुत कराके इस स्तर के शिक्षण को प्रभावी बनाया जा सकता है।
4. इस स्तर पर विद्यार्थियों को पुनर्बलन देकर शिक्षण को प्रभावी बनाया जा सकता है।
5. थकान के समय इस स्तर के आधार पर शिक्षण कार्य नहीं करना चाहिए।
6. इसे ज्ञानात्मक स्तर के उद्देश्य प्राप्ति के लिए ही प्रयोग करना चाहिए।
7. विषय–वस्तु को क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत करके इस स्तर के शिक्षण को प्रभावी बनाया जा सकता है।

7.9 अवबोध स्तर शिक्षण

अवबोध स्तर शिक्षण का अर्थ, प्रतिमान निम्न है–

7.9.1 अवबोध स्तर शिक्षण का अर्थ

अवबोध स्तर शिक्षण, शिक्षण के द्वितीय स्तर के रूप में माना जाता है, इस स्तर पर शिक्षण, विद्यार्थियों की समझ को विकसित करने के लिए किया जाता है। अवबोध शब्द को विश्लेषित करने पर जो अर्थ निकलता है वह है "किसी वस्तु/घटना/प्रत्यय को समझना।" इस समझ में अर्थज्ञान, धारण, सार्थकता तथा विषय पर पकड़ तक पहुँचाना शामिल रहता है। स्मृति स्तर का शिक्षण जहाँ किसी वस्तु/घटना/प्रत्यय का ज्ञान कराता है, वही अवबोध उसके अर्थ के स्पष्टीकरण तक पहुँचाता है। शिक्षण के क्षेत्र में अवबोध एक व्यापक शब्द है।

अवबोध शब्द को मनोवैज्ञानिकों तथा शिक्षा–शास्त्रियों ने अपने–अपने तरीके से अर्थ प्रदान किया है,

शब्द कोष में भी इसके विभिन्न अर्थ दिये गये हैं जैसे–

(i) अर्थ का प्रत्यक्षीकरण करना, विचारों को समझना।

(ii) किसी प्रत्यय की गहनता से परिचित होना एवं उसकी प्रकृति एवं स्वभाव को समझना अर्थात पूर्णरूपेण परिचित होना।

(iii) किसी वाक्य में प्रयुक्त होने वाले शब्दों के अर्थ को समझना।

(iv) तथ्य के रूप का स्पष्ट बोध होना।

(v) तथ्यों में संबंधों को ढूंढना इत्यादि।

कुछ विद्वानों/शिक्षाविदों ने इस स्तर के शिक्षण को निम्नवत् परिभाषित किया है–

बिग्गी के अनुसार– "अवबोध स्तर का शिक्षण वह शिक्षण है जो कि विद्यार्थियों में सामान्य एवं विशेष सिद्धान्तों एवं तथ्यों से संबंध का ज्ञान कराने का प्रयत्न करता है और उनके उपयोग के लिए उपयुक्त स्थान की खोज करता है जिसमें सिद्धान्तों का प्रयोग किया जा सकता है।"

प्रोफेसर आर. ए. शर्मा के अनुसार– "बोध स्तर शिक्षण वह प्रक्रिया है जिसमें विद्यार्थियों को सामान्यीकरण सिद्धान्तों तथा तथ्यों के संबंध का बोध कराया जाता है। बोध स्तर का शिक्षण बौद्धिक व्यवहारों के विकास के अधिक अवसर प्रदान करता है। यह विद्यार्थियों में सामान्यीकरण, सूझ तथा समस्याओं के समाधान के लिए क्षमताओं का विकास करता है। इसमें बौद्धिक व्यवहारों को प्रोत्साहित किया जाता है। विद्यार्थी एवं शिक्षक दोनों ही क्रियाशील रहते हैं।"

7.9.2 अवबोध स्तर के शिक्षण का प्रतिमान

इस स्तर पर हरबर्ट, जुड, मौरीसन व ब्रूनर का योगदान महत्वपूर्ण रहा है इनके द्वारा विकसित सिद्धान्त ही इस स्तर के शिक्षण अधिगम में अन्तर्निहित हैं। इस स्तर पर मौरीसन ने एक शिक्षण प्रतिमान विकसित किया है, जिसे मौरीसन शिक्षण प्रतिमान के नाम से जाना जाता है, इसे अवबोध स्तर का उपयुक्त प्रतिमान कहा जाता है। इस प्रतिमान का विवरण निम्नवत् है–

1. **उद्देश्य**– मौरीसन के शिक्षण प्रतिमान/अवबोध स्तर का उद्देश्य विषय पर स्वामित्व प्राप्त कराना है। इसमें विद्यार्थी, शिक्षक की सहायता से पाठ्य वस्तु को समझ कर उस पर स्वामित्व प्राप्त करता है। इसमें स्मृति स्तर स्वयं ही समाहित रहता हैं यह विचार केन्द्रित रहता है।

2. **संरचना** (Syntax)– मौरीसन ने बोध स्तर की शिक्षण व्यवस्था को पांच पदों में विभक्त किया है–

a) अन्वेषण (Exploration)- इस पद में तीन क्रियायें अंतर्निहित होती हैं–

(i) प्रश्नों के माध्यम से विद्यार्थियों के पूर्वज्ञान का पता लगाना।

(ii) पाठ्य वस्तु को प्रस्तुत करने की मनोवैज्ञानिक क्रमबद्धता को निर्धारित करना।

(iii) नवीन विषय वस्तु को प्रस्तुत करने का तरीका विकसित करना।

b) प्रस्तुतीकरण (Presentation)

(i) छोटी–छोटी इकाइयों में विषय–वस्तु को प्रस्तुत करना, तथा नये ज्ञान को विद्यार्थियों के पूर्व ज्ञान से संबंधित करके प्रस्तुत करना।

(ii) प्रस्तुतीकरण के साथ–साथ विद्यार्थियों के विषय वस्तु की बोध–गम्यता का पता लगाना।

(iii) आवश्यकता महसूस होने पर विषय वस्तु का पुनः प्रस्तुतीकरण।

c) आत्मसात्‌ीकरण (Assimilation)

इस सोपान का लक्ष्य विषय–वस्तु को गहन रूप में अध्ययन कराना है। प्रस्तुतीकरण के अंत में बोधात्मक प्रश्नों की सहायता से विद्यार्थियों को ज्ञान के आत्मसातीकरण का पता लगाया जाता है। यदि विद्यार्थी केवल स्मृति के आधार पर ही प्रश्नों का जवाब देता है तो उसे पुनः उदाहरण के आधार पर समझाकर प्रत्यय को आत्मसात् करने के लिए प्रेरित किया जाता है। यहाँ बोधात्मक प्रश्न आत्म–सातीकरण कराने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते हैं।

d) व्यवस्था (Organization)

इस सोपान में विद्यार्थी सीखे हुए ज्ञान को अपने शब्दों में लिखित रूप से प्रस्तुत करता है अर्थात् वह सीखे हुए ज्ञान को व्यवस्थित करके उसे लिखित ढंग से बिना किसी सहायता से प्रस्तुत करता है। यह सोपान यह सुनिश्चित करता है कि विद्यार्थी सीखे हुए ज्ञान को लिखित रूप में व्यवस्थित ढंग से प्रस्तुत कर पा रहा है कि नहीं।

e) वर्णन/अभिव्यक्तिकरण (Recitation)

इस सोपान में विद्यार्थी सीखे हुए ज्ञान को अपने साथियों एवं शिक्षक के सम्मुख बिना किसी सहायता के मौखिक रूप से विषय वस्तु को प्रस्तुत करता है। अभिव्यक्तिकरण कराने के लिए मौरीसन ने अलग से कालांश की व्यवस्था करने को भी कहा है, इसके लिए शिक्षक, शिक्षण के अंत में शिक्षण के सारांश को प्रस्तुत करने को कहता है, जो अभिव्यक्तिकरण को बढ़ावा देता है।

3. सामाजिक प्रणाली (Social System)

बोध स्तर के शिक्षण में सामाजिक प्रणाली, स्मृति स्तर के समान ही होती है। इसमें विद्यार्थी भी शिक्षक की तरह ही क्रियाशील रहता है। इस स्तर पर शिक्षक अपने प्रश्नों के माध्यम से ऐसी परिस्थितियाँ निर्मित करता है कि विद्यार्थी अपने समझ का अधिक से अधिक प्रयोग करें, अर्थात् नये ज्ञान को रटे नहीं अपितु उसकी अवधारणा को आत्मसात् कर सकें।

4. संभरण प्रणाली (Support System)

बोध स्तर के शिक्षण में दृश्य–श्रव्य सामग्री का प्रयोग अधिक उपयोगी होता है, यहाँ दृश्य–श्रव्य सामग्री संभरण का कार्य करते हैं। दृश्य–श्रव्य सामग्री की सहायता से विषय–वस्तु को अधिक सार्थक ढंग से विद्यार्थियों के सम्मुख प्रस्तुत करके बोधगम्य बनाया जाता है।

5. मूल्यांकन प्रणाली (Evaluation System)

बोध स्तर के शिक्षण का मुख्य उद्देश्य विषय पर स्वामित्व प्राप्त कराना है, इसलिए इसमें पाठ्यवस्तु पर स्वामित्व का परीक्षण ही मुख्य होता है। इस स्तर पर मूल्यांकन मौखिक एवं लिखित दोनों रूप से होता है। इसमें ज्ञान को अवबोध के स्तर पर मूल्यांकित किया जाता है। अवबोध के मूल्यांकन के लिए निम्न आधारों पर प्रश्न निर्मित किये जा सकते हैं–

अंतर ज्ञात करना, पहचानना, तुलना करना, वर्गीकरण करना, संबंध बनाना, व्याख्या करना आदि। इसमें आत्मसातीकरण, व्यवस्था, अभिव्यक्तिकरण को आधार बनाकर मूल्यांकन कार्य किया जाता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

8. स्मृति के शिक्षण की प्रक्रिया को अमनोवैज्ञानिक माना गया है, क्यों?

....

....

9. बोध स्तर के शिक्षण का मुख्य उद्देश्य क्या है?

....

....

7.10 अवबोध स्तर शिक्षण की विशेषताएँ, कमियाँ तथा सुझाव

अवबोध स्तर शिक्षण की विशेषताएँ, कमियाँ तथा सुझाव निम्नलिखित है–

7.10.1 अवबोध स्तर शिक्षण की विशेषताएँ

इसमें शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को बोधगम्य बनाया जाता है। इसमें सम्बन्ध स्थापन, सामान्यीकरण, नियम, सिद्धान्त इत्यादि पर बल दिया जाता है। इसमें प्रत्यक्ष ज्ञान के आधार पर शिक्षण कार्य किया जाता है। इस स्तर के शिक्षण में विद्यार्थी को केन्द्र बिन्दु माना जाता है, शिक्षक, आत्मसातीकरण कराने के लिए सारा प्रयास करता है।

7.10.2 अवबोध स्तर शिक्षण की कमियाँ

1. इस स्तर के शिक्षण में विषय के स्वामित्व पर ही ध्यान दिया जाता है, विद्यार्थियों के व्यक्तिगत विभिन्नता को ध्यान में नहीं रखा जाता है।
2. सभी शिक्षक आत्मसातीकरण कराने का प्रयास नहीं करते हैं।
3. इसमें ज्ञानात्मक पक्ष को ही ध्यान में रखकर शिक्षण कार्य किया जाता है भावात्मक एवं क्रियात्मक पक्षों पर अधिक बल नहीं दिया जाता है।
4. सभी शिक्षक सीखने के लिए प्रेरित नहीं करते है।
5. विषयवस्तु को छोटे–छोटे खण्डों में विभक्त करना एवं उसे मनोवैज्ञानिक आधार पर प्रस्तुत करना एक दुरूह कार्य है, सभी शिक्षक ऐसा नहीं करते हैं।
6. अधिकांशतः शिक्षक, विषयवस्तु को पढ़ाना ही अपनी जिम्मेदारी समझते हैं, क्योंकि बोधगम्य कराने के लिए नये–नये आव्यूह को निर्मित करना पड़ता है, इसलिए अधिकांश शिक्षक इस स्तर पर शिक्षण कार्य करने में उदासीनता बरतते हैं।

7.10.3 अवबोध स्तर के शिक्षण को सफल बनाने हेतु सुझाव

1. शिक्षक को बोध स्तर पर शिक्षण कार्य करने हेतु विषय वस्तु को छोटे–छोटे खण्डों में बांटकर, मनोवैज्ञानिक क्रम में व्यवस्थित करके प्रस्तुत करना चाहिए।
2. विषयवस्तु का प्रस्तुतीकरण व्यवस्थित, शृंखलाबद्ध एवं मनोवैज्ञानिक ढंग से होना चाहिए।
3. विद्यार्थियों के क्षमता, अभिरूचि, व्यक्तिगत विभिन्नताओं को ध्यान में रखकर प्रस्तुतीकरण करना चाहिये।
4. शिक्षक को क्रियाशील होकर विद्यार्थियों को अभिप्रेरित करना चाहिए।
5. परीक्षा उचित समय पर उचित माध्यम से ली जानी चाहिए विद्यार्थियों को अपने शब्दों में ही प्रश्नों का उत्तर देने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए।

7.11 चिन्तन स्तर शिक्षण

यह शिक्षण का सर्वोच्च स्तर माना जाता है। इसमें समस्या को प्रस्तुत करके विद्यार्थियों को स्वयं हल करने के लिए प्रेरित किया जाता है। मौलिक चिंतन ही इसकी विशेषता है। यह प्रथम दो स्तर से अधिक विचारयुक्त माना जाता है, इसमें विद्यार्थियों के आलोचनात्मक दृष्टिकोण को विकसित किया जाता है। इसमें विद्यार्थियों के बौद्धिक क्षमताओं के विकास एवं सृजनात्मक क्षमता के विकास के पर्याप्त अवसर मिलते हैं। इस स्तर पर विद्यार्थी ज्ञान तथा तथ्यों का मूल्यांकन करके नवीन तथ्यों तथा ज्ञान को खोजने का प्रयास करता है।

बिग्गी के अनुसार— "चिंतन—स्तर के शिक्षण में कक्षा में एक ऐसा वातावरण विकसित किया जाता है जो अधिक सजीव, प्रेरणात्मक, सक्रिय, आलोचनात्मक, संवेदनशील हो और नवीन एवं मौलिक चिंतन को खुला अवसर प्रदान करें। इस प्रकार का शिक्षण बोध—स्तर के शिक्षण की अपेक्षा अधिक कार्य—उत्पादन को बढ़ावा देता है।"

चिंतन स्तर शिक्षण समस्या केन्द्रित होता है इसमें शिक्षक विद्यार्थियों के सम्मुख ऐसी समस्या उत्पन्न करता है, जो विद्यार्थियों में मानसिक तनाव उत्पन्न करता है जिससे विद्यार्थी स्वयं प्रेरित होकर सक्रिय होते हुए समस्या को सुलझाने के लिए अपनी उपकल्पनायें बनाकर, उसका परीक्षण करना आरंभ कर देते है और अंत में विद्यार्थी ही समस्या का हल निकाल लेते हैं। समस्या को हल करने के लिए विद्यार्थी चिंतन, तर्क, अन्तर्दृष्टि का प्रयोग करते हैं।

चिंतन— मस्तिष्क में पहले से मौजूद विचारों का समस्या के उदय होने पर उत्पन्न होना चिंतन कहलाता है।

तर्क— समस्या के उदय होने पर उसके समाधान के लिए अनेक विकल्पों के बारे में सोचना ही तर्क कहलाता है।

अन्तर्दृष्टि— यह वह मानसिक दृष्टि/क्रिया है जिसके द्वारा समस्या अपने संपूर्ण रूप में सभी संबंधों के साथ स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होने लगती है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

10. चिंतन स्तर शिक्षण की क्या विशेषता है?

....

....

11. चिंतन किसे कहते हैं?

....

....

7.12 चिन्तन स्तर शिक्षण का प्रतिमान

हण्ट को चिंतन स्तर के शिक्षण का प्रवर्तक माना जाता है। इसलिए इस स्तर के शिक्षण प्रारूप को हन्ट शिक्षण प्रतिमान कहा जाता है। इस प्रतिमान का विवरण निम्नवत् है—

1. **उद्देश्य** (Focus) **:** इस स्तर के शिक्षण के मुख्यतः तीन उद्देश्य हैं—

   i) विद्यार्थियों में समस्या—समाधान योग्यता का विकास करना।

   ii) विद्यार्थियों में सृजनात्मक एवं आलोचनात्मक चिंतन का विकास करना।

   iii) विद्यार्थियों में मौलिक तथा स्वतंत्र चिंतन का विकास करना।

2. **संरचना** (Syntax) : इस शिक्षण स्तर की संरचना, समस्या के प्रकृति पर निर्धारित होता है। समस्या दो प्रकार की होती है—

   (i) व्यक्तिगत (ii) सामाजिक।

   चिंतन स्तर के शिक्षण—अधिगम को संपुष्ट करने एवं समर्थन देने वाले मुख्य दो सिद्धांत निम्नवत् है जो

इस स्तर के समस्या को हल करने के लिए संरचना को परिलक्षित करते हैं–

a) डीवी की समस्यात्मक परिस्थिति (Dewey's Problematic situation)

डीवी ने समस्यापरक परिस्थिति को निम्नवत् वर्णित किया है–

(i) पथ रहित परिस्थिति

व्यक्ति को जब अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के रास्ते नहीं दिखायी पड़ते तो इसे 'पथ रहित परिस्थिति' कहते है। इसे निम्नांकित चित्र से स्पष्ट समझा जा सकता है–

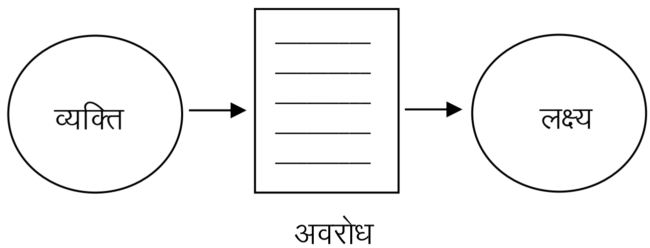

विद्यार्थी जब अपने लक्ष्य को प्राप्त करने का प्रयास करता है और मार्ग में बाधा आ जाती है, तब उसे तनाव होता है, ऐसे में वह बाधा पर विजय पाने के लिए समाधान सोचता है। ऐसे में यहाँ समस्यात्मक परिस्थिति उत्पन्न हो जाती है।

(ii) दो लक्ष्य वाली पथ परिस्थिति

जब व्यक्ति के जीवन में दो समान आकर्षण रखने वाले लक्ष्य व विकल्पी मार्ग प्रस्तुत हों, तो वह मानसिक द्वन्द्व या अन्तर्द्वन्द्व से ग्रसित हो जाता है, ऐसी स्थिति में वह निर्णय लेने में कठिनाई महसूस करता है कि किस विकल्प को चयन करें, यहाँ भी समस्यात्मक परिस्थिति उत्पन्न हो जाती है।

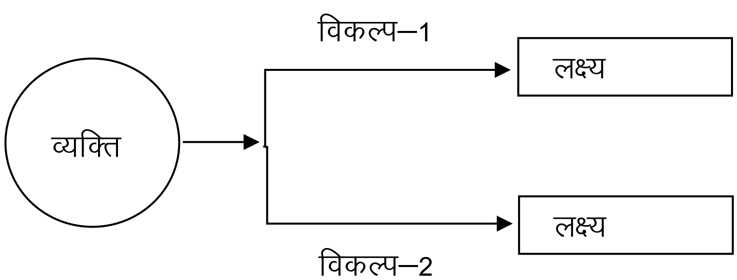

कभी ऐसी स्थिति भी उत्पन्न हो जाती है कि एक ही लक्ष्य को दो मार्गों पर चलकर प्राप्त किया जा सकता है और दोनों ही मार्ग सुगम होते हैं। यहाँ व्यक्ति किस मार्ग का अनुसरण करे? यह तनाव की स्थिति हो जाती है अर्थात् समस्यात्मक परिस्थिति है।

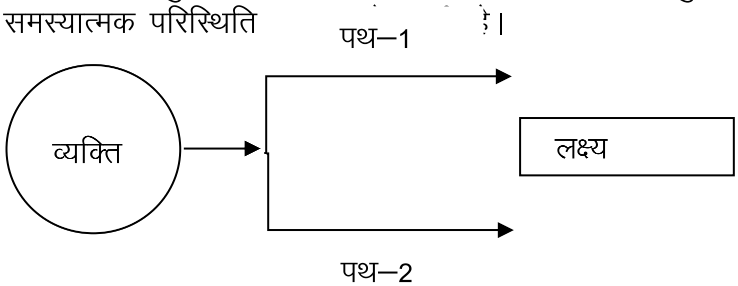

b) कर्ट लेविन की समस्यात्मक परिस्थिति (Kurt Lewin's Problematic Situation)

कर्ट लेविन ने माना है कि प्रत्येक व्यक्ति का कोई न कोई लक्ष्य होता है जिससे उसका व्यवहार नियंत्रित होता है। प्रत्येक व्यक्ति का अपना जीवन–क्षेत्र होता है जिसकी प्रकृति सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक

अधिक होती है। व्यक्ति और लक्ष्य की स्थिति तनाव उत्पन्न करती है, इससे समस्यात्मक परिस्थिति उत्पन्न हो जाती है।

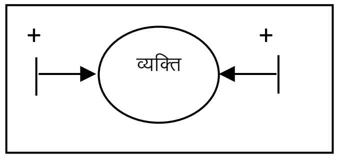

धनात्मक आकर्षण

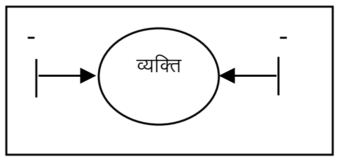

ऋणात्मक आकर्षण

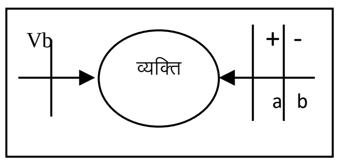

धनात्मक ऋणात्मक आकर्षण

कर्ट लेविन ने तनाव पथ परिस्थिति के तीन रूप प्रस्तुत किये हैं जो उपरोक्त चित्रों में दर्शाये गये हैं। यदि दो तरफ धनात्मक आकर्षण हो तब भी व्यक्ति तनाव की स्थिति में होता है। यदि दोनों तरफ ऋणात्मक आकर्षण हो तब तो स्थिति और भी गंभीर होती है। यदि दोनों ही तरफ ऋणात्मक एवं धनात्मक आकर्षण हो तो यह तनाव की स्थिति ही उत्पन्न करता है।

उपरोक्त उद्धरणों से स्पष्ट है कि चिंतन स्तर शिक्षण की संरचना के प्रथम सोपान में शिक्षक विद्यार्थियों के सम्मुख समस्यात्मक परिस्थिति निर्मित करता है। द्वितीय सोपान में विद्यार्थी परिस्थिति को देखकर तनाव में आते हैं और समस्या का समाधान ढूंढ़ने के लिए अपने चिंतन/सूझ का प्रयोग करते है, और परिकल्पना का निर्माण करते हैं। एक समस्या के लिए एक से अधिक परिकल्पनाएं निर्मित होती हैं। तृतीय सोपान में परिकल्पनाओं की पुष्टि के लिए प्रदत्तों का संकलन किया जाता है। प्रदत्तों के आधार पर परिकल्पनाओं की पुष्टि की जाती है। परिकल्पना समस्या के समाधान में सहायक हो सकती है और नहीं भी। चतुर्थ सोपान में परिकल्पनाओं के परीक्षण के आधार पर निष्कर्ष निकाले जाते हैं। निर्गत निष्कर्ष ही विद्यार्थियों के मौलिक विचार होते हैं।

3. **सामाजिक प्रणाली** (Social System) : इस स्तर पर विद्यार्थी अधिक क्रियाशील होते हैं, और स्वयं समस्या का समाधान खोजते हैं, अर्थात् इसमें विद्यार्थी करके सीखते हैं। इसमें विद्यार्थियों के स्वतः अभिप्रेरणा का महत्व अधिक होता है। विद्यार्थी, समस्या के प्रति जितना संवेदनशील होंगे उतना ही उनके मौलिक चिंतन का अधिक विकास होता है। इसमें शिक्षक का कार्य समस्या उत्पन्न करना एवं विद्यार्थियों की आवश्यकता पड़ने पर मार्गदर्शन करना होता है। इस स्तर के लिए वाद–विवाद, प्रयोगशाला, सेमिनार आदि विधियाँ अधिक उपयोगी है। यह शिक्षण स्तर पूर्णरूपेण प्रजातांत्रिक एवं सृजनात्मक है।
4. **संभरण/सहायक प्रणाली** (Support System) : इसमें ऐसी परिस्थितियाँ जो विद्यार्थियों में परिकल्पना निर्मित कराने में सहायक हो, जैसे–प्रयोगशाला, वाद–विवाद एवं सेमिनार की स्थितियां, सहायक प्रणाली के रूप में कार्य करती हैं।
5. **मूल्यांकन प्रणाली** (Evaluation System) : इस स्तर का मूल्यांकन क्रियात्मक स्तर के कार्य देखकर, वाद–विवाद, सेमिनार का आयोजन करके एवं निबंधात्मक परीक्षा लेकर मूल्यांकन किया जाता है। इस स्तर पर मूल्यांकन कार्य आलोचनात्मक, सृजनात्मक चिंतन परीक्षणों के द्वारा भी किया जा सकता है।

7.13 चिंतन स्तर शिक्षण की कमियाँ तथा सुझाव

चिंतन स्तर शिक्षण की कमियाँ तथा सुझाव निम्नलिखित है–

7.13.1 चिंतन स्तर शिक्षण की कमियाँ

1. इसमें किसी निश्चित कार्यक्रम का अनुसरण नहीं किया जाता है, विद्यार्थी अपने अनुसार परिस्थितियों को व्यवस्थित करते हैं।
2. यह उच्च स्तर की कक्षाओं के लिए ही उपयोगी है, निम्न कक्षाओं के लिए नहीं।
3. यह समस्या केन्द्रित है, समस्या के बिना इस स्तर पर कार्य करना संभव नहीं होता है।
4. कक्षा में सेमिनार, वाद–विवाद विधि ही चिंतन स्तर शिक्षण के लिए प्रभावी मानी जाती है, अन्य विधियाँ निष्प्रभावी हो जाती हैं।
5. चिंतन स्तर शिक्षण विधि, पाठ्यक्रम तथा पाठ्यपुस्तकों तक सीमित नहीं है।
6. इसमें शिक्षक भी धैर्यवान होना चाहिए जो प्रत्येक क्षण विद्यार्थी पर नजर रख सकें, ऐसे शिक्षकों का मिलना अत्यन्त दुरूह कार्य है।

7.13.2 चिंतन स्तर के शिक्षण के लिए सुझाव

1. स्मृति स्तर तथा बोध स्तर के शिक्षण की सफलता के उपरांत ही विद्यार्थियों को चिंतन स्तर के शिक्षण में प्रवेश कराना चाहिए।
2. इस स्तर पर कार्य करते समय शिक्षक को अधिक सर्तक रहना चाहिए।
3. अध्यापक को विद्यार्थियों के आकांक्षा स्तर को प्रेरित करके ऊँचा करना चाहिए, जिससे विद्यार्थी अधिक से अधिक उत्साहित होकर प्रतिभाग कर सकें।
4. शिक्षक को इस स्तर के शिक्षण में 'ज्ञानात्मक–क्षेत्र मनोविज्ञान' (Cognitive-Field Psychology) को ही महत्व देना चाहिए, जिससे विद्यार्थियों के अधिकांश कमजोरियों को दूर किया जा सकें।
5. शिक्षक समस्या को इस तरीके से प्रस्तुत करें कि विद्यार्थी समस्या की अनुभूति कर सकें एवं परिकल्पनाओं का प्रतिपादन कर सकें। शिक्षक को समाधानों को सोचने के लिए समुचित वातावरण तथा अवसर प्रदान करना चाहिए।

7.14 शिक्षण की अवस्थाएँ

शिक्षण एक प्रक्रिया है और इस प्रक्रिया का विश्लेषण करने के उपरान्त जैक्शन (1966) नामक विद्वान ने पूरी शिक्षण प्रक्रिया को वैज्ञानिक ढंग से तीन अवस्थाओं/भागों में विभाजित किया है–

1. पूर्व–क्रिया अवस्था (Pre-active Stage)
2. अन्तःक्रिया अवस्था (Inter-active Stage)
3. उत्तर–क्रिया अवस्था (Post-active Stage)

ये तीनों अवस्थाएँ एक निश्चित क्रम से एक के बाद एक सम्पन्न होती है तथा प्रत्येक अवस्था के कुछ निश्चित कार्य होते हैं जिनकी सफलता पर पूरी शिक्षण प्रक्रिया की सफलता निर्भर करती है।

7.14.1 पूर्व–क्रिया अवस्था (Pre-active Stage)

शिक्षण की पूर्व–क्रिया अवस्था योजना, निर्धारण तथा चयन की अवस्था है। इसमें छात्रों को ज्ञान प्रदान करने के लिए योजना बनायी जाती है। किस विषयवस्तु को पढ़ाना है? उसे पढ़ाने का क्या उद्देश्य है? तथा किस विधि से पढ़ाया जायेगा? इन सभी बातों पर पूर्व–क्रिया अवस्था में विचार किया जाता है। अतः इस अवस्था को शिक्षण नियोजन अवस्था (Teaching Planning Stage) भी कहा जा सकता है।

पूर्व क्रिया अवस्था की अपनी कुछ विशिष्ट क्रियाएँ है, जिनके माध्यम से अध्यापन कार्य सम्पन्न किया जाता है, जैसे–

1. शिक्षण के उद्देश्यों का निर्धारण करना।
2. विषयवस्तु का निर्धारण करना।
3. शिक्षण की व्यूह रचनाओं के संबंध में निर्णय लेना।
4. शिक्षण युक्तियों का चुनाव करना।
5. शिक्षण शैली तथा पाठ के विभिन्न बिन्दुओं को मनोवैज्ञानिक एवं तर्कपूर्ण ढंग से क्रमबद्ध करने सम्बन्धी कार्य करना।
6. मूल्यांकन प्रविधियों का चयन करना।

ये सभी कार्य शिक्षण की पूर्व–क्रिया अवस्था में सम्पन्न की जाती है। पूर्व–क्रिया अवस्था में शिक्षक की भूमिका प्रमुख होती है, क्योंकि उपर्युक्त सभी कार्यों को शिक्षक द्वारा ही कक्षा में जाने से पूर्व सम्पन्न किया जाता है।

7.14.2 अन्तःक्रिया अवस्था (Inter-active Stage)

इस अवस्था में वे सभी क्रियायें आती है जिन्हें शिक्षक कक्षा में प्रवेश करने से लेकर विषयवस्तु प्रस्तुत करने के समय तक करता है। इस अवस्था में शिक्षक और छात्र दोनों कक्षा में आमने–सामने रहते हैं तथा पूर्व–क्रिया अवस्था में बनायी गयी योजना को व्यावहारिक ढंग से क्रियान्वित किया जाता है। इसी अवस्था में शिक्षक और छात्रों के मध्य अन्तःक्रियाएं होती हैं। शिक्षक, छात्रों को अनेक उद्दीपन प्रदान करता है, विषयवस्तु की व्याख्या करता है, प्रश्न पूछता है और छात्रों के द्वारा दिये गये उत्तरों को सुनता है तथा उन्हें लक्ष्य तक पहुँचाने का प्रयास करता है।

जैक्शन ने अन्तःक्रिया अवस्था के दौरान निम्नलिखित क्रियाओं की पहचान की है, जैसे–

1. शिक्षक द्वारा कक्षा के भौतिक वातावरण तथा कक्षा में बैठे हुए छात्रों की अनुभूति करना तथा साथ ही साथ छात्रों द्वारा शिक्षक को देखकर शिक्षक की योग्यता तथा प्रभावशीलता का अनुमान करना।
2. शिक्षक द्वारा छात्रों का स्तर, पूर्व ज्ञान (विषय से सम्बन्धित), रूचि तथा क्षमता ज्ञात करना तथा छात्रों के निदान के उपरान्त शिक्षण की अनुक्रियायें करना।
3. शिक्षक तथा छात्रों के मध्य शाब्दिक (Verbal) तथा अशाब्दिक (Non-Verbal) अन्तःक्रिया का होना। इसमें सावधानीपूर्वक उद्दीपकों का चयन करना, उन्हें अच्छी तरह से कक्षा में प्रस्तुत करना, पृष्ठ पोषण तथा पुनर्बलन का प्रयोग करना तथा कक्षा में छात्रों को नया ज्ञान देने के लिए विभिन्न प्रकार की शिक्षण युक्तियों (Teaching Strategies) का प्रयोग करना महत्वपूर्ण क्रियायें हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

12. किस स्तर के बाद चिंतन स्तर के शिक्षण में प्रवेश करना चाहिए?

....

....

13. शिक्षक छात्रों का निदान किस शिक्षण अवस्था में करता है?

....

....

14. पृष्ठपोषण तथा पुनर्बलन का प्रयोग किस शिक्षण अवस्था में होता है?

....

....

7.14.3 उत्तर क्रिया अवस्था (Post-active Stage)

इस अवस्था में शिक्षण–कार्य समाप्त हो जाने के पश्चात् शिक्षक यह जानना चाहता है कि उसने जो कुछ पढ़ाया, उसका छात्रों पर कितना प्रभाव पड़ा और छात्रों के व्यवहार में किस सीमा तक परिवर्तन हुआ? तथा भविष्य में वांछित व्यवहार की प्राप्ति के लिए उसे शिक्षण में किस प्रकार का परिवर्तन करना चाहिए? अतः स्पष्ट है कि उत्तर क्रिया अवस्था में छात्रों द्वारा सीखे गए कार्य का मूल्यांकन किया जाता है। मूल्यांकन का कार्य पूर्व–क्रिया अवस्था में निश्चित किए गए उद्देश्यों पर आधारित रहता है।

उत्तर क्रिया अवस्था के दौरान निम्नलिखित क्रियाएँ अधिक महत्वपूर्ण है, जैसे–

1. शिक्षण के द्वारा व्यवहार परिवर्तन के वास्तविक रूप को परिभाषित करना। वास्तविक रूप को मानदण्ड व्यवहार (Criterion-Behavior) कहते हैं। शिक्षण द्वारा छात्रों में आये वास्तविक परिवर्तन की तुलना अपेक्षित व्यवहार से करने पर यदि यह पता चलता है कि छात्रों में वांछित परिवर्तन आ गया है, तो शिक्षण को सफलतापूर्वक सम्पन्न माना जाता है। यदि वांछित परिवर्तन नहीं आता है तो शिक्षण को असफल माना जाता है।
2. छात्रों के व्यवहार परिवर्तन का मूल्यांकन करने के लिए वस्तुनिष्ठ, विश्वसनीय तथा वैध प्रविधियों का चयन करना, जिससे छात्रों के तीनों पक्षों–ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक का सही–सही मूल्यांकन हो सकें। इस कार्य के लिए निष्पत्ति परीक्षा की अपेक्षा मानदण्ड परीक्षा को अधिक महत्व दिया जाना चाहिए।
3. मूल्यांकन द्वारा शिक्षण की सफलता तथा असफलता का ज्ञान प्राप्त होता है तथा साथ ही साथ शिक्षक को अपनी शिक्षण त्रुटियों और सीमाओं का ज्ञान भी प्राप्त होता है। अतः मूल्यांकन के आधार पर शिक्षण नीतियों में परिवर्तन करना भी उत्तर क्रिया अवस्था का महत्वपूर्ण कार्य है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

15. मानदण्ड व्यवहार किसे कहते है?

....

....

16. शिक्षक को अपनी त्रुटियों और सीमाओं का ज्ञान कैसे होता है?

....

....

उपरोक्त सभी क्रियायें और अवस्थायें एक–दूसरे से जुड़ी हुई हैं। सभी शिक्षकों को इन तीनों अवस्थाओं में क्रियाओं को व्यवस्थित व समायोजित करके अपने शिक्षण को प्रभावपूर्ण बनाने का प्रयत्न करना चाहिए। मूल्यांकन के लिए बोधात्मक प्रश्नों का सहारा लिया जाता है, इसमें लघु उत्तरीय के साथ–साथ निबंधात्मक परीक्षाओं का भी सहारा लिया जाता है।

7.15 सारांश

शिक्षण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें एक अधिक अनुभवी व्यक्ति अपने से कम अनुभवी व्यक्ति को सीखने के लिए वातावरण निर्मित करता है साथ ही अपने अधिक अनुभव के आधार पर अर्जित ज्ञान को कम अनुभव वाले व्यक्ति को हस्तान्तरित करता है। शिक्षण प्रक्रिया में मुख्यतः तीन प्रकार के चर होते हैं– (i) स्वतंत्र चर, (ii) आश्रित चर, (iii) हस्तक्षेपी चर। तीनों चरों का समन्वय ही शिक्षण प्रक्रिया को पूर्ण करता है। शिक्षक, विद्यार्थी तथा विषयवस्तु क्रमशः स्वतंत्रचर, आश्रित चर तथा हस्तक्षेपी चर कहलाते है। कक्षा में शिक्षण करते समय शिक्षक के व्यवहार के आधार पर शिक्षण को तीन प्रकार से विवेचित कर सकते हैं– (i) एकतंत्रात्मक शिक्षण, (ii) प्रजातंत्रात्मक शिक्षण, (iii) हस्तक्षेप रहित शिक्षण। शिक्षण की पूर्ण प्रक्रिया को तीन स्तरों में विभाजित किया जा सकता है– (i) स्मृति स्तर (ii) बोध स्तर (iii) चिंतन स्तर। स्मृति स्तर पर प्रत्यास्मरण तथा रटने पर जोर दिया जाता है, यह अन्य विचारवान् स्तरों के लिए आधार प्रदान करता है। बोध स्तर का शिक्षण उद्देश्य केन्द्रित तथा सूझ–बूझ से युक्त होता है। बोध स्तर का उद्देश्य प्रत्यय का स्वामित्व प्राप्त करना है। चिंतन स्तर शिक्षण का सर्वोच्च स्तर होता है। चिंतन स्तर पर विद्यार्थी ज्ञान तथा तथ्यों का मूल्यांकन करके नवीन तथ्यों तथा ज्ञान को खोजने का प्रयास करता है। चिंतन स्तर शिक्षण समस्या केन्द्रित होता है।

शिक्षण की तीन अवस्थायें होती है– (i) पूर्व–क्रिया अवस्था, (ii) अन्तःक्रिया अवस्था, (iii) उत्तर–क्रिया अवस्था। शिक्षण की पूर्व क्रिया अवस्था में शिक्षण से संबंधित योजना बनायी जाती है और अन्तःक्रिया अवस्था में पूर्व क्रिया अवस्था में बनायी गयी योजना का क्रियान्वयन किया जाता है। उत्तर क्रिया अवस्था में मूल्यांकन का कार्य किया जाता है।

7.16 अभ्यास के प्रश्न

1. शिक्षण से आप क्या समझते हैं? इसके सम्प्रत्यय को उदाहरण देकर समझाइए।
2. शिक्षण के चरों का विस्तार से वर्णन कीजिए।
3. कक्षा में शिक्षक के व्यवहार के आधार पर शिक्षण प्रणाली की विवेचना कीजिए।
4. शिक्षण के स्तर से आप क्या समझते हैं? स्मृति स्तर के शिक्षण पर प्रकाश डालिए।
5. विभिन्न प्रकार के शिक्षण स्तरों पर टिप्पणी लिखिए।
6. अवबोध स्तर पर शिक्षण के स्वरूप की व्याख्या कीजिए।

7.17 चर्चा के बिन्दु

1. शिक्षण की विभिन्न अवस्थाएं क्या हैं? चर्चा कीजिए।
2. शिक्षण के विभिन्न स्तरों के मध्य क्या अन्तर है? चर्चा कीजिए।
3. शिक्षण के स्मृति, बोध तथा चिंतन स्तरों की प्रमुख विशेषताओं की चर्चा कीजिए।

7.18 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. शिक्षण पारस्परिक अन्तक्रियाः का वह प्रयास है जो शिक्षार्थी को कुछ उद्देश्यों की ओर अग्रसारित करता है।
2. शिक्षण प्रक्रिया में शिक्षक व छात्र के अलावा जो चर शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावित करता है, हस्तक्षेपी चर कहलाता है।
3. जिसमें शिक्षक पूर्ण रूप से सक्रिय रहता है एवं विद्यार्थी निष्क्रिय श्रोता होता है।
4. मानवीय संबंध व्यवस्था सिद्धान्त पर आधारित होता है।
5. मार्गदर्शक की भूमिका।

6. तीन स्तर होते हैं।
7. अनुभवों को अचेतन मन से चेतन मन में लाना।
8. क्योंकि इसमें केवल रटने पर बल दिया गया है।
9. विषय पर स्वामित्व प्राप्त कराना।
10. मौलिक चिंतन।
11. मस्तिष्क में पहले से मौजूद विचारों का समस्या के उदय होने पर उत्पन्न चिंतन कहलाता है।
12. स्मृति स्तर तथा बोध स्तर के शिक्षण की सफलता के बाद।
13. अन्तःक्रिया अवस्था।
14. अन्तःक्रिया अवस्था।
15. यवहार परिवर्तन के वास्तविक रूप को मानदण्ड व्यवहार कहते हैं।
16. मूल्यांकन द्वारा शिक्षण की सफलता तथा असफलता के ज्ञान के साथ–साथ शिक्षक को अपनी त्रुटियों और सीमाओं का ज्ञान भी प्राप्त होता है।

7.19 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. कुलश्रेष्ठ, एस0पी0 एवं सिंघल अनुपमा (2011), *शैक्षिक तकनीकी के मूल आधार,* आगरा : अग्रवाल पब्लिकेशन्स।
2. कपूर, उर्मिला (1986), *शैक्षिक तकनीकी, आगरा* : साहित्य प्रकाशन।
3. मिश्रा, आर0एम0 (2010), *शैक्षिक तकनीकी के तत्व एवं प्रबंधन,* लखनऊ : आलोक प्रकाशन।
4. Mangal, S.K. & Mangal, Uma (2013), *Essentials of Educational Technology*, Delhi : PHI Learning Pvt. Limited.
5. Sharma, R.A. (2010), *Technological Foundation of Education*, Meerut : R. Lal Book Depot.
6. Bhatt, B. D. & Sharma, S.R. (1992), *Educational technology-concept & technique*, New Delhi : Kanishka Publications.
7. Das, R.C. (1993), *Educational technology : A basic text*, New Delhi : Sterling Publication.
8. Kumar, K.L. (1996), *Educational Technology*, New Delhi : New Age.
9. Sharma, A. R. (2010), *Educational Technology*, Agra : Agrawal Publication.

इकाई– 8 : शिक्षण कौशल और सूक्ष्म शिक्षण

इकाई की संरचना

8.1 प्रस्तावना

8.2 इकाई के उद्देश्य

8.3 शिक्षण कौशल

8.3.1 परिभाषा

8.3.2 विशेषताएँ

8.4 उद्देश्य लेखन कौशल

8.5 पाठ प्रस्तावना कौशल

8.6 अनुशीलन प्रश्न कौशल

8.7 व्याख्या कौशल

8.8 दृष्टान्त कौशल

8.9 पुनर्बलन कौशल

8.10 उद्‌दीपन परिवर्तन कौशल

8.11 प्रदर्शन कौशल

8.12 श्यामपट लेखन कौशल

8.13 सूक्ष्म शिक्षण

8.13.1 सूक्ष्म शिक्षण का इतिहास

8.14 सूक्ष्म शिक्षण का अर्थ एवं परिभाषाएं

8.15 सूक्ष्म शिक्षण की आवश्यकता एवं विशेषताएँ

8.16 सूक्ष्म शिक्षण की मान्यतायें और सिद्धान्त

8.17 सूक्ष्म शिक्षण प्रक्रिया

8.17.1 सूक्ष्म शिक्षण के महत्वपूर्ण पद

8.17.2 प्रशिक्षक द्वारा प्रयुक्त प्रक्रिया

8.17.3 सूक्ष्म शिक्षण चक्र

8.17.4 सूक्ष्म शिक्षण में प्रयुक्त प्रविधियाँ

8.17.5 सूक्ष्म शिक्षण का भारतीय प्रतिरूप

8.18 सारांश

8.19 अभ्यास के प्रश्न

8.20 चर्चा के बिन्दु

8.21 बोध प्रश्नों के उत्तर

8.22 कुछ उपयोगी पुस्तकें

8.1 प्रस्तावना

शिक्षण कौशल, अध्यापन के दौरान शिक्षक द्वारा प्रयोग किए गए व्यवहारों का समूह है, जो छात्रों के अधिगम में सहायता प्रदान करता है। शिक्षण प्रक्रिया का विश्लेषण करके अनेक शिक्षण कौशलों की पहचान की गई है। एक अच्छा व निपुण शिक्षक बनने के लिए सभी छात्राध्यापकों को शिक्षण कौशलों का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए।

सूक्ष्म शिक्षण, शिक्षक प्रशिक्षण से संबंधित एक सम्प्रत्यय है जिसका प्रयोग छात्राध्यापकों के व्यावसायिक विकास के लिए किया जाता है। सूक्ष्म शिक्षण के माध्यम से छात्राध्यापकों को शिक्षण कौशलों का अभ्यास कराया जाता है।

अधिगम और शिक्षण की यह आठवीं इकाई है। इस इकाई में शिक्षण कौशल की अवधारणा, परिभाषा एवं प्रकार का विस्तृत वर्णन किया गया है तथा सूक्ष्म शिक्षण का अर्थ, परिभाषा, आवश्यकता, विशेषताएं, मान्यतायें, सिद्धान्त, प्रक्रिया, पद आदि का विस्तृत वर्णन किया गया है। इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आपको शिक्षण कौशल तथा सूक्ष्म शिक्षण को समझने में सुविधा होगी।

8.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि–

1. शिक्षण कौशल की अवधारणा को बता सकेंगे।
2. शिक्षण कौशल को परिभाषित कर सकेंगे।
3. शिक्षण कौशल के सभी प्रकारों को समझ सकेंगे।
4. शिक्षण कौशल का विस्तार से वर्णन कर सकेंगे।
5. सूक्ष्म शिक्षण के सम्प्रत्यय का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।
6. सूक्ष्म शिक्षण की आवश्यकता, विशेषताएं और मान्यताओं का वर्णन कर सकेंगे।
7. सूक्ष्म शिक्षण की प्रक्रिया, पद तथा चक्र से परिचित हो जायेंगे।

8.3 शिक्षण कौशल

शिक्षण कौशल के विषय में विस्तार से अध्ययन करने से पूर्व 'शिक्षण' और 'कौशल' इन दोनों शब्दों के बारे में जानना आवश्यक है।

शिक्षण एक उद्देश्यपूर्ण प्रक्रिया है जिसके माध्यम से विद्यार्थियों के व्यवहारों में वांछित परिवर्तन लाने के लिए शिक्षक द्वारा कक्षा में विभिन्न प्रकार की क्रियाएं सम्पादित की जाती है तथा कौशल से तात्पर्य किसी कार्य को अच्छी प्रकार से अर्थात् कुशलतापूर्वक करने से है। अतः शिक्षण कौशल से तात्पर्य उन सभी क्रियाओं से है जिन्हें शिक्षक कक्षा के अन्दर विद्यार्थियों के व्यवहारों में वांछित परिवर्तन लाने के उद्देश्य से कुशलतापूर्वक संपादित करता है।

8.3.1 परिभाषाएं

शिक्षण कौशल के अर्थ को स्पष्ट करने के लिए विभिन्न विद्वानों ने इसे निम्नलिखित प्रकार से परिभाषित किया है–

बी. के. पासी के अनुसार– "शिक्षण कौशल, छात्रों के सीखने के लिए सुगमता प्रदान करने के विचार से सम्पन्न की गयी सम्बन्धित शिक्षण क्रियाओं या व्यवहारों का समूह है।"

एन. एल. गेज के शब्दों में, "शिक्षण कौशल वे विभिन्न अनुदेशात्मक क्रियायें व प्रक्रियायें हैं, जिन्हें शिक्षक, कक्षा–कक्ष में अपने शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के लिए उपयोग करता है। ये शिक्षण की विभिन्न अवस्थाओं से सम्बन्धित होते हैं तथा ये शिक्षक के निरन्तर प्रयोग में आती हैं।"

मैकइन्टेयर तथा **व्हाइट** ने शिक्षण कौशल की चर्चा करते हुए लिखा है, "शिक्षण कौशल, शिक्षण व्यवहारों से सम्बन्धित वह स्वरूप है जो कक्षा की अन्तःप्रक्रिया द्वारा उन विशिष्ट परिस्थितियों को जन्म देता है जो शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक होती है और छात्रों को सीखने में सुगमता प्रदान करती है।"

अतः कहा जा सकता है कि शिक्षण कौशल शिक्षक के हाथ में वह उपकरण है जिसका उपयोग करके शिक्षक अपने कक्षा शिक्षण को प्रभावकारी तथा क्रियाशील बनाता है तथा विद्यार्थियों के व्यवहारों में वांछित परिवर्तन को सुनिश्चित करने का प्रयास करता है।

8.3.2 विशेषताएँ

वास्तव में शिक्षण–कौशल अध्यापन के समय शिक्षक के व्यवहारों का वह समूह है जो विद्यार्थियों के अधिगम में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सहायता प्रदान करता है। इसकी निम्नलिखित विशेषताएँ हैं–

1. शिक्षण कौशल शिक्षण प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाता है।
2. शिक्षण कौशल शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक होते हैं।
3. शिक्षण कौशल शिक्षक की कार्य कुशलता में वृद्धि करता है।
4. शिक्षण कौशल विषयवस्तु को बोधगम्य बनाता है।
5. शिक्षण कौशल शिक्षक और विद्यार्थी के बीच अन्तःक्रिया को सक्रिय बनाता है।
6. इसकी सहायता से कम समय में अधिक सूचनाएं प्रदान की जा सकती है।
7. शिक्षण कौशल, अध्यापन को रूचिकर बनाता है।

विभिन्न विद्वानों ने शिक्षण कौशलों की सूचियाँ अलग–अलग प्रस्तुत की है, किन्तु यह बताना कि इसमें कुल कितने कौशल होंगे, बहुत कठिन कार्य है। स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय तथा कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय ने क्रमशः 14 तथा 18 शिक्षण कौशलों की सूची तैयार की है। भारत में Centre for Advanced Study in Education (CASE) एम0एस0 विश्वविद्यालय बड़ौदा ने 21 शिक्षण कौशलों की सूची तैयार की है।

प्रो. डी. एलन तथा **प्रो. के. रायन** ने विभिन्न विषयों में विभिन्न स्तरों पर प्रयोग होने वाले 14 शिक्षण कौशलों की सूची प्रस्तुत किया है जो इस प्रकार है–

1. उद्दीपन परिवर्तन (Stimulus Variation)
2. प्रस्तावना या विन्यास प्रेरणा (Set Induction)
3. समीपता (Closure)
4. शिक्षक मौन एवं अशाब्दिक संकेत (Teacher Silence and Non-Verbal cues)
5. पुनर्बलन (Reinforcement)
6. प्रश्न पूछने में गति (Fluency in asking questions)
7. अनुशीलन प्रश्न (Probing Questions)
8. अपसारी या विकेन्द्री प्रश्न (Divergent Questions)
9. व्यवहार की पहचान एवं देखभाल (Recognizing and attending Behavior)
10. दृष्टान्त देना तथा उदाहरणों का प्रयोग करना (Illustrating and use of Example)
11. व्याख्यान देना (Lecturing)
12. उच्च स्तरीय प्रश्न (Higher order Questions)
13. नियोजित पुनरावृत्ति (Planned Repetition)

14. सम्प्रेषण पूर्णता (Completeness of Communication)

सन् 1976 में बी. के. पासी ने अपनी पुस्तक "Becoming Better Teacher A Microteaching Approach" में 13 शिक्षण कौशलों को सूचीबद्ध किया है जो इस प्रकार है–

1. अनुदेशक उद्देश्यों को लिखना (Writing Instructional Objectives)
2. पाठ की प्रस्तावना (Introducing of a Lession)
3. प्रश्नों की प्रवाहशीलता (Fluency in Question)
4. अनुशीलन प्रश्न (Probing Questions)
5. व्याख्या (Explaining)
6. उदाहरण के साथ दृष्टान्त देना (Illustrating with example)
7. उद्दीपन परिवर्तन (Stimulus Variation)
8. मौन एवं अशाब्दिक संकेत (Silence or Non-Verbal signal)
9. पुनर्बलन (Reinforcement)
10. छात्रों की सहभागिता बढ़ाना (Increasing students Participation)
11. श्यामपट का प्रयोग (Using Black Board)
12. समापन की प्राप्ति (Achieving Closure)
13. व्यवहार की पहचान एवं ध्यान (Recognizing and Attending Behavior)

इसी प्रकार से सन् 1979 में डॉ0 जंगीरा ने 20 शिक्षण–कौशल बताये तथा सन् 1983 में डॉ0 एस0पी0 कुलश्रेष्ठ, डॉ. वी.के. मिश्रा तथा डॉ. आभा ममगाइन ने शिक्षण प्रक्रिया का विश्लेषण कर 15 शिक्षण–कौशलों की पहचान की है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. शिक्षण कौशल से क्या तात्पर्य है?

....

....

2. डी. एलन तथा के. रायन ने कितने शिक्षण कौशलों को सूचीबद्ध किया है?

....

....

8.4 उद्देश्य लेखन कौशल

प्रत्येक प्रक्रिया के कुछ उद्देश्य होते हैं जिनको प्राप्त करने के लिए व्यक्ति क्रिया सम्पन्न करता है। शिक्षण भी एक प्रक्रिया है जिसके कुछ निश्चित उद्देश्य होते हैं। इन उद्देश्यों की प्राप्ति तभी संभव है जब उद्देश्य

लिखते समय कुछ बातों का ध्यान रखा जाय, जैसे– (i) उद्देश्य व्यवहारपरक होने चाहिए (ii) उद्देश्य विषयवस्तु से सीधे सम्बन्धित होने चाहिए (iii) विद्यार्थियों के स्तर के हिसाब से ही उद्देश्य निश्चित करना चाहिए (iv) शैक्षिक उद्देश्य विद्यार्थियों के ज्ञानात्मक, भावात्मक, क्रियात्मक, तीनों व्यवहारों पर आधारित होना चाहिए (v) शैक्षिक उद्देश्य अनिवार्य रूप से अधिगम और विकास के मनोविज्ञान पर आधारित होना चाहिए।

शिक्षा के उद्देश्य मूलतः दो प्रकार के होते हैं– (i) शैक्षिक (ii) शिक्षण उद्देश्य। शैक्षिक उद्देश्य व्यापक होते हैं। इनका निर्माण शिक्षा तथा विद्यालयों के लिए किया जाता है, जबकि शिक्षण उद्देश्य अपेक्षाकृत संकुचित होता है। शिक्षण उद्देश्यों का संबंध कक्षा शिक्षण के विभिन्न विषयों से होता है। शिक्षण उद्देश्यों की सहायता से ही शैक्षिक उद्देश्यों को प्राप्त किया जाता है।

उद्देश्य लेखन की स्पष्टता की माप कुछ कसौटियों के आधार पर की जा सकती है, जैसे–शिक्षण के उपरान्त विद्यार्थियों के व्यवहारों में किस प्रकार से परिवर्तन अपेक्षित है, उद्देश्यों में इसका वर्णन होना चाहिए।

1. अपेक्षित व्यवहार क्या होगा और इसकी न्यूनतम सीमा क्या होगी, यह बात भी उद्देश्य लेखन में स्पष्ट होनी चाहिए।
2. उन परिस्थितियों का भी उल्लेख होना चाहिए जिनमें उपरोक्त व्यवहार अपेक्षित है।

घटक

उद्देश्य लेखन कौशल के निम्नलिखित घटक होते हैं–

1. उद्देश्यों को विद्यार्थी व्यवहारपरक बनाना।
2. विद्यार्थी व्यवहार को निरीक्षण योग्य व्यवहारों के रूप में व्यक्त करना।
3. व्यवहार किस परिस्थिति में होगा, इसका स्पष्ट संकेत करना।
4. विद्यार्थियों के कार्य/अधिगम का न्यूनतम स्तर निर्धारित करना।
5. विषयवस्तु के साथ उद्देश्य का सार्थक संबंध होना।

इन घटकों के मापन हेतु निरीक्षण अनुसूची तथा रेटिंग स्केल इस प्रकार का होगा–

व्यवहार घटक	रेटिंग स्केल						
1. उद्देश्य विद्यार्थी व्यवहारपरक हैं।	0	1	2	3	4	5	6
2. विद्यार्थी व्यवहार को निरीक्षण योग्य व्यवहारों के रूप में व्यक्त करने योग्य हैं।	0	1	2	3	4	5	6
3. व्यवहार किस परिस्थिति में होगा, इसका स्पष्ट संकेत करते हैं।	0	1	2	3	4	5	6
4. छात्रों के कार्य/अधिगम का न्यूनतम स्तर निर्धारित करते हैं।	0	1	2	3	4	5	6
5. विषयवस्तु के साथ उद्देश्य का सार्थक सम्बन्ध है।	0	1	2	3	4	5	6

8.5 पाठ प्रस्तावना कौशल

माना जाता है कि अगर किसी कार्य का आगाज अच्छा हो तो उस कार्य का अन्त भी अच्छा ही होता है। शिक्षण की प्रक्रिया में भी बहुत हद तक यह बात सही है। इसीलिए शिक्षण कौशलों में एक कौशल 'पाठ प्रस्तावना' भी निश्चित किया गया है जिसमें शिक्षक को कुशल होना चाहिए।

'पाठ प्रस्तावना' से तात्पर्य उन सभी क्रियाओं से है जिन्हें शिक्षक पाठ पढ़ाने के पूर्व विद्यार्थी का ध्यान पाठ की ओर ले जाने के लिए करता है। प्रस्तावना कौशल का प्रयोग करके शिक्षक विद्यार्थियों को नया पाठ पढ़ने के लिए तैयार करता है तथा पाठ में उनकी रूचि और जिज्ञासा उत्पन्न करता है। प्रस्तावना कौशल का प्रयोग शिक्षक कई प्रकार से कर सकता है जैसे– प्रश्न पूछकर, कहानी सुनाकर, चित्र दिखाकर, कविता सुनाकर

तथा विषय की व्याख्या संदर्भ एवं प्रसंगानुसार करके इत्यादि।

शिक्षण की प्रक्रिया कुछ महत्वपूर्ण सिद्धान्तों पर आधारित होती है, जैसे– ज्ञात से अज्ञात की ओर, सरल से कठिन की ओर तथा रूचिकर से अरूचिकर की ओर। इन सिद्धान्तों पर आधारित शिक्षण के लिए प्रस्तावना को विद्यार्थी के पूर्व ज्ञान पर आधारित होना चाहिए तथा रूचिकर एवं सरल होना चाहिए। प्रस्तावना, कक्षा में एक ऐसा माहौल उत्पन्न करता है जिससे विद्यार्थियों में किसी विशेष कार्य को करने की भावना जाग्रत होती है।

'पाठ प्रस्तावना' के कुछ निश्चित उद्देश्य होते हैं, जैसे–

1. विद्यार्थियों का ध्यान प्रकरण पर केन्द्रित कराना।
2. विद्यार्थियों के पूर्व ज्ञान का पता लगाना।
3. किसी नये विचार या सिद्धान्त को महत्वपूर्ण बनाना।
4. विद्यार्थियों की रूचि तथा सहभाग को प्रेरित करना।

प्रस्तावना कौशल के घटक

प्रस्तावना कौशल के निम्नलिखित घटक हैं–

1. कथनों एवं प्रश्नों का विद्यार्थियों के पूर्व ज्ञान से सम्बन्ध।
2. कथनों एवं प्रश्नों का मूलपाठ तथा उसके उद्देश्यों से सम्बन्ध।
3. विचारों, कथनों एवं प्रश्नों में श्रृंखलाबद्धता।
4. पाठ उद्देश्य एवं विद्यार्थी स्तर के अनुसार उपयुक्त उपकरणों एवं साधनों का चयन एवं प्रयोग।
5. उपयुक्त एवं समुचित अवधि विस्तार।
6. विद्यार्थी ध्यान एवं रूचि आकर्षण।
7. विद्यार्थियों को अभिप्रेरित करने की क्षमता।
8. अध्यापक में उत्साह एवं सजगता।

प्रस्तावना कौशल के मापन हेतु निरीक्षण अनुसूची तथा रेटिंग स्केल निम्नवत् प्रकार का होगा–

घटक	**रेटिंग स्केल**						
	न्यूनतम			अधिकतम			
1. शिक्षक ने विद्यार्थियों के पूर्व ज्ञान का प्रयोग किया।	1	2	3	4	5	6	7
2. कथन एवं प्रश्नों को मूल पाठ से जोड़ा गया।	1	2	3	4	5	6	7
3. शिक्षक कथन श्रृंखलाबद्ध थे।	1	2	3	4	5	6	7
4. समुचित उपकरणों एवं साधनों का प्रयोग किया गया।	1	2	3	4	5	6	7
5. प्रस्तावना अवधि विस्तार समुचित थी।	1	2	3	4	5	6	7

6. शिक्षक विद्यार्थियों का ध्यान आकर्षित कर सका।	1	2	3	4	5	6	7
7. विद्यार्थियों को अभिप्रेरित किया गया।	1	2	3	4	5	6	7
8. शिक्षक ने उत्साहपूर्वक प्रस्तावना को प्रस्तुत किया ।	1	2	3	4	5	6	7

8.6 अनुशीलन प्रश्न कौशल

पाठ्य सामग्री को सरल तथा स्पष्ट करने में प्रश्नों का विशेष महत्व है। ग्रीक दार्शनिक सुकरात तो प्रश्नों के माध्यम से ही ज्ञान प्रदान किया करता था, जिसे वर्तमान में 'प्रश्नोत्तर विधि' के नाम से जाना जाता है तथा प्राचीन काल में आश्रमों के गुरु भी प्रश्नों के माध्यम से ही शिक्षा देते थे तथा शिष्य अपनी शंका समाधान के लिए गुरु से प्रश्न करते थे। वर्तमान शिक्षा प्रणाली में प्रश्नों का प्रयोग एक साधन के रूप में होने लगा है। शिक्षक प्रश्नों की सहायता से छात्रों की कल्पना, तर्क, चिंतन तथा निर्णय आदि शक्तियों को विकसित करके, उनके मस्तिष्क को विचारशील बनाता है।

अतः उपर्युक्त बातों से स्पष्ट है कि प्रश्न पूछना एक कला है जिसमें शिक्षक को निपुण होना चाहिए।

अनुशीलन प्रश्नों से तात्पर्य ऐसे प्रश्नों से होता है जिन्हें पूछकर शिक्षक छात्रों का ध्यान आकर्षित करता है, अभिप्रेरित करता है तथा छात्रों में रूचि एवं जिज्ञासा उत्पन्न करके उनके पूर्व ज्ञान को नवीन ज्ञान से जोड़ता है। ऐसे प्रश्नों से विद्यार्थी चिंतनशील होकर प्रत्यय की गहराई में जाते हैं और विभिन्न पहलुओं पर ध्यानपूर्वक विचार करते हैं।

निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति हेतु अनुशीलन प्रश्नों का प्रयोग किया जाता है–

1. विद्यार्थियों को प्रश्नों के माध्यम से सही उत्तर की ओर ले जाने के लिए।
2. विद्यार्थियों द्वारा दिए गये उत्तरों को और अधिक स्पष्ट करने के लिए।
3. उत्तर को विस्तृत परिप्रेक्ष्य में देखने के लिए तथा विद्यार्थियों की सहायता करने के लिए।
4. विद्यार्थियों की कक्षा में सहभागिता बढ़ाने के लिए।
5. विद्यार्थियों में आलोचनात्मक सजगता उत्पन्न करने के लिए।

अनुशीलन प्रश्न कौशल के घटक

1. संकेत देना।
2. विस्तृत सूचना प्राप्ति।
3. पुनः केन्द्रीयकरण।
4. पुनः प्रेषण।
5. आलोचनात्मक सजगता।

कक्षा में शिक्षक को कई बार नकारात्मक उत्तर प्राप्त होते हैं, जैसे– मुझे नहीं मालूम, मैं नही जानता इत्यादि, तो शिक्षक संकेत देकर छात्रों को सही उत्तर देने के लिए प्रेरित करता है।

जब विद्यार्थी अधूरा उत्तर देते हैं तो शिक्षक विस्तृत सूचना प्राप्ति घटक का प्रयोग करके पूर्ण उत्तर प्राप्त करने का प्रयास करता है। जैसे– शिक्षक यह कहता है कि तुम ठीक कह रहे हो, हाँ यह बात स्पष्ट करो, कुछ और बताओ आदि।

प्राप्त ज्ञान को नवीन विषयवस्तु से जोड़ने के लिए पुनः केन्द्रीयकरण घटक का प्रयोग किया जाता है।

पुनः प्रेषण के अन्तर्गत शिक्षक एक ही प्रश्न को कई विद्यार्थियों से पूछता है। अन्त में शिक्षक विद्यार्थियों में आलोचनात्मक सजगता उत्पन्न करने के लिए दिए गए उत्तर की सार्थकता बताने को कहता है।

अनुशीलन प्रश्न कौशल के मापन हेतु निरीक्षण अनुसूची तथा रेटिंग स्केल निम्नवत् प्रकार का होगा–

घटक	**रेटिंग स्केल**					
	न्यूनतम			अधिकतम		
1. शिक्षक द्वारा संकेतात्मक प्रश्न पूछे गए।	1	2	3	4	5	6
2. विस्तृत जानकारी के लिए प्रश्न पूछे गए।	1	2	3	4	5	6
3. पुनः केन्द्रीयकरण के लिए प्रश्न पूछे गए।	1	2	3	4	5	6
4. प्रश्नों को प्रेषित किया गया।	1	2	3	4	5	6
5. आलोचनात्मक सजगता जागृत करने का प्रयास किया गया।	1	2	3	4	5	6

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

3. प्रस्तावना किस पर आधारित होना चाहिए।

....

....

4. अनुशीलन प्रश्न कौशल के सभी घटकों के नाम बताइए।

....

....

8.7 व्याख्या कौशल

व्याख्या से तात्पर्य पाठ को सुलझाने और उनके भावों को अलग–अलग करके सरल व स्पष्ट रूप में विद्यार्थियों के सम्मुख रखने से है जिससे विद्यार्थियों को समझने में कोई कठिनाई न हो और उसके ज्ञान में वृद्धि हो सके। स्पष्ट है कि किसी कठिन बात को सरल करके समझाना ही व्याख्या कहलाता है। अतः प्रत्येक शिक्षक को व्याख्या करने में कुशल होना चाहिए जिससे वह विद्यार्थियों को सरल ढंग से समझा सकें।

इसे स्पष्टीकरण कौशल भी कहते है। अच्छा व्याख्यान वही होता है, जिसे विद्यार्थी सरलता से समझ सकें, सुगमता से ग्रहण कर सकें और सहज ही उसे बता सकें।

घटक

1. स्पष्ट प्रारम्भिक कथन का प्रयोग।
2. विचारों, कथनों को जोड़ने वाले शब्दों एवं मुहावरों का प्रयोग।
3. स्पष्ट निष्कर्षात्मक वक्तव्य का प्रयोग।
4. भाषा में प्रवाह।
5. कथनों में तारतम्यता।
6. असम्बद्ध कथनों का अभाव।
7. विद्यार्थियों के बोध के परीक्षण हेतु बीच–बीच में प्रश्न पूछना।
8. उपयुक्त शब्दों का प्रयोग।

इस कौशल के मापन हेतु निरीक्षण अनुसूची तथा रेटिंग स्केल इस प्रकार का होगा–

घटक	**रेटिंग स्केल**					
	न्यूनतम			अधिकतम		
1. प्रारम्भिक कथनों का स्पष्टता से प्रयोग किया गया।	1	2	3	4	5	6
2. निष्कर्षात्मक कथन स्पष्ट थे।	1	2	3	4	5	6
3. भाषा में प्रवाह था।	1	2	3	4	5	6
4. कथनों में उपयुक्त शब्दों का प्रयोग किया गया।	1	2	3	4	5	6
5. कथनों में तारतम्यता थी।	1	2	3	4	5	6
6. असम्बद्ध कथनों का अभाव था।	1	2	3	4	5	6
7. विचारों एवं कथनों को जोड़ने वाले शब्दों एवं मुहावरों का प्रयोग किया गया।	1	2	3	4	5	6
8. विद्यार्थियों के बोध के परीक्षण के लिए बीच–बीच में प्रश्न पूछ गए।	1	2	3	4	5	6

8.8 दृष्टान्त कौशल

दृष्टान्त से तात्पर्य उन वस्तुओं, घटनाओं और दशाओं से है जिसे शिक्षक अध्यापन को सरल, बोधगम्य तथा स्पष्ट करने के लिए उदाहरण के रूप में वर्णन करता है। अतः स्पष्ट है कि दृष्टान्त कौशल का प्रयोग शिक्षक द्वारा किसी विचार, सिद्धान्त तथा सम्प्रत्यय को छात्रों को समझाने के लिए प्रयोग किया जाता है।

दृष्टान्तों का प्रयोग दो प्रकार से शिक्षक द्वारा किया जाता है– आगमन विधि से तथा निगमन विधि से।

आगमन विधि में उदाहरणों की व्याख्या के आधार पर नियम या सिद्धान्त निकाले जाते हैं। इस विधि में शिक्षण के सूत्र जैसे– (1) ज्ञात से अज्ञात की ओर (2) विशिष्ट से सामान्य की ओर और (3) स्थूल से सूक्ष्म की ओर का प्रयोग किया जाता है।

निगमन विधि में सर्वप्रथम नियम या सिद्धान्त छात्रों के सामने प्रस्तुत किया जाता है और उसकी पुष्टि

के लिए विभिन्न उदाहरण प्रस्तुत किये जाते हैं। इसमें सामान्य से विशिष्ट की ओर और सूक्ष्म से स्थूल की ओर सूत्रों का प्रयोग किया जाता है।

घटक

1. सरल उदाहरणों का चयन एवं निर्माण।
2. विचारों एवं सम्प्रत्ययों से सम्बन्धित उदाहरणों का चयन एवं निर्माण।
3. रूचिकर उदाहरणों का चयन एवं निर्माण।
4. उदाहरण देने के लिए उपयुक्त माध्यम का चयन एवं निर्माण।
5. बीच–बीच में समुचित प्रश्न पूछकर विद्यार्थियों की समझ की जाँच करना।

छात्रों से उसी प्रकार से सम्बन्धित उदाहरण देने के लिए कहना।

दृष्टान्त व्याख्या कौशल के मापन हेतु निरीक्षण अनुसूची तथा रेटिंग स्केल इस प्रकार का होगा–

घटक	**रेटिंग स्केल**					
	न्यूनतम			अधिकतम		
1. सरल उदाहरणों का चयन एवं निर्माण।	1	2	3	4	5	6
2. विचारों एवं सम्प्रत्ययों से सम्बद्ध उदाहरणों का चयन एवं निर्माण।	1	2	3	4	5	6
3. रूचिकर उदाहरणों का चयन एवं निर्माण।	1	2	3	4	5	6
4. उदाहरणों देने के लिए उपयुक्त माध्यम का चयन एवं निर्माण।	1	2	3	4	5	6
5. बीच–बीच में समुचित प्रश्न पूछकर छात्रों की समझ की जॉच करना।	1	2	3	4	5	6
6. छात्रों को उसी प्रकार के या सम्बन्धित उदाहरण देने के लिए कहना।	1	2	3	4	5	6

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

5. व्याख्या से क्या तात्पर्य है।

....

....

6. दृष्टान्तों का प्रयोग शिक्षक किन विधियों के माध्यम से करता है?

....

....

8.9 पुनर्बलन कौशल

पुनर्बलन से अभिप्राय शिक्षक द्वारा कक्षा में की गई उन सभी क्रियाओं से है जो छात्रों को वांछित अनुक्रिया करने के लिए प्रोत्साहित करें। पुनर्बलन कौशल का प्रयोग शिक्षक अनेक युक्तियों की सहायता से करता है। अध्यापन के दौरान जिस वस्तु या उद्दीपन की सहायता से शिक्षक छात्रों को पुनर्बलन देता है उसे पुनर्बलन (Reinforce) कहा जाता है।

मुख्यतः पुनर्बलन दो प्रकार का होता है–

(1) धनात्मक पुनर्बलन

- शाब्दिक धनात्मक पुनर्बलन
- अशाब्दिक धनात्मक पुनर्बलन

(2) ऋणात्मक पुनर्बलन

- शाब्दिक ऋणात्मक पुनर्बलन
- अशाब्दिक ऋणात्मक पुनर्बलन

शिक्षक यदि किसी अनुक्रिया की संभावना को बढ़ाना चाहता है तो वह अपने शिक्षण के दौरान धनात्मक पुनर्बलन का प्रयोग करता है परन्तु जब शिक्षक छात्रों के किसी अनुचित अनुक्रिया को दूर करना चाहता या समाप्त करना चाहता है, तो वह नकारात्मक पुनर्बलन का प्रयोग करता है।

वर्तमान में शिक्षण में पुनर्बलन का महत्व काफी बढ़ गया है, इसलिए शिक्षक का अन्य कौशलों के साथ–साथ पुनर्बलन कौशल के प्रयोग में भी पारंगत/निपुण होना चाहिए।

घटक

1. शाब्दिक धनात्मक पुनर्बलन का प्रयोग।
2. अशाब्दिक धनात्मक पुनर्बलन का प्रयोग।
3. ऋणात्मक शाब्दिक पुनर्बलन का अभाव।
4. ऋणात्मक अशाब्दिक पुनर्बलन का अभाव।
5. पुनर्बलकों का सही प्रयोग।

पुनर्बलकों का समुचित प्रयोग।

पुनर्बलन कौशल के मापन हेतु निरीक्षण अनुसूची तथा रेटिंग स्केल इस प्रकार का होगा–

घटक	**रेटिंग स्केल**					
	न्यूनतम			अधिकतम		
1. प्रशंसात्मक कथनों का प्रयोग किया गया।	1	2	3	4	5	6
2. हाव–भाव या अन्य धनात्मक अशाब्दिक संकेतों का प्रयोग किया गया।	1	2	3	4	5	6
3. नकारात्मक शाब्दिक संकेतों का प्रयोग किया गया।	1	2	3	4	5	6

4. नकारात्मक अशाब्दिक संकेतों का प्रयोग किया गया।	1	2	3	4	5	6
5. छात्रों के सुझावों का समर्थन किया गया।	1	2	3	4	5	6
6. पुनर्बलन का अधिक प्रयोग किया गया।	1	2	3	4	5	6
7. छात्रों के सही उत्तरों को श्यामपट पर लिखा गया।	1	2	3	4	5	6

8.10 उद्दीपन परिवर्तन कौशल

कक्षा में शिक्षक का कार्य ऐसी परिस्थितियाँ पैदा करना है जिसमें छात्र सीखने के लिए आकर्षित हो तथा प्रेरित हो और इसके लिए शिक्षक जान–बूझकर अपने व्यवहारों में अध्यापन के दौरान परिवर्तन करता रहता है। स्पष्ट है कि शिक्षक द्वारा किए गए इन व्यवहारों का उद्देश्य छात्रों का ध्यान अपनी ओर तथा विषयवस्तु की ओर आकर्षित करना होता है। अतः शिक्षक द्वारा कक्षा में किए गए उन सभी व्यवहारों को जो छात्रों का ध्यान पाठ में लगाए रखते है, उद्दीपन परिवर्तन कौशल कहलाते है।

शिक्षक, अध्यापन को रूचिकर बनाने के लिए विभिन्न प्रकार के उद्दीपन का प्रयोग करता है, जैसे– सहायक सामग्री का प्रयोग, श्यामपट पर लेखन करना, छात्रों के पास जाकर प्रश्न पूछना, चेहरे पर हाव–भाव बदलकर अपनी बात कहना, हाथ से इशारे करना आदि।

अतः उपर्युक्त बातों के आधार पर कहा जा सकता है कि अन्य कौशल की भांति उद्दीपन परिवर्तन कौशल में भी प्रत्येक शिक्षक को निपुण होना चाहिए। उद्दीपन परिवर्तन कौशल के निम्नलिखित घटक होते हैं–

1. शरीर संचालन।
2. हाव–भाव, मुखमुद्रा, आँखों व हाथों के संकेत।
3. स्वर में उतार–चढ़ाव।
4. भाव केन्द्रीयकरण।
5. छात्र शिक्षक अन्तःक्रिया में परिवर्तन।
6. मौन विराम।
7. दृश्य–श्रव्य क्रम परिवर्तन।
8. छात्रों का सहयोग।

इन घटकों के आधार पर उद्दीपन परिवर्तन कौशल की निरीक्षण अनुसूची तथा रेटिंग स्केल का प्रारूप इस प्रकार का होगा–

घटक	**रेटिंग स्केल**					
	न्यूनतम			अधिकतम		
1. शिक्षक ने शिक्षण करते समय समुचित शरीर संचालन किया।	1	2	3	4	5	6

2. शिक्षक ने शिक्षण के दौरान समुचित हाव–भाव प्रयोग किया।	1	2	3	4	5	6
3. स्वर में उतार–चढ़ाव लाया गया।	1	2	3	4	5	6
4. भाव केन्द्रीकरण की प्रक्रिया की गई।	1	2	3	4	5	6
5. छात्र शिक्षक अन्तःक्रिया में परिवर्तन लाया गया।	1	2	3	4	5	6
6. मौन विराम का प्रयोग किया गया।	1	2	3	4	5	6
7. दृश्य–श्रव्य कम में परिवर्तन किया गया।	1	2	3	4	5	6
8. उद्दीपन परिवर्तनों में छात्रों का सहयोग लिया गया।	1	2	3	4	5	6

8.11 प्रदर्शन कौशल

शिक्षण में प्रदर्शन से अभिप्राय है, किसी प्रयोग या क्रिया को करके दिखलाना। अतः प्रदर्शन कौशल से तात्पर्य शिक्षक द्वारा कक्षा में छात्रों के सामने किए गए उन प्रयोगों व क्रियाओं से है, जिसे वह पाठ के सिद्धान्तों व नियमों को स्पष्ट करने के लिए संपादित करता है। प्रदर्शन कौशल, प्रायोगिक विषयों के लिए अति महत्वपूर्ण कौशल है।

'प्रदर्शन कौशल' में निम्नलिखित गुण पाये जाते हैं, जैसे–

1. इससे विद्यार्थी प्रयोगात्मक कार्य करना सरलता से सीख जाते हैं।
2. छात्रों को प्रदर्शन कौशल के माध्यम से कार्य को वैज्ञानिक ढंग से करना सीखलाया जा सकता है।
3. प्रदर्शन से ज्ञानात्मक व मनोगत्यात्मक उद्देश्यों की प्राप्ति संभव होता है।
4. निम्नबुद्धि वाले छात्रों को सीखने के लिए प्रदर्शन कौशल अत्यन्त उपयोगी है।

घटक –

प्रदर्शन कौशल के निम्नलिखित घटक है–

1. सरल प्रदर्शन सामग्री का चयन एवं निर्माण।
2. विचारों, सम्प्रत्ययों से सम्बद्ध प्रदर्शन सामग्री का चयन एवं निर्माण।
3. प्रदर्शन सामग्री की उपयुक्तता।
4. प्रदर्शन करने के लिए उपयुक्त माध्यम का चुनाव एवं प्रयोग।
5. बीच–बीच में प्रश्न पूछकर छात्रों के समझ की जाँच।

निरीक्षण अनुसूची तथा रेटिंग स्केल–

घटक	रेटिंग स्केल					
	न्यूनतम			अधिकतम		
1. शिक्षक द्वारा सरल प्रदर्शन सामग्री का चयन किया गया।	1	2	3	4	5	6
2. प्रदर्शन सामग्री विचारों व सम्प्रत्ययों से सम्बद्ध थे।	1	2	3	4	5	6
3. प्रदर्शन सामग्री की उपयुक्तता थी।	1	2	3	4	5	6
4. प्रदर्शन करने के लिए उपयुक्त माध्यम का चुनाव एवं प्रयोग किया गया।	1	2	3	4	5	6
5. बीच–बीच में प्रश्न पूछकर छात्रों के समझ की जांच की गई।	1	2	3	4	5	6

8.12 श्यामपट लेखन कौशल

श्यामपट एक ऐसा उपकरण है जिसका प्रयोग लगभग सभी विषयों के अध्यापन में शिक्षक द्वारा किया जाता है। श्यामपट की सहायता से सम्पूर्ण कक्षा के सामने स्पष्ट करता है। इसके साथ–साथ शिक्षक छात्रों की दृष्टि तथा ज्ञानेन्द्रियों को भी सक्रिय करता है।

उपर्युक्त बातों से श्यामपट की महत्ता तो स्पष्ट है लेकिन इसका समुचित उपयोग करना एक कौशल है जिसमें सभी शिक्षकों को निपुण होना चाहिए। अतः श्यामपट का प्रयोग करते समय कुछ बातों का ध्यान रखना चाहिए, जैसे–

1. श्यामपट काला तथा चिकना होना चाहिए।
2. जो भी लिखा जाय वह शुद्ध, स्पष्ट, आकर्षण होना चाहिए।
3. इस पर लिखा शब्द उतना बड़ा होना चाहिए कि सभी बच्चे पढ़ सकें।
4. श्यामपट पर अनावश्यक बातें नहीं लिखनी चाहिए।
5. शिक्षक को हमेशा 45^0 पर खड़ा हो के ही लिखना चाहिए।

श्यामपट प्रयोग कौशल के निम्नलिखित घटक होते हैं–

1. लिखावट की सुस्पष्टता।
2. लिखावट की पंक्तिबद्धता एवं क्रमबद्धता
3. श्यामपट की स्वच्छता
4. श्यामपट कार्य का औचित्य
6. श्यामपट का छात्रों द्वारा प्रयोग

इन घटकों के आधार पर श्यामपट लेखन कौशल की निरीक्षण अनुसूची तथा रेटिंग स्केल इस प्रकार का होगा–

घटक	रेटिंग स्केल					
	न्यूनतम			अधिकतम		
1. अक्षर स्पष्ट थे।	1	2	3	4	5	6
2. दो अक्षरों के बीच समुचित स्थान था।	1	2	3	4	5	6
3. अक्षरों का आकार उचित था।	1	2	3	4	5	6
4. वाक्य सीधी रेखा में थी।	1	2	3	4	5	6
5. मुख्य बिन्दुओं और शब्दों को रेखांकित किया गया।	1	2	3	4	5	6
6. चित्र, रेखाचित्र साफ–सुथरे और स्पष्ट बनाये गए।	1	2	3	4	5	6
7. रंगीन चॉक का प्रयोग किया गया।	1	2	3	4	5	6

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

7. मुख्यतः पुनर्बलन कितने प्रकार का होता है?

....

....

8. शिक्षक उद्दीपन परिवर्तन कौशल का प्रयोग किस उद्देश्य से करता है?

....

....

9. प्रदर्शन से क्या अभिप्राय है?

....

....

8.13 सूक्ष्म शिक्षण

सूक्ष्म शिक्षण, शिक्षक प्रशिक्षण एवं शिक्षक विकास की एक तकनीक है। इसका प्रारंभ 'डॉ0 ड्वाइट डब्ल्यू0 एलेन के द्वारा 'स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय में 1960 के मध्य हुआ था और तब से शिक्षक एवं शिक्षा के विकास हेतु इसका प्रयोग सर्वत्र हो रहा है। सूक्ष्म शिक्षण एक सुनियोजित अभ्यास शिक्षण है। इसका मुख्य लक्ष्य शिक्षक

को आत्मविश्वास, सहायता तथा पृष्ठपोषण प्रदान करना है। इस प्रक्रिया में प्रशिक्षणार्थी, विद्यार्थियों को पढ़ाने के लिए किस प्रकार तैयारी करनी है, को एक सूक्ष्म शिक्षण प्रक्रिया द्वारा जान पाता है। इसमें प्रशिक्षणार्थी अपने साथियों, अवलोकनकर्ता, अध्यापकों विद्यार्थियों द्वारा एक रचनात्मक पृष्ठपोषण प्राप्त करता है, जिससे वह अपने शिक्षण कौशलों में सुधार कर पाता है।

आदर्श रूप में सूक्ष्म शिक्षण, मूल शिक्षण के पूर्व ही होता है तथा इसको विडियो, टेप रिकॉर्डर द्वारा रिकार्ड करके एक अनुभवी शिक्षण सलाहकार के साथ व्यक्तिगत रूप से देखा जाता है। सूक्ष्म शिक्षण एक त्वरित, प्रभावशाली एवं प्रमाणित तरीका है, जो एक प्रशिक्षणार्थी को भावी शिक्षण के लिए तैयार करता है।

8.13.1 सूक्ष्म शिक्षण का इतिहास

सूक्ष्म शिक्षण का विकास अमेरिका के स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय के तीन विद्वानों द्वारा किया गया, जिनके नाम थे– एचीसन, बुश और एलन। स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय में कीथ एचीसन अनुसंधान हेतु डॉ0 राबर्ट एन0वुश और डॉ0 ड्वाइट डब्ल्यू0 एलन के साथ काम कर रहे थे। इनके शोध का विषय एक ऐसी शिक्षण विधियों का विकास करना था, जिसके द्वारा प्रशिक्षणार्थियों में अध्ययन कौशल का विकास किया जा सके।

इन तीनों के संयुक्त प्रयास से 1961 में 'सूक्ष्म शिक्षण' की उत्पत्ति हुई। संयुक्त दल ने सर्वप्रथम नियन्त्रित रूप में "संकुचित अध्ययन अभ्यास क्रम' प्रारम्भ किया, जिनके अंर्तगत प्रत्येक छात्राध्यापक 5 से 10 विद्यार्थियों को एक छोटा सा पाठ, पाँच से सात मिनट तक पढ़ाता है।यह विशिष्ट कौशल पर आधारित होता है। यह वास्तविक परिस्थितियों में किया जाता है परन्तु वर्तमान परिस्थिति में यह अनुकरणीय शिक्षण का रुप बन गया है(इसमें एक प्रशिक्षणार्थी शिक्षक और अन्य प्रशिक्षणार्थी विद्यार्थियों की भूमिका निर्वहन करते हैं)। इसमें प्रशिक्षणार्थियों को उनके द्वारा की गई त्रुटियों को समझने और उनमें सुधार हेतु विडियों टेप रिकॉर्डर का प्रयोग किया जाता था।

तात्कालिक दूर–दराज के विद्यालयों में नियुक्त अध्यापक अपने अध्यापन के टेप सुधार हेतु स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय भेजा करते थे और विश्वविद्यालय के द्वारा उनके अध्यापन की कमियों में सुधार के लिए निर्देश दिया जाता था।

स्टेनफोर्ड के ही एक शोधकर्ता हैरी गैरीसन जिसका विषय 'शिक्षक सांमर्थ्य' था, जिसने 'स्टेनफोर्ड अध्यापन सामर्थ्य दीपिका' का निर्माण किया। सूक्ष्म–शिक्षण के क्षेत्र में कई लोगों ने प्रयोग किये। इन प्रयोगों में सन् 1967 में क्लेनवैश ने एक महत्वपूर्ण प्रयोग किया।

क्लेनवैश ने सैंजोस स्टेट विश्वविद्यालय में ग्रीष्मकालीन प्राथमिक शिक्षा कोर्स के प्रशिक्षणार्थियों को दो भागों में विभाजित कर एक समूह को सूक्ष्माध्यापन विधि से तथा दूसरे समूह को परम्परागत विधि से अध्यापन प्रशिक्षण दिया। इन दोनों विधियों की उपलब्धियाँ लगभग समान पाई गई तथापि सूक्ष्म अध्यापन द्वारा बहुत कम समय में ही अध्यापन प्रक्रिया की सूक्ष्मतायें समझाई जा सकी, जबकि परम्परागत तरीके से इन सूक्ष्मताओं को समझाने तथा शिक्षण कौशल उत्पन्न करने में बहुत समय लगा।

इसी प्रकार एलन (1964), एचीसन (1964), ओर्म (1966), टकमैन, एलन (1969), रैसनिक व किस (1970), मैक्लीज तथा अनवत (1971) आदि शोधार्थियों ने इस क्षेत्र में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया।

भारत के संदर्भ में सर्वप्रथम डी0डी0 तिवारी (1967) ने 'सूक्ष्म शिक्षण' शब्द का प्रयोग शिक्षण–प्रशिक्षण के क्षेत्र में किया, परन्तु उनका 'सूक्ष्म शिक्षण' का अर्थ वर्तमान के सूक्ष्म शिक्षण से अलग था। इसके बाद शाह (1970), चुदास्मा (1971), सिंह, मर्कर तथा पन्गौत्रा (1973), दोशाज ने सन् 1974 में इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

भारत में सूक्ष्म शिक्षण के क्षेत्र में प्रकाशन कार्य सन् 1974 में पासी तथा शाह ने किया। इसमें प्रथम बार सूक्ष्म–शिक्षण के विषय में वैज्ञानिक जानकारी प्रदान की गयी। 1979 में इंदौर विश्वविद्यालय में सर्वप्रथम 'सूक्ष्म शिक्षण' पर 'राष्ट्रीय प्रायोजना' का निर्माण किया गया। इसके अर्न्तगत 'सूक्ष्म शिक्षण' विषय पर विभिन्न विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों के शिक्षक प्रशिक्षकों ने मिलकर कार्य किया। यह शोध योजना 'नेशनल कौंसिल ऑफ एजूकेशनल रिसर्च एण्ड ट्रेनिंग' नयी दिल्ली के सहयोग से पूर्ण किया गया। सूक्ष्म शिक्षण के क्षेत्र में कार्य करते हुए सन् 1979 में देहरादून में कुलश्रेष्ठ, मिश्रा तथा गोस्वामी ने अनेक सुझावों के आधार पर

'परिसूक्ष्म–शिक्षण' पर प्रथम भारतीय मोनोग्राफ "मिनी टीचिंग : ए न्यू एक्सपैरीमेन्ट इन टीचर एजूकेशन, एन0सी0ई0आर0टी0 नई दिल्ली, के सहयोग से प्रकाशित किया। भारत में सूक्ष्म शिक्षण पर शोध मुख्यतः दिल्ली, इंदौर, बड़ौदा, सहारनपुर, वाराणसी तथा देहरादून में किया गया एवं साथ ही अभी भी अन्य विश्वविद्यालयों में इस पर शोध कार्य किया जा रहा है ।

8.14 सूक्ष्म शिक्षण का अर्थ एवं परिभाषाएँ

सूक्ष्म शिक्षण से तात्पर्य एक ऐसी शिक्षण तकनीकी से है जिससे शिक्षकों में कक्षा–अध्यापन शिक्षण कौशल का विकास करना है। सूक्ष्म शिक्षण एक प्रभावशाली कौशल प्रशिक्षण विधि है साथ ही साथ यह एक शिक्षक–प्रशिक्षण की सरल, सुग्राह्य तथा मितव्ययी विधि भी है। जिसका मुख्य उद्देश्य भावी शिक्षकों को सुनियोजित अभ्यास से अच्छा शिक्षण, आत्मविश्वास, सहायता तथा शिक्षण के लिए पृष्ठपोषण प्रदान करना है। सूक्ष्म शिक्षण से शिक्षक अपने शिक्षण कौशलों में सुधार कर पाता है तथा यह एक त्वरित, प्रभावशाली एवं प्रमाणित तरीका है जिससे भावी शिक्षण के लिए पृष्ठपोषण मिलता है।

एलन (1968) ने सूक्ष्म–शिक्षण की परिभाषा दी है जो निम्नवत् है–

"सूक्ष्म–शिक्षण, प्रशिक्षण से संबंधित एक सम्प्रत्यय है जिसका प्रयोग सेवारत एवं सेवापूर्ण स्थितियों में शिक्षकों एवं प्रशिक्षकों के व्यावसायिक विकास के लिए किया जाता है। सूक्ष्म–शिक्षण, प्रशिक्षणार्थियों के शिक्षण अभ्यास के लिए एक ऐसी योजना प्रस्तुत करता है जो कक्षा की सामान्य जटिलताओं को कम कर देता है और जिसमें उचित मात्रा में प्रशिक्षणार्थी अपने शिक्षण व्यवहार के लिए प्रतिपुष्टि प्राप्त करता है।"

एम0बी0 बुच (1968) के अनुसार– "सूक्ष्म–शिक्षण अध्यापक शिक्षा की वह प्रविधि है जो विद्यार्थियों को स्पष्ट रूप से परिभाषित शिक्षण कौशलों को वास्तविक विद्यार्थियों के छोटे समूह के साथ पाँच से दस मिनट के शिक्षण की नियोजित श्रृंखला के लिए ध्यानपूर्वक तैयार किये गये पाठों में प्रयोग करने का अवसर प्रदान करती है तथा वीडियों टेप पर परिणामों के निरीक्षण के अवसर प्रदान करती है।"

श्रीवास्तव, सिंह व राय (1978) के अनुसार– "सूक्ष्म शब्द का एक गूढ़ार्थ भी हो सकता है, क्योंकि सूक्ष्म शिक्षण में कौशलों की छोटी–छोटी अर्थात् सूक्ष्म इकाइयों में विभाजित कर प्रत्येक में बारीकी से प्रशिक्षण दिया जाता है, अतः सूक्ष्म शब्द का प्रयोग इस संदर्भ में उचित ही है।"

प्रो0 बी0के0 पासी के शब्दों में– "सूक्ष्म–शिक्षण एक प्रशिक्षण विधि है, जिसमें छात्राध्यापक किसी एक शिक्षण कौशल का प्रयोग करते हुए थोड़ी अवधि के लिए, छोटे छात्र समूह को कोई एक सम्प्रत्यय पढ़ाता है।"

डॉ0 कुलश्रेष्ठ (1979) के अनुसार– "सूक्ष्म–शिक्षण एक विकासशील प्रवृत्ति है, जिसके अन्तर्गत पाठ्य–वस्तु, पाठ्य–अवधि तथा विद्यार्थियों की संख्या को कम किया जाता है और प्रशिक्षणार्थी में क्रमशः शिक्षण–कौशल का विकास भली–भाँति किया जाता है।"

मैककौलम तथा लाड्यू– "सूक्ष्म शिक्षण परिस्थितियों में प्रविष्ट होने से पूर्व दक्षता प्राप्त कर लेने तथा कक्षा–कक्ष कौशलों का विकास कर लेने का अवसर ही सूक्ष्म–शिक्षण है।"

कुमार, एन0– "सूक्ष्म शिक्षण, शिक्षक प्रशिक्षक की एक प्रविधि है, जिसकी सहायता से विशिष्ट शिक्षण कौशलों का विकास करके शिक्षण की प्रभावकारिता एवं दक्षता को बढ़ाया जाता है।"

सूक्ष्म–शिक्षण का अर्थ और परिभाषाओं को समझने के बाद यह स्पष्ट होता है कि इसके स्वरूप के छः मुख्य पक्ष है–

1. पाठ तैयार करना।
2. कौशलों का अभ्यास करना।
3. निष्पादन का मूल्यांकन करना।
4. कौशल प्रदर्शन का निरीक्षण करना।
5. प्रदर्शित कौशल का विश्लेषण करना ।

6. प्रायोगिक कौशलों का वास्तविक शिक्षण स्थिति में स्थानांतरण करना ।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

10. सूक्ष्म शिक्षण का प्रारंभ किसके द्वारा किया गया था?

....

....

11. सूक्ष्म शिक्षण के कितने मुख्य पक्ष है?

....

....

8.15 सूक्ष्म शिक्षण की आवश्यकता एवं विशेषताएँ

सूक्ष्म–शिक्षण की आवश्यकता

भारत में सूक्ष्म शिक्षण की आवश्यकता को बल तब मिला जब शिक्षा आयोग (1964–66) ने शिक्षक–प्रशिक्षण संस्थाओं की स्थिति का वर्णन किया और कहा–"थोड़े अपवादों को छोड़कर सामान्यतः शिक्षण प्रशिक्षण संस्थाएँ निम्न कोटि की हैं। योग्य अध्यापक इन शालाओं में आने को उत्सुक नहीं होते, पाठ्यक्रम और कार्यक्रम अधिकतर परम्परागत होते हैं, अतः उनमें न तो सजीवता ही होती है और न वास्तविकता ही। शिक्षण के अभ्यास के लिए नीरस तकनीकें और परम्परागत पद्धतियाँ ही अपनाई जाती हैं। आज की आवश्यकताओं और प्रायोजनों का कुछ भी ध्यान नहीं रखा जाता, अतः शिक्षक प्रशिक्षण में सुधार के लिए एक सर्वांगपूर्ण कार्यक्रम की तत्काल आवश्यकता है।" शिक्षा आयोग की समीक्षा के बाद कई संस्थाओं ने सूक्ष्म–शिक्षण प्रशिक्षण को महत्व दिया और इन विषय पर शोध और प्रकाशन पर जोर दिया जाने लगा।

विश्व और भारत में हुए शोधों ने यह सिद्ध किया की सूक्ष्म शिक्षण के द्वारा भावी अध्यापकों तथा सेवारत अध्यापकों दोनों को ही प्रभावी अध्यापक बनाया जा सकता है।

राष्ट्रीय शोध के आधार पर जंगीरा महूर सिंह (1980), स्नेह जोशी व बिस्वाल (1981) ने अपने शोध कार्यों के परिणामस्वरूप बताया कि सूक्ष्म शिक्षण पराम्परागत शिक्षक प्रशिक्षण प्रणाली से अधिक उपयोगी है–

1. शिक्षण– प्रशिक्षण में औपचारिकतायें पूर्ण की जा रही है।
2. शिक्षण– प्रशिक्षण संस्थाओं में बेहतर शिक्षण विधियों की चर्चा सैद्धान्तिक दृष्टि से की जाती है परन्तु व्यवहार में नहीं लायी जाती।
3. शिक्षण– प्रशिक्षण में छात्राध्यापकों के शिक्षण कौशल के विकास का कोई प्रयास नहीं किया जाता।
4. शिक्षण कार्यों का निरीक्षण दोषपूर्ण होता है।
5. शिक्षण कार्यों का पर्यवेक्षण अवास्तविक होता है।
6. छात्राध्यापकों में प्रशिक्षण के उद्देश्य स्पष्ट नहीं होते।
7. शिक्षण–प्रशिक्षण के सैद्धान्तिक तथा व्यवहारिक पक्ष में अंतर पाया जाता है।

8. छात्राध्यापकों द्वारा पढ़ाये जाने वाले पाठ के अनुरूप उनकी आवश्यकताओं को ध्यान में नहीं रखा जाता है।
9. छात्राध्यापकों के अध्यापन के बाद उचित प्रतिपुष्टि नहीं दी जाती।
10. प्रशिक्षण अभ्यास कार्यक्रम क्रमबद्ध नहीं है।
11. निरीक्षकों द्वारा किया जाने वाला निरीक्षण संतोषजनक नहीं होता तथा कभी–कभी विषयनिष्ठ हो जाता है।

राष्ट्रीय शिक्षा आयोग (1986) के प्रतिवेदन में शिक्षण कौशल के विकास हेतु बताया गया है कि किसी भी तरह के शिक्षण का उद्देश्य प्रशिक्षणार्थी में मूलभूत कौशलों का विकास करना और उसे सक्षम अध्यापक बनाना होता है,जिसमें निम्नलिखित उद्देश्य समाहित होने चाहिए–

1. विभिन्न योग्यताओं वाले विद्यार्थियों की कक्षा को सुव्यवस्थित ढंग से चलाने की योग्यता विकसित करना।
2. विचारों को तर्कसंगत रूप से अभिव्यक्त करने की क्षमता विकसित करना।
3. शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के लिए उपलब्ध तकनीकियों का प्रयोग में लाने की योग्यता विकसित करना।
4. कक्षा में अध्यापन के दौरान, बाह्य अनुभवों का प्रयोग करने की योग्यता विकसित करना।
5. समुदाय के परिप्रेक्ष्य में कार्य करना सिखाना।
6. विद्यार्थियों की सहायता करने में सक्षम बनाना।

सूक्ष्म शिक्षण की विशेषतायें–

1. सूक्ष्म शिक्षण एक व्यक्तिगत शिक्षण विधि है।
2. सूक्ष्म शिक्षण से शिक्षण प्रक्रिया सरल हो जाती है।
3. सूक्ष्म शिक्षण का मुख्य उद्देश्य विशिष्ट शिक्षण कौशलों का विकास करना है।
4. सूक्ष्म–शिक्षण के अभ्यास–क्रम की प्रक्रिया पर अधिक नियंत्रण रखा जाता है।
5. इसमें शिक्षण के लिए कक्षा का आकार बहुत सीमित होता है।
6. सूक्ष्म शिक्षण में कक्षा के कालांश का समय 5 से 10 मिनट तक का होता है।
7. निर्धारित समय में किसी एक विशेष कार्य एवं कौशल के प्रशिक्षण पर बल दिया जाता है।
8. ये शिक्षण की जटिलताओं को कम करता है।
9. छात्राध्यापकों में आत्मविश्वास पैदा करता है।
10. सूक्ष्म शिक्षण में छात्राध्यापकों की व्यक्तिगत विभिन्नता पर पूर्ण ध्यान दिया जाता है।
11. छात्राध्यापकों के व्यवहार परिवर्तन में अधिक प्रभावी है।
12. सूक्ष्म–शिक्षण, शिक्षण के सिद्धान्त और व्यवहार का सुंदर समन्वय है।

8.16 सूक्ष्म शिक्षण की मान्यतायें और सिद्धान्त

मूलभूत मान्यतायें

1. सूक्ष्म–शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के लिए शिक्षक–व्यवहार के प्रारूप आवश्यक होते है।
2. पृष्ठ–पोषण शिक्षण का महत्वपूर्ण तत्व है जो कि शिक्षण में अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन के लिए आवश्यक भूमिका निभाता है।

3. शिक्षण एक उपचारात्मक योजना या प्रक्रिया होती है।
4. बेहतर शिक्षण–प्रशिक्षण के लिए शिक्षण–क्रियाओं का वस्तुनिष्ठ प्रेक्षण आवश्यक है।
5. शिक्षण प्रक्रिया को उन्नत बनाने के लिए व्यक्तिगत क्षमताओं का विकास आवश्यक है।
6. शिक्षक को शिक्षण में सुधार हेतु, समुचित अवसर दिये जाने चाहिए।
7. शिक्षण का खण्डित, अति लघु एवं सरलीकृत रूप ही सूक्ष्म–शिक्षण कहलाता है।

सिद्धान्त

एलन तथा रियाँन (1968) ने सूक्ष्म–शिक्षण के निम्नांकित पाँच मूलभूत सिद्धान्तों का वर्णन किया है– जो निम्न हैं–

1. सूक्ष्म–शिक्षण वास्तविक शिक्षण है।
2. सूक्ष्म–शिक्षण में साधारण कक्षा–शिक्षण की जटिलताओं को कम कर दिया जाता है।
3. एक समय ये किसी भी एक विशेष कार्य एवं कौशल के प्रशिक्षण पर ही जोर दिया जाता है।
4. अभ्यास क्रम की प्रक्रिया पर अधिक नियंत्रण रखा जाता है।
5. परिणाम संबंधी साधारण ज्ञान एवं प्रतिपुष्टि के प्रभाव की परिधि विकसित होती है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

12. भारत में सूक्ष्म शिक्षण की आवश्यकता को कब बल मिला?

....

....

13. एलन तथा रियॉन ने सूक्ष्म शिक्षण के कितने सिद्धान्तों का वर्णन किया है?

....

....

8.17 सूक्ष्म शिक्षण प्रक्रिया

सूक्ष्म शिक्षण प्रक्रिया में एक समय में 5 से 10 तक छात्रों को सम्मिलित किया जा सकता है जो कि प्रशासनिक और व्यवहारिक दृष्टि से विद्यालयों में संभव नहीं है। इस समस्या के समाधान के लिए सूक्ष्म–शिक्षण में छात्राध्यापक के सहपाठी छात्राध्यापक ही छात्रों की भूमिका निभाते हैं तथा आपस में शिक्षण कौशलों का विकास करने के लिए सूक्ष्म शिक्षण चक्र के अनुसार शिक्षण करते है।

सूक्ष्म शिक्षण मुख्यतः तीन अवयवों पर निर्भर करता है–

1. विषय–वस्तु की सामग्री।

2. कक्षा का आकार।

3. कक्षा अध्यापन (शिक्षण) की अवधि।

सूक्ष्म शिक्षण के अंतर्गत उपरोक्त तीनों अवयवों, विषय–वस्तु, कक्षा एवं कक्षा शिक्षण की अवधि को कम करके सूक्ष्म शिक्षण किया जाता है।

शिक्षण विभिन्न कौशलों का योग है। एक साथ छात्राध्यापकों में अनेक कौशलों को विकसित करना एक जटिल कार्य है। सूक्ष्म शिक्षण की सहायता से मनोवैज्ञानिक शिक्षण सूत्रों का प्रयोग करते हुए एक–एक करके वांछित कौशलों को अधिकाधिक रूप से भावी अध्यापकों में विकसित किया जाता है।

8.17.1 सूक्ष्म शिक्षण के महत्वपूर्ण पद

1. सर्वप्रथम शिक्षक, सूक्ष्म–शिक्षण के विषय में सैद्धान्तिक तथा व्यवहारिक ज्ञान की चर्चा छात्राध्यापकों से करता है।
2. इसके उपरान्त शिक्षक, छात्राध्यापकों के सम्मुख विभिन्न शिक्षण कौशलों की व्याख्या करता है और उसके पीछे छिपे मनोवैज्ञानिक आधारों की विवेचना करता है।
3. शिक्षक स्वयं, छात्राध्यापकों के समक्ष सूक्ष्म–शिक्षण विधि पर आधारित 'आदर्श पाठ' प्रस्तुत करता है। आदर्श पाठ का प्रस्तुतीकरण कई तरीकों से किया जा सकता है, जैसे–1. स्वयं पढ़ाकर, 2. टेप रिकार्डर के द्वारा, 3. वीडियो के द्वारा।
4. शिक्षक और छात्राध्यापक दोनों मिलकर प्रस्तुत पाठ का विश्लेषण कर इसकी कमियों और विशेषताओं पर विचार–विमर्श करते हैं और शिक्षण कौशल व्यवहारों का निर्धारण करते हैं।
5. छात्राध्यापक निर्देशानुसार 5 से 15 मिनट तक 'सूक्ष्म पाठ' पढ़ाता है। इसे 'शिक्षण पद' कहा जाता है। जिसे वीडियो रिकॉर्डर द्वारा रिकार्ड किया जाता है। शिक्षक एवं अन्य सह–छात्राध्यापक पाठ का निरीक्षण करते हैं।
6. छात्राध्यापक द्वारा पढ़ाये गए पाठ की समीक्षा की जाती है तथा शिक्षक द्वारा उसे तत्काल प्रतिपुष्टि दी जाती है। इसे पर्यवेक्षक प्रतिपुष्टि कहते हैं।
7. शिक्षक पढ़ाये गये 'सूक्ष्म पाठ' पर कक्षा में चर्चा करता है और छात्राध्यापक की 'अध्ययन कौशल' की कमियों और अच्छाइयों, के बिन्दुओं पर वार्तालाप करता है। इसके उपरान्त छात्राध्यापक को पुनः पाठ निर्माण के लिए सुझाव देता है, इसे आलोचना/मूल्यांकन–पद कहा जाता है।
8. मूल्यांकन–पद के पश्चात् छात्राध्यापक दिये गये सुझावों तथा अनुभवों के आधार पर अपनी पाठ–योजना में परिवर्तन कर पुनः पाठ योजना का निर्माण करता है। इसी को 'पुनः पाठ योजना–निर्माण–पद' कहा जाता है।
9. इस प्रकार से पुनः निर्मित पाठ–योजना को छात्राध्यापक उसी कक्षा में पढ़ाता है। जिसे पुनः वीडियो रिकॉर्डर द्वारा रिकार्ड किया जाता है। शिक्षण के इस क्रम को 'पुनः शिक्षण–क्रम' कहा जाता है।
10. 'पुनः शिक्षण क्रम' के साथ 'पुनः आलोचना' पद आता है।

उपर्युक्त प्रक्रिया तब तक दोहराई जाती है जब तक छात्राध्यापक तथा पर्यवेक्षक विशिष्ट कौशल के विकास से संतुष्ट नहीं होते है।

8.17.2 प्रशिक्षक द्वारा प्रयुक्त प्रक्रिया

1. सूक्ष्म शिक्षण का सैद्धान्तिक व व्यवहारिक ज्ञान प्रदान करना।
2. शिक्षण कौशलों की व्याख्या करना।
3. आदर्श पाठ शिक्षण का प्रस्तुतीकरण करना ।
4. आदर्श पाठ शिक्षण की समीक्षा व आलोचना करना ।

5. सूक्ष्म–शिक्षण पाठ योजना का निर्माण कराना ।

6. सूक्ष्म–शिक्षण कराना।

7. सूक्ष्म शिक्षण की समीक्षा (आलोचना/विचार–विमर्श) करना ।

   8. पुनः पाठ निर्माण कराना।

   9. पुनः शिक्षण कराना।

   10. पुनः आलोचना करना।

8.17.3 सूक्ष्म शिक्षण चक्र

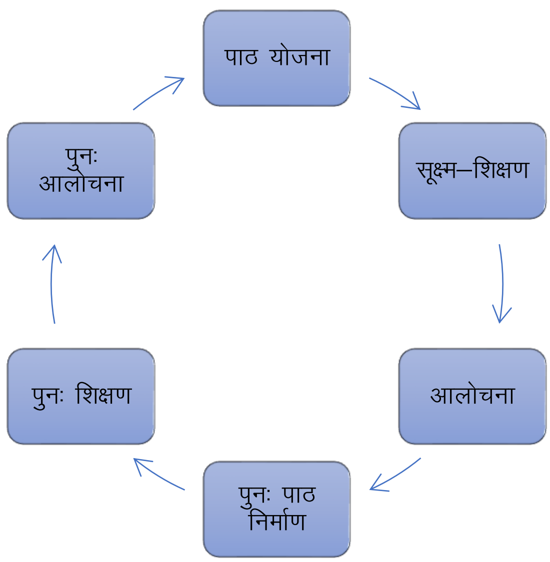

8.17.4 सूक्ष्म शिक्षण में प्रयुक्त पद

विभिन्न विश्वविद्यालयों द्वारा सूक्ष्म–शिक्षण में प्रयोग किये जाने वाले पद निम्नवत् हैं–

विदेशी विश्वविद्यालयों के अनुसार

1. स्टैनफोर्ड विश्वविद्यालय के अनुसार

सूक्ष्म शिक्षण का विकास स्टैनफोर्ड विश्वविद्यालय में हुआ था। वहाँ पर निम्नांकित प्रविधि प्रयोग की गयी थी–

शिक्षण चरण	–	5 मिनट
मूल्यांकन चरण	–	10 मिनट
पुनः पाठ्य निर्माण चरण	–	15 मिनट
पुनः शिक्षण चरण	–	05 मिनट
पुनः मूल्यांकन चरण	–	10 मिनट
कुल समय	–	**45 मिनट**

2. उल्स्टर विश्वविद्यालय के अनुसार

शिक्षण चरण	–	15 मिनट
मूल्यांकन चरण	–	07 मिनट

पुनः पाठ्य निर्माण चरण – 08 मिनट

पुनः शिक्षण चरण – 15 मिनट

पुनः मूल्यांकन चरण – 15 मिनट

कुल समय – 60 मिनट

3. भारतीय विश्वविद्यालयों के अनुसार

क. डी0ए0वी0 कालेज देहरादून

शिक्षण चरण – 06 मिनट

मूल्यांकन चरण – 06 मिनट

द्वितीय मूल्यांकन (वास्तविक) – 04 मिनट

पुनः पाठ्य निर्माण चरण – 07 मिनट

पुनः शिक्षण चरण – 06 मिनट

पुनः मूल्यांकन चरण – 06 मिनट

कुल समय – 35 मिनट

ख. केस, बड़ौदा के अनुसार

शिक्षण चरण – 06 मिनट

मूल्यांकन चरण – 06 मिनट

पुनः पाठ्य निर्माण चरण – 12 मिनट

पुनः शिक्षण चरण – 06 मिनट

पुनः मूल्यांकन चरण – 06 मिनट

कुल समय – 36 मिनट

8.17.5 सूक्ष्म शिक्षण का भारतीय प्रतिरूप

भारत में NCERT तथा CASE एवं इंदौर विश्वविद्यालय में किये गए प्रयासों के फलस्वरूप सूक्ष्म–शिक्षण का भारतीय प्रतिरूप विकसित किया गया। इसकी विशेषतायें निम्न हैं–

1. सूक्ष्म शिक्षण में प्रयुक्त महँगी सामग्री, जैसे–वीडियो, क्लोज्ड सर्किट टी0वी0 आदि के स्थान पर कथन तथा चर्चा विधि का प्रयोग किया गया है।
2. निरीक्षण की महंगी सामग्री के स्थान पर इसमें प्रशिक्षित निरीक्षकों द्वारा निरीक्षण तथा प्रतिपुष्टि को स्थान दिया गया है।
3. सूक्ष्म–शिक्षण सत्र, कृत्रिम परिस्थितियों में भी बिल्कुल यथार्थ शिक्षण जैसा सम्पन्न किया जाता है।
4. भारतीय परिप्रेक्ष्य में सूक्ष्म शिक्षण प्रतिरूप निम्न प्रकार से है–

विद्यार्थियों की संख्या	:	5 से 10 तक
विद्यार्थियों के प्रकार	:	वास्तविक विद्यालयी विद्यार्थी या सहपाठी
निरीक्षण व प्रतिपुष्टि	:	प्राध्यापक या सहपाठी
पाठ की अवधि	:	6 मिनट
कौशलों की संख्या	:	एक समय में एक कौशल

विषय–वस्तु	:	एक शिक्षण बिन्दु
कुल अवधि	:	**36 मिनट**

5. भारतीय सूक्ष्म शिक्षण प्रतिरूप में सूक्ष्म शिक्षण चक्र की अवधि 36 मिनट होती है। इसका समय विभाजन निम्न है–

शिक्षण	:	6 मिनट
प्रतिपुष्टि	:	6 मिनट
पुनः योजना	:	12 मिनट
पुनः शिक्षण	:	6 मिनट
पुनः प्रतिपुष्टि	:	6 मिनट
कुल समय	:	**36 मिनट**

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

14. शिक्षण को मुख्यतः कितने भागों में बांटा जा सकता है?

....

....

15. 'पुनः शिक्षण क्रम' के पश्चात् कौन–सा पद आता है?

....

....

16. सूक्ष्म शिक्षण का विकास किस विश्वविद्यालय में हुआ था?

....

....

8.18 सारांश

शिक्षण कौशल से तात्पर्य उन सभी क्रियाओं से है जिन्हें शिक्षक कक्षा के अन्दर छात्रों के व्यवहारों में वांछित परिवर्तन लाने के उद्देश्य से कुशलता पूर्वक संपादित करता है। एलन तथा रायन ने 14 शिक्षण कौशलों की सूची तथा बी0के0 पासी ने 13 शिक्षण कौशलों को सूचीबद्ध किया है। शिक्षण उद्देश्य लिखते समय विषयवस्तु, विद्यार्थियों का स्तर तथा वांछित व्यवहार परिवर्तन का विशेष ध्यान रखना चाहिए। पाठ प्रस्तावना कौशल का प्रयोग शिक्षक कई प्रकार से करता है, जैसे–प्रश्न पूछकर, कहानी सुनाकर, चित्र दिखाकर आदि।

पाठ का विकास करने के लिए शिक्षक को अनुशीलन प्रश्न कौशल में दक्ष होना चाहिए। किसी कठिन बात को सरल करके समझाना ही व्याख्या कहलाता है अतः सभी शिक्षकों को इसमें कुशल होना चाहिए। दृष्टान्त कौशल का प्रयोग शिक्षक द्वारा किसी विचार, सिद्धान्त तथा सम्प्रत्यय को विद्यार्थियों को समझाने के लिए प्रयोग किया जाता है। दृष्टान्त का प्रयोग आगमन व निगमन दोनों विधियों से होता है। वांछित अनुक्रिया की संभावना को बढ़ाने के लिए पुनर्बलन कौशल का प्रयोग किया जाता है। शिक्षक द्वारा कक्षा में किए गए उन सभी कार्य–व्यवहारों को जो विद्यार्थियों का ध्यान पाठ में लगाए रखते हैं, उद्दीपन परिवर्तन कौशल कहलाते हैं। प्रदर्शन कौशल प्रायोगिक विषयों के लिए अति महत्वपूर्ण कौशल है। श्यामपट लेखन कौशल का प्रयोग लगभग सभी विषयों के अध्यापन में किया जाता है अतः इसमें सभी अध्यापकों को कुशल होना चाहिए।

सूक्ष्म शिक्षण एक प्रभावशाली शिक्षण–प्रशिक्षण प्रविधि है जिसका विकास स्टैनफोर्ट विश्वविद्यालय के तीन विद्वानों–एचीसन, बुश और एलन द्वारा किया गया। एलन तथा रायन ने सूक्ष्मशिक्षण के पांच सिद्धान्तों का वर्णन किया है। सूक्ष्म शिक्षण चक्र के 6 पद है– पाठ योजना, सूक्ष्म शिक्षण, आलोचना, पुनः पाठ निर्माण, पुनः शिक्षण, पुनः आलोचना। भारत में सूक्ष्म शिक्षण चक्र की अवधि 36 मिनट की होती है।

8.19 अभ्यास के प्रश्न

1. शिक्षण कौशल किसे कहते है? इसकी परिभाषा दीजिए।
2. उद्देश्य लेखन कौशल के घटकों को समझाइए।
3. पाठ प्रस्तावना किसे कहते हैं? प्रस्तावना का प्रयोग क्यों और कैसे करना चाहिए।
4. अनुशीलन प्रश्न कौशल के घटकों का वर्णन कीजिए।
5. व्याख्या किसे कहते हैं? व्याख्या कौशल के घटकों का वर्णन कीजिए।
6. दृष्टान्त व्याख्या कौशल किन सूत्रों पर आधारित है?
7. पुनर्बलन से आप क्या समझते है? सीखने में इसकी क्या भूमिका है?
8. सूक्ष्म शिक्षण से आप क्या समझते है? इसके पदों को संक्षेप में समझाइए।
9. सूक्ष्म शिक्षण की कौन–कौन सी मान्यतायें व सिद्धान्त होते हैं?
10. सूक्ष्म शिक्षण से क्या लाभ है?

8.20 चर्चा के बिन्दु

1. विभिन्न शिक्षण कौशलों की उपयोगिता तथा महत्ता क्या है? चर्चा कीजिए।
2. शिक्षण कौशलों के विकास में सूक्ष्म शिक्षण की क्या भूमिका है? चर्चा कीजिए।

8.21 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. उन सभी क्रियाओं से है जिन्हें शिक्षक कक्षा के अन्दर छात्रों के व्यवहारों में वांछित परिवर्तन लाने के लिए कुशलतापूर्वक संपादित करता है।
2. 14 कौशल
3. विद्यार्थी के पूर्व ज्ञान पर
4. संकेत देना, विस्तृत सूचना प्राप्ति, पुनः केन्द्रीयकरण, पुनः प्रेषण, आलोचनात्मक सजगता।
5. किसी बात को सरल करके समझाना ही व्याख्या कहलाता है।
6. आगमन व निगमन विधि
7. दो प्रकार का होता है– धनात्मक व ऋणात्मक

8. छात्रों का ध्यान अपनी ओर तथा विषयवस्तु की ओर आकर्षित करने हेतु।

9. किसी प्रयोग या क्रिया को करके दिखलाना

10. डी0डब्ल्यू0 एलेन द्वारा

11. 6 पक्ष

12. जब शिक्षा आयोग (1964–66) ने शिक्षक–प्रशिक्षण संस्थाओं की स्थिति का वर्णन किया।

13. पांच सिद्धान्तों का वर्णन किया है।

14. तीन भागों में– विषयवस्तु, कक्षा, कक्षा अध्यापन की अवधि।

15. पुन :आलोचना पद

16. स्टैनफोर्ड विश्वविद्यालय में।

8.22 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. कुलश्रेष्ठ, एस0 पी0 एवं सिंघल अनुपमा (2011), *शैक्षिक तकनीकी के मूल आधार*, आगरा : अग्रवाल पब्लिकेशन्स।

2. कथूरिया, आर0 पी0 (1980), *सूक्ष्म अध्यापन, भोपाल* : विकास पब्लिकेशन्स।

3. कपूर, उर्मिला (1986), *शैक्षिक तकनीकी, आगरा* :साहित्य प्रकाशन।

4. मिश्रा, आर0 एम0 (2010), *शैक्षिक तकनीकी के तत्व एवं प्रबंधन* लखनऊ : आलोक प्रकाशन।

5. Mangal, S. K. & Mangal, Uma (2013), *Essentials of Educational Technology*, Delhi : PHI Learning Pvt. Limited.

6. Sharma, R. A. (2010), *Technological Foundation of Education*, Meerut : R. Lal Book Depot.

7. Bhatt, B. D. & Sharma, S. R. (1992), *Educational technology-concept & technique*, New Delhi : Kanishka Publications.

8. Dosajh, N. L. (1977), *Modification of teacher behaviour through micro teaching*, New Delhi : sterling publication.

9. Das, R. C. (1993), *Educational technology : A basic text*, New Delhi : Sterling Publication.

10. Jangira, N. K. & Kulshrestha, S. P. (1981), *Hand book of Indian Researches in micro teaching*,

11. Kumar, K. L. (1996), *Educational Technology*, New Delhi : New Age.

12. Passi, B. K. (1976), *Becoming Better Teacher*, *Micro Teaching*, Ahmedabad.

13. Sharma, A. R. (2010), *Educational Technology*, Agra : Agrawal Publication.

14. Srivastva, S. S. (1979), *Micro Teaching : An Introduction in Teacher Education*, Agra : National Psychological Corporation.

इकाई– 9 : शिक्षण अवस्थाओं में शिक्षकों की भूमिकाएँ और उनके कार्य

इकाई की संरचना

9.1 प्रस्तावना

9.2 इकाई के उद्देश्य

9.3 शिक्षण की अवस्थाओं में शिक्षक की भूमिका एवं कार्य

9.3.1 शिक्षण की पूर्व क्रिया अवस्था में शिक्षकों द्वारा किया जाने वाला कार्य

9.3.2 शिक्षण की अन्तःक्रिया अवस्था में शिक्षकों द्वारा किया जाने वाला कार्य

9.3.3 शिक्षण की उत्तर क्रिया अवस्था में शिक्षकों द्वारा किया जाने वाला कार्य

9.4 सारांश

9.5 अभ्यास के प्रश्न

9.6 चर्चा के बिन्दु

9.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

9.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

9.1 प्रस्तावना

शिक्षण प्रक्रिया विभिन्न शिक्षण क्रियाओं का समग्र रूप है, जो विभिन्न अवस्थाओं से होकर गुजरता है। शिक्षण की सफलता इन क्रियाओं के सफल संचालन पर निर्भर करता है। शिक्षण प्रक्रिया के संचालन की दृष्टि से शिक्षक की भूमिका एवं कार्य अति महत्वपूर्ण है। कक्षा में पढ़ाने के पहले शिक्षक पाठ की योजना बनाता है, तैयारी करता है, इसके बाद कक्षा में शिक्षार्थियों के साथ अन्तःक्रिया करता है और अन्त में जो कुछ सिखाया गया उसका मूल्यांकन करता है। इस प्रकार से शिक्षक कक्षा में अपनी भूमिका का निर्वहन करते हुए शिक्षण कार्य को सम्पन्न करता है।

अधिगम एवं शिक्षण की यह नौवीं इकाई है। इस इकाई में शिक्षण तथा उसकी विभिन्न अवस्थाओं में शिक्षक की भूमिका एवं कार्य का विस्तृत वर्णन किया गया है। इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आपको कक्षा में शिक्षण प्रक्रिया को सफल बनाने के लिए अध्यापक द्वारा किए जाने वाले कार्य तथा उसकी भूमिकाओं को समझने में सुविधा होगी।

9.2 इकाई क उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि–

1. शिक्षण की अवस्थाओं को की सूची बना सकेंगे।
2. शिक्षण की अवस्थाओं को पहचान सकेंगे।
3. विभिन्न शिक्षण अवस्थाओं में शिक्षक द्वारा किये जाने वाले कार्यों का वर्णन कर सकेंगे।
4. शिक्षण प्रक्रिया में शिक्षक की भूमिका का विस्तार से वर्णन कर सकेंगे।
5. शिक्षक द्वारा की जाने वाली क्रियाओं को विभिन्न शिक्षण अवस्थाओं में सूचीबद्ध कर सकेंगे।
6. शिक्षण प्रक्रिया में शिक्षक की महत्ता को समझ सकेंगे।
7. पूरी शिक्षण प्रक्रिया का विश्लेषण कर सकेंगे।

9.3 शिक्षण की अवस्थाओं में शिक्षक की भूमिका एवं कार्य

शिक्षण एक सामाजिक तथा उद्देश्यपूर्ण प्रक्रिया है जिस पर देश की शासन प्रणाली, सामाजिक दर्शन, सामाजिक परिस्थितियों तथा मूल्यों आदि का प्रभाव पड़ता है। शिक्षण के उद्देश्यों को प्राप्त करने अर्थात् सफलतापूर्वक शिक्षण के लिए जैक्शन ने शिक्षण प्रक्रिया को तीन अवस्थाओं में विभाजित किया है जैसे –

1. पूर्व–क्रिया अवस्था / तैयारी की अवस्था (Pre-active Stage)
2. अन्तःक्रिया अवस्था / अध्यापन अवस्था (Inter-active Stage)
3. उत्तर–क्रिया अवस्था / मूल्यांकन अवस्था (Post-active Stage)

ये तीनों अवस्थायें एक दूसरे से सम्बन्धित हैं तथा इन तीनों के अपने कुछ विशेष कार्य है जिन्हें व्यवस्थित व समायोजित करके शिक्षक अपने शिक्षण उद्देश्यों को प्राप्त करने की कोशिश करता है। शिक्षण की प्रक्रिया में शिक्षक की एक जीवन्त भूमिका होती है। शिक्षक कक्षा में पहियों की धुरी के समान कार्य करता है।

9.3.1 शिक्षण की पूर्व क्रिया अवस्था में शिक्षकों द्वारा किया जाने वाला कार्य

यह अवस्था योजना, निर्धारण तथा चयन की अवस्था है। इसमें शिक्षक कक्षा में जाने से पूर्व शिक्षण की तैयारी करता है। जैसे– किस विषय वस्तु को पढ़ाना है, उसे पढ़ाने के क्या उद्देश्य है तथा विषयवस्तु को किस विधि से पढ़ाया जायेगा और पाठ को पढ़ाने के लिए किस प्रकार के सहायक सामग्री का उपयोग किया जायेगा तथा किस प्रकार की पुस्तकों का अध्ययन करना उचित होगा।

अतः पूर्व–क्रिया अवस्था में शिक्षक किसी भी विषयवस्तु को पढ़ाने के पहले उस विषयवस्तु को पढ़ाने के उद्देश्यों को निर्धारित करता है। शिक्षक उद्देशों का निर्माण विद्यार्थियों के पूर्वज्ञान तथा स्तर के हिसाब से करता है। जहाँ तक हो सके शिक्षक यह ध्यान रखता है कि उद्देश्य विद्यार्थियों के व्यवहारिक जीवन से जुड़ा हो तथा समाज व राष्ट्र की आवश्यकतओं को भी पूर्ण करता हो।

शिक्षक उद्देश्यों के निर्धारण के पश्चात् उद्देश्यों के अनुसार उचित पाठ्यवस्तु का चयन करना भी शिक्षक का एक कार्य है। पाठ्यवस्तु का चुनाव करते समय शिक्षक पाठ्यवस्तु की भाषा, स्तर तथा विद्यार्थियों की आयु स्तर तथा पूर्वज्ञान का ध्यान रखता है।

पाठ्यवस्तु का चयन करने के पश्चात् शिक्षक सोचता है कि वह पाठ को किस प्रकार से तथा किस शैली (Style) में पढ़ायें कि विद्यार्थी आसानी से विषयवस्तु को अधिगम कर सकें। इसके लिए शिक्षक पाठ्यवस्तु को तार्किक क्रम में मनोवैज्ञानिक ढंग से व्यवस्थित करता है, जिससे कि विद्यार्थी आसानी से सीख सकें।

शिक्षण कार्य को सुचारु रुप से चलाने के लिए शिक्षक, शिक्षण की व्यूह रचना (Strategy) बनाता है। व्यूह रचना बनाते समय शिक्षक विद्यार्थियों की योग्यता, आयु तथा स्तर का ध्यान रखता है। यदि व्यूह रचना सही नहीं होगी तो पूरी शिक्षण प्रक्रिया अस्त–व्यस्त नजर आयेगी तथा विद्यार्थियों ध्यान भंग हो जायेगा। अतः उपयुक्त शिक्षण व्यूह रचना का निर्धारण करना भी शिक्षक का एक महत्वपूर्ण कार्य है।

शिक्षक कक्षा में जाने से पूर्व ही इस बात का निर्णय कर लेता है कि पढ़ाते समय पाठ्यवस्तु को स्पष्ट करने के लिए किन–किन सहायक सामग्री का उपयोग करेगा तथा किस प्रकार के उदाहरणों का प्रयोग करेगा, जहाँ तक हो सके शिक्षक यह ध्यान रखता है कि उदाहरण कृत्रिम न हो बल्कि विद्यार्थियों के व्यवहारिक जीवन से सम्बन्धित हो। शिक्षक कक्षा में कब प्रश्न करेगा, कब व्याख्यान देगा और किस समय कौन सी सामग्री का प्रयोग करेगा, कक्षा में जाने से पूर्व ही निश्चित / निर्धारित कर लेता है।

किसी भी पाठ को सीखने में रुचि तथा प्रेरणा बहुत ही महत्वपूर्ण कारक होते हैं। इसलिए शिक्षक कक्षा में जाने से पूर्व ही विचार कर लेता है कि वह विद्यार्थियों को किस प्रकार से सीखने के लिए प्रेरित करेगा, जिससे वह अधिक से अधिक सीख सकें।

किसी भी कार्य की सफलता तथा असफलता का ज्ञान कार्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् ही पता चलता है। इसलिए शिक्षक पहले से ही योजना बना लेता है कि वह शिक्षण के उपरान्त विद्यार्थियों द्वारा सीखी गई विषयवस्तु का मूल्यांकन कैसे और किस विधि से करेगा।

उपर्युक्त कार्यों को देखने से पता चलता है कि पूर्व–क्रिया अवस्था में शिक्षक की भूमिका एक "योजना बनाने वाले" की होती है। इस अवस्था में वह कक्षा में जाने से पूर्व ही पूरी शिक्षण प्रक्रिया की रुपरेखा खींच लेता है, ताकि सफलतापूर्वक शिक्षण किया जा सकें। इसलिए इस अवस्था को शिक्षण योजना अवस्था भी कहा जाता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. जैक्शन ने शिक्षण प्रक्रिया को कितनी अवस्थाओं में विभाजित किया है?

....

....

2. पूर्व–क्रिया अवस्था में शिक्षक की किस तरह की भूमिका है?

....

....

3. पूर्व–क्रिया अवस्था को और किस नाम से पुकारा जाता है?

....

....

4. पूर्व–क्रिया अवस्था में शिक्षक, शिक्षण से संबंधित किन–किन बातों का निर्धारण करता है?

....

....

9.3.2 शिक्षण की अन्तः क्रिया अवस्था में शिक्षकों द्वारा किया जाने वाला कार्य

इसमें वे सभी क्रियायें आती है जिन्हें शिक्षक कक्षा में प्रवेश करने से लेकर पाठ्यवस्तु प्रस्तुत करने के समय तक करता है। जैसे– पाठ का वर्णन करना, प्रश्न पूछना, उत्तर सुनना, प्रेरित करना, पूनर्बलन प्रदान करना, व्याख्या करना, श्रव्य–दृश्य सामग्री दिखाना तथा शिक्षण के उद्देश्यों तक पहुँचाना इत्यादि। अतः इस अवस्था में शिक्षक पूर्व क्रिया अवस्था में तैयार की गयी शिक्षण योजना का क्रियान्वयन करता है। अन्तः क्रिया अवस्था में शिक्षक सर्वप्रथम कक्षा में प्रवेश करता है और पूरी कक्षा में बैठे हुए विद्यार्थियों को देखता है। इससे उसे कक्षा के आकार का ज्ञान हो जाता है तथा कमजोर व अच्छे विद्यार्थी कहाँ बैठे हैं, इसका भी पता चल जाता है। शिक्षक को यह भी पता चल जाता है कि कौन से विद्यार्थी उसे पाठ प्रस्तुतीकरण में सहयोग दे सकते हैं तथा कौन से विद्यार्थी उसे सहयोग नहीं दे सकते हैं। इस प्रकार से शिक्षक पूरी कक्षा की भौतिक योजना बना लेता है।

दूसरी तरफ विद्यार्थी भी शिक्षक को देखकर यह जानने की कोशिश करते हैं कि शिक्षक कितना योग्य है, तथा कितना अच्छा पढ़ा सकेगा। ज्यादातर मालूम पड़ता है कि विद्यार्थी शिक्षक की वेश–भूषा, हाव–भाव तथा बोलने के ढंग के आधार पर ही शिक्षक की योग्यता का मूल्यांकन करते हैं।

कक्षा के आकार को देखने के पश्चात् शिक्षक विद्यार्थियों के पूर्वज्ञान, अभिरुचियों तथा योग्यता को जानने का प्रयास करता है। शिक्षक, विद्यार्थियों को देखकर तथा कुछ प्रश्नों को पूछकर उनके स्तर व योग्यता

का पता लगाता है। विद्यार्थियों के स्तर, पूर्वज्ञान तथा योग्यता की जानकारी के पश्चात् शिक्षक पाठ्यवस्तु को प्रस्तुत करता है। पाठ्यवस्तु को प्रस्तुत करते समय शिक्षक यह ध्यान रखता है कि जो पाठ्यवस्तु उसे कक्षा में पढ़ानी हो उसका उसे पूर्ण ज्ञान हो तथा पाठ्यवस्तु का विकास निश्चित क्रम व सन्दर्भ में हो।

पाठ्यवस्तु को लोकतांत्रिक ढंग से पढ़ाते हुए शिक्षक विद्यार्थियों से प्रश्न पूछता है, उनका उत्तर सुनता है तथा उन्हें उचित पुनर्बलन भी देता है। पुनर्बलकों का प्रयोग करके शिक्षक वांछित अनुक्रिया की सम्भावना को बढ़ाता है तथा विद्यार्थियों को सही अनुक्रिया करने के लिए प्रेरित करता है। पाठ्यवस्तु को प्रस्तुत करते समय शिक्षक विद्यार्थियों की सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक स्थिति का भी ध्यान रखता है, क्योंकि कक्षा में विभिन्न सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक स्थिति वाले विद्यार्थी उपस्थित होते हैं। अतः शिक्षक लोकतान्त्रिक दृष्टिकोण अपनाते हुए सभी विद्यार्थियों पर समान रुप से ध्यान देता है तथा सभी को सक्रिय बनाये रखने का प्रयास करता है।

कक्षा में कुछ विद्यार्थी मेधावी होते हैं तथा कुछ विद्यार्थी कमजोर होते हैं। शिक्षक कमजोर छात्रों को सीखने के लिए विशेष रुप से प्रेरित करता है तथा सहायता प्रदान करता है जिससे उनके स्तर को बढ़ा सकें।

शिक्षक के उपर्युक्त कार्यों को देखकर पता चलता है कि अन्तःक्रिया अवस्था में शिक्षक कार्यपालक (Executive) की भूमिका में होता है जिसमें वह पूर्वक्रिया अवस्था में निश्चित किए गए कार्यों को क्रियान्वित करता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

5. अन्तःक्रिया अवस्था में शिक्षक क्या करता है?

....

....

6. शिक्षक छात्रों की योग्यता कैसे पता लगाता है?

....

....

7. अन्तःक्रिया अवस्था में शिक्षक किस भूमिका में होता है?

....

....

9.3.3 शिक्षण की उत्तर क्रिया अवस्था शिक्षकों द्वारा किया जाने वाला कार्य

इसमें शिक्षक यह जानने का प्रयास करता है कि जो कुछ उसने कक्षा मे पढ़ाया है, उसका विद्यार्थियों पर क्या प्रभाव पड़ा अर्थात् विद्यार्थियों ने क्या सीखा तथा उनके व्यवहारों में किस सीमा तक परिवर्तन आया और जिस वांछित व्यवहार की प्राप्ति नहीं हो सकी, उसे प्राप्त करने के लिए शिक्षक को किस प्रकार का परिवर्तन अपनी शिक्षण योजना में करना होगा।

अतः इस अवस्था में शिक्षक सर्वप्रथम पूर्व–क्रिया अवस्था में निश्चित किए गये शिक्षण उद्देश्यों के आधार पर उन व्यवहार परिवर्तनों को परिभाषित करता है, जिसे वह शिक्षण के उपरान्त अपने विद्यार्थियों में देखना चाहता है। शिक्षण का मूल्यांकन, शिक्षण के उद्देश्यों की प्राप्ति से सम्बन्धित होता है, इसकी जानकारी

से शिक्षक विद्यार्थियों में हुए वांछित व्यवहार परिवर्तन की सूचना प्राप्त करता है।

शिक्षक, विद्यार्थियों के व्यवहार परिवर्तन का मूल्यांकन करने के लिए ऐसी विधि का चयन करता है, जो विश्वसनीय तथा वैद्य हो और जिससे विद्यार्थी के तीनों पक्षों–ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा क्रियात्मक, का सही–सहीं मूल्यांकन हो सकें। उत्तर क्रिया अवस्था में शिक्षक तथा विद्यार्थी दोनों का विषयवस्तु के सन्दर्भ में मूल्यांकन होता है जैसे शिक्षक विद्यार्थियों से कोई प्रश्न पूछता है और कक्षा के 70% विद्यार्थी उस प्रश्न का उत्तर सही–सही दे देते हैं तो इससे शिक्षक को यह पता चलता है कि कक्षा में जो कुछ उसने पढ़ाया है उसको विद्यार्थियों ने कितना सीखा है तथा साथ ही साथ शिक्षक को यह भी पता चलता है कि उसकी शिक्षण योजना सही थी या गलत। योजना का क्रियान्वयन उसकी सफलता को बताता है, परन्तु यदि 30% विद्यार्थी ही प्रश्न का उत्तर दे पाते हैं तो इससे पता चलता है कि विद्यार्थियों की उपलब्धि बहुत कम है तथा शिक्षक की योजना में त्रुटि है। इसके फलस्वरूप शिक्षक को अपनी योजना, विधि, युक्ति में परिवर्तन करने की भी सूचना मिलती है, अर्थात् शिक्षक को भी अपनी कमियों तथा सीमाओं की जानकारी मूल्यांकन से प्राप्त होती है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

8. शिक्षक उत्तर क्रिया अवस्था में क्या जानना चाहता है?

....

....

9. शिक्षक, विद्यार्थियों के व्यवहार परिवर्तन का मूल्यांकन करने के लिए किस विधि का चयन करता है?

....

....

10. शिक्षक किस आधार पर व्यवहार परिवर्तन को परिभाषित करता है?

....

....

9.4 सारांश

शिक्षण एक उद्देश्यपूर्ण प्रक्रिया है जिसे जैक्शन (1966) ने तीन अवस्थाओं में विभाजित किया है– (1) पूर्व–क्रिया अवस्था, (2) अन्तःक्रिया अवस्था, (3) उत्तर–क्रिया अवस्था। ये तीनों अवस्थायें एक–दूसरे से संबंधित है। प्रत्येक अवस्था में शिक्षक एक विशेष भूमिका का निर्वहन करता है तथा उससे सम्बन्धित कार्यों का संपादन करता है। पूर्व–क्रिया अवस्था में शिक्षक 'योजना बनाने वाले' की भूमिका में रहता है और शिक्षण से संबंधित विषयवस्तु, उद्देश्य, शिक्षण शैली एवं शिक्षण युक्तियों का चयन तथा व्यूह रचना की योजना का निर्धारण करता है। अन्तःक्रिया अवस्था में शिक्षक पूर्व–क्रिया अवस्था में बनायी गयी योजना का क्रियान्वयन करता है और उत्तर–क्रिया अवस्था में निश्चित किए गए उद्देश्यों के आधार पर मूल्यांकन करता है। शिक्षण की सफलता इन तीनों प्रकार की भूमिका व कार्यों के सफल संचालन पर निर्भर करता है।

9.5 अभ्यास के प्रश्न

1. शिक्षण क्या है? इसकी विभिन्न अवस्थाओं का संक्षिप्त विवरण दीजिए।

2. पूर्व–क्रिया अवस्था में शिक्षक की क्या भूमिका है? सविस्तार वर्णन कीजिए।
3. शिक्षक द्वारा अन्तःक्रिया अवस्था में की जाने वाली क्रियाओं का वर्णन कीजिए।
4. शिक्षण की उत्तर–क्रिया अवस्था का विवरण दीजिए।
5. तीनों अवस्थाओं में शिक्षक द्वारा की जाने वाली क्रियाओं को सार रूप में प्रदर्शित कीजिए।
6. शिक्षण प्रक्रिया में शिक्षक की महत्ता को स्पष्ट कीजिए।
7. पूरी शिक्षण प्रक्रिया का विश्लेषण करते हुए शिक्षक की प्रमुख क्रियाओं का वर्णन कीजिए।

9.6 चर्चा के बिन्दु

1. "शिक्षण प्रक्रिया में शिक्षक की महत्ता तथा उपयोगिता" पर चर्चा कीजिए।
2. शिक्षण शैली, व्यूह रचना तथा युक्ति पर चर्चा चर्चा कीजिए।

9.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. तीन अवस्थाओं में विभाजित किया है।
2. योजना निर्माणकर्ता या योजना बनाने वाले की भूमिका में होता है।
3. शिक्षण योजना अवस्था।
4. पाठ्यवस्तु, उद्देश्य, शिक्षण शैली, युक्ति तथा व्यूह रचना।
5. पूर्व–क्रिया अवस्था में तैयार की गई शिक्षण योजना का क्रियान्वयन करता है।
6. प्रश्न पूछकर।
7. कार्यपालक की भूमिका निभाता है।
8. विद्यार्थियों ने क्या सीखा उनके व्यवहार में किस सीमा तक परिवर्तन आया।
9. विश्वसनीय तथा वैध विधि का चयन करता है।
10. शिक्षण उद्देश्यों के आधार पर व्यवहार परिवर्तन को परिभाषित करता है।

9.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. कुलश्रेष्ठ, एस0 पी0 एवं सिंघल अनुपमा (2011), *शैक्षिक तकनीकी के मूल आधार*, आगरा : अग्रवाल पब्लिकेशन्स।
2. कपूर, उर्मिला (1986), *शैक्षिक तकनीकी, आगरा* : साहित्य प्रकाशन।
3. मिश्रा, आर0 एम0 (2010), *शैक्षिक तकनीकी के तत्व एवं प्रबंधन*, लखनऊ : आलोक प्रकाशन।
4. Mangal, S. K. & Mangal, Uma (2013), *Essentials of Educational Technology*, Delhi : PHI Learning Pvt. Limited.
5. Sharma, R. A. (2010), *Technological Foundation of Education*, Meerut : R. Lal Book Depot.
6. Bhatt, B. D. & Sharma, S. R. (1992), *Educational technology-concept & technique*, New Delhi : Kanishka Publications.
7. Das, R. C. (1993), *Educational technology : A basic text*, New Delhi : Sterling Publication.
8. Kumar, K. L. (1996), *Educational Technology*, New Delhi : New Age.
9. Sharma, A. R. (2010), *Educational Technology*, Agra : Agrawal Publication.

खण्ड 04 : शिक्षण के उपागम एवं रणनीतियां

खण्ड परिचय

शिक्षार्थियों या समाज के लोगों को ज्ञान प्रदान करने के उद्देश्य से समाज में विद्यालयों की स्थापना की जाती है। विद्यालयों में शिक्षक अपने शिक्षण कार्य के तरीकों या रणनीतियों के माध्यम से शिक्षार्थियों में ज्ञान व कौशलों का विकास करते हैं। शिक्षार्थी भी अपने सीखने के विभिन्न दृष्टिकोंण या उपागमों के माध्यम से ज्ञान प्राप्त करते हैं व अपने अन्दर विभिन्न आवश्यक कौशलों का विकास करते हैं। शिक्षा प्रक्रिया अपने परम्परागत रूप में शिक्षक–केन्द्रित रही है, जिसमें शिक्षक ज्ञान का प्राथमिक स्रोत होता है तथा शिक्षार्थी उस ज्ञान का निष्क्रिय प्राप्तकर्ता होता है। परन्तु वर्तमान समय में शिक्षा अधिक से अधिक छात्र–केन्द्रित हो चुकी है, जिसके अन्तर्गत सीखने की प्रक्रिया में शिक्षार्थियों की सक्रिय भागीदारी होती है। अतएव इसी आधार पर इस खण्ड में सीखने एवं सिखाने के विभिन्न शिक्षार्थी केन्द्रित उपागमों, शिक्षक केन्द्रित रणनीतियों एवं समूह केन्द्रित उपागम एवं रणनीतियों की चर्चा की जा रही है। इस खण्ड को क्रमशः तीन इकाईयों में विभक्त किया गया है–

इकाई– 10 में शिक्षार्थी केन्द्रित उपागम का सम्प्रत्यय, शिक्षार्थी केन्द्रित उपागम के सामान्य सिद्वान्त, शिक्षार्थी केन्द्रित उपागम का महत्व एवं विभिन्न शिक्षार्थी केन्द्रित उपागमों का अध्ययन किया गया है। विभिन्न शिक्षार्थी केन्द्रित उपागम के अन्तर्गत ह्युरिस्टिक उपागम, डिस्कवरी उपागम, प्रायोजना उपागम एवं समस्या समाधान उपागम आदि की विशेषताओं व सीमाओं सहित चर्चा की गई है।

इकाई– 11 में शिक्षण नीति का अर्थ, शिक्षण नीति, शिक्षण विधि एवं शिक्षण युक्ति में अंतर, शिक्षण नीतियों की विशेषताओं, शिक्षक केंद्रित शिक्षण नीतियों का सम्प्रत्यय, शिक्षक केन्द्रित शिक्षण नीतियों की विशेषताओं, शिक्षक केन्द्रित शिक्षण नीतियों की सीमाओं आदि का अध्ययन किया गया है। विभिन्न शिक्षक केन्द्रित शिक्षण नीतियों के अन्तर्गत व्याख्यान नीति, प्रदर्शन नीति, व्याख्यान–सह–प्रदर्शन नीति एवं ट्युटोरियल नीति आदि के बारे में विस्तृत चर्चा की गई है।

इकाई– 12 में शिक्षण उपागम एवं नीतियों का अर्थ, समूह केन्द्रित शिक्षण उपागम एवं नीतियों का सम्प्रत्यय, समूह केन्द्रित शिक्षण उपागम एवं नीतियों के मुख्य पहलू, समूह केन्द्रित शिक्षण उपागम एवं नीतियों का महत्व तथा विभिन्न समूह केन्द्रित शिक्षण उपागम एवं नीतियों का अध्ययन किया गया है। विभिन्न समूह केन्द्रित शिक्षण उपागम एवं नीतियों के अन्तर्गत प्रश्नोत्तर नीति, वार्तालाप नीति, सहयोगात्मक अधिगम, भूमिका निर्वाह नीति एवं फ्लिप्ड क्लासरूम आदि की चर्चा की गई है।

इकाई – 10 : शिक्षार्थी केन्द्रित उपागम

इकाई की संरचना

10.1 प्रस्तावना

10.2 इकाई के उद्देश्य

10.3 उपागम

10.4 शिक्षार्थी केन्द्रित उपागम

10.5 शिक्षार्थी केन्द्रित उपागम के सामान्य सिद्धान्त

10.6 शिक्षार्थी केन्द्रित उपागम का महत्व

10.7 विभिन्न शिक्षार्थी केन्द्रित उपागम

10.7.1 ह्युरिस्टिक उपागम

10.7.2 खोज उपागम

10.7.3 परियोजना उपागम

10.7.4 समस्या समाधान उपागम

10.8 सारांश

10.9 अभ्यास के प्रश्न

10.10 चर्चा के बिन्दु

10.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

10.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

10.1 प्रस्तावना

शिक्षा समाज की एक प्रमुख प्रक्रिया है, जिसमें शिक्षक, शिक्षर्थी, पाठ्यक्रम एवं सीखने का माहौल जैसे कारकों की परस्पर क्रिया शामिल होती है। शिक्षार्थियों या समाज के लोगों को ज्ञान प्रदान करने के उद्देश्य से समाज में विद्यालयों की स्थापना की जाती है। विद्यालयों में शिक्षक अपने शिक्षण कार्य के तरीकों के माध्यम से शिक्षार्थियों में ज्ञान व कौशलों का विकास करते हैं। शिक्षार्थी भी अपने सीखने के विभिन्न दृष्टिकोंण व तरीकों के माध्यम से ज्ञान प्राप्त करते हैं व अपने अन्दर विभिन्न आवश्यक कौशलों का विकास करते हैं। शिक्षा प्रक्रिया अपने परम्परागत रूप में शिक्षक–केन्द्रित रही है, जिसमें शिक्षक ज्ञान का प्राथमिक स्रोत होता है तथा शिक्षार्थी उस ज्ञान का निष्क्रिय प्राप्तकर्ता होता है। परन्तु वर्तमान समय में शिक्षा अधिक से अधिक छात्र–केन्द्रित हो चुकी है, जिसके अन्तर्गत सीखने की प्रक्रिया में शिक्षार्थियों की सक्रिय भागीदारी होती है। शिक्षक एवं छात्र भी वर्तमान समय में सीखने एवं सिखाने के ऐसे उपागमों या दृष्टिकोंण को अपनाते हैं जिससे छात्र अपनी आवश्यकता, रुचि, योग्यता व क्षमता के अनुसार अधिक से अधिक ज्ञान सरलता पूर्वक प्राप्त कर सकें। अतएव इसी आधार पर इस इकाई में सीखने व सिखाने के विभिन्न शिक्षार्थी केन्द्रित उपागमों की चर्चा की जा रही है।

10.2 इकाई के उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि–

1. उपागम के सम्प्रत्यय को समझ कर अभिव्यक्त कर सकेंगे।
2. शिक्षार्थी केन्द्रित उपागमों को समझ कर छात्रों को अध्ययन हेतु प्ररित कर सकेंगे।
3. शिक्षार्थी केन्द्रित उपागम के सामान्य सिद्धान्तों का वर्णन कर सकेंगे।
4. शिक्षार्थी केन्द्रित उपागम के महत्व को स्पष्ट कर सकेंगे।
5. ह्युरिस्टिक उपागम के गुण एवं दोषों की विवेचना कर सकेंगे।

6. खोज उपागम के उपयोग से परिचित हो सकेंगे।
7. प्रयोजना उपागम का प्रयोग कर सकेंगे।
8. समस्या समाधान उपागम के माध्यम से समस्या समाधान की योग्यता का विकास कर सकेंगे।

10.3 उपागम

उपागम का शाब्दिक अर्थ है देखने का एक नजरिया, कि विभिन्न विषय, तथ्य, विचार या वस्तु को हम किस प्रकार से यह किस तरह से देख रहे हैं। विभिन्न विषय, तथ्य, विचार या वस्तु को अलग–अलग प्रकार से या अलग–अलग तरह से देखने पर इनके स्वरूप भी अलग–अलग दिख सकते हैं। उपागम विभिन्न तथ्यों, चीजों एवं विचारों आदि को देखने एवं समझने का एक नजरिया है। यह विचारों का एक ऐसा समूह है जो किसी समस्या का सामना करने, तथ्यों एवं वस्तुओं को समझने और विचारों को ग्रहण करने का एक समग्र दृष्टिकोंण है, जो कि किसी वैज्ञानिक तर्क पर आधारित नहीं है। उपागम शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया का एक व्यक्तिगत प्रकार का दर्शन होता है। शिक्षक द्वारा शिक्षण कार्य करने के तरीके या पढ़ाने के स्वरूप के आधार पर कि वह शिक्षण कार्य कैसे करते हैं? उनका दृष्टिकोंण क्या है? उपागम की कई रणनीतियां हो सकती हैं। इसी प्रकार शिक्षार्थी पाठ्यवस्तु का अध्ययन किस प्रकार से कर रहे हैं, उनका अध्ययन करने का तरीका या स्वरूप क्या है? आदि के आधार पर विभिन्न प्रकार के उपागम हो सकते हैं। अतः कहा जा सकता है कि शिक्षार्थी के अध्ययन करने के तरीके या स्वरूप एवं शिक्षार्थियों की अध्ययन में सहभागिता आदि के आधार पर कई प्रकार के उपागम होते हैं।

क्षेत्रीय शिक्षा महाविद्यालय मैसूर ने शिक्षण–अधिगम परिस्थितियों, रणनीतियों एवं सहायक सामग्री के उचित अनुप्रयोग द्वारा उपागम के अंतर्गत तीन बातों को सम्मिलित किया है– इनपुट (अदा), प्रासेस (प्रक्रिया) एवं आउटपुट (प्रदा)। उपागम विधियों एवं नीतियों की तुलना में व्यापक होता है, जो कि शिक्षण एवं अधिगम के लक्ष्यों एवं उद्देश्यों को प्राप्त करने का एक महत्वपूर्ण दृष्टिकोंण है।

10.4 शिक्षार्थी केन्द्रित उपागम

शिक्षार्थी केन्द्रित उपागम एक ऐसा दृष्टिकोंण होता है जिसमें शिक्षार्थी शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया में एक सक्रिय भूमिका या मुख्य भूमिका में होता है। इसमें शिक्षार्थी अपने ज्ञान, पूर्व अनुभव, विचार एवं अपने तरीकों के आधार पर नए ज्ञान को ग्रहण करते हैं, सृजन करते हैं एवं सीखते हैं। शिक्षार्थी केंद्रित उपागम पूर्व में प्रचलित पारम्परिक शिक्षक केंद्रित शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया से काफी भिन्नता रखता है। इस उपागम में शिक्षक मात्र एक मार्गदर्शक, मित्र एवं सुविधाप्रदाता की भूमिका का निर्वहन करता है जो कि नियोजित क्रियाकलापों एवं गतिविधियों के माध्यम से शिक्षार्थियों के सीखने हेतु अनुकूल परिस्थितियों या माहौल का निर्माण करता है। शिक्षार्थी केन्द्रित उपागम शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया में शिक्षार्थियों को संलग्न करने व अधिगम को आगे बनाए रखने का एक अच्छा तरीका है। शिक्षार्थी केन्द्रित उपागम सीखने की प्रक्रिया में शिक्षार्थियों को केंद्र में रखकर उनकी रुचियों, आवश्यकताओं एवं लक्ष्यों के अनुसार शिक्षा प्रदान करने पर बल देता है। यह उपागम अधिगम हेतु जुड़ाव, लगाव, अभिप्रेरणा तथा ज्ञान, सूचनाओं, एवं पाठ्यवस्तु को धारण करने में शिक्षक केंद्रित उपागम या तकनीक की तुलना में अधिक प्रभावशाली माना जाता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. उपागम का शाब्दिक अर्थ क्या है?

....

....

2. शिक्षार्थी केन्द्रित उपागम के अन्तर्गत शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया में कौन सक्रिय भूमिका या मुख्य भूमिका में होता है?

....

....

10.5 शिक्षार्थी केन्द्रित उपागम के सामान्य सिद्धान्त

शिक्षण एवं अधिगम प्रक्रिया में शिक्षार्थी केन्द्रित उपागम शिक्षार्थियों की व्यक्तिगत रुचियों, क्षमताओं एवं आवश्यकताओं आदि को सर्वाधिक महत्व देता है। शिक्षार्थी केंद्रित उपागम के सामान्य सिद्धांतों के अंतर्गत अधिगम प्रक्रिया में शिक्षार्थियों को केंद्र में रखना, अधिगम प्रक्रिया में सक्रिय भागीदारी को बढ़ावा देना, सहयोगात्मक अधिगम तथा अधिगम हेतु सकारात्मक परिस्थितियों को बढ़ावा देना आदि सम्मिलित है। शिक्षार्थी केंद्रित उपागम में शिक्षक सिर्फ एक मार्गदर्शक, सुविधाप्रदाता एवं मित्र के रूप में कार्य करता है। शिक्षार्थी केंद्रित उपागम के कुछ सामान्य सिद्धांत निम्नलिखित हैं–

- **शिक्षार्थियों की व्यक्तिगत रुचियों एवं आवश्यकताओं पर बल**– शिक्षार्थी केंद्रित उपागम में शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया शिक्षार्थियों की व्यक्तिगत पसंद एवं जरूरतों को ध्यान में रखकर संपन्न की जाती है। शिक्षक विषयवस्तु का प्रस्तुतीकरण इस प्रकार से करता है जिसमें शिक्षार्थी रुचि लें एवं वह विषयवस्तु उनकी आवश्यकता की पूर्ति कर सके। इस प्रकार से शिक्षार्थी आसानी के साथ कम समय में अधिक स्थाई अधिगम कर पाने में सक्षम होते हैं।

- **शिक्षार्थियों की सक्रिय भागीदारी पर बल**– शिक्षार्थी केंद्रित उपागम में शिक्षार्थी अधिगम हेतु अपने विचारों, प्रयासों एवं खोज के द्वारा तथा अपनी प्रगति पर विचार करके सक्रिय रूप से सीखने में भागीदारी सुनिश्चित करते हैं। शिक्षक भी शिक्षार्थियों से प्रश्न पूंछकर उनको सीखने के लिए सक्रिय रूप से शामिल करने का प्रयास करते हैं।

- **शिक्षार्थियों के आपसी सहयोग पर जोर**– शिक्षार्थी केंद्रित उपागम में शिक्षार्थी एक दूसरे के साथ मिलजुलकर एक साथ कार्य करने तथा एक दूसरे से सीखने का प्रयास करते हैं व शिक्षक भी ऐसा करने के लिए शिक्षार्थियों को प्रोत्साहित करते हैं। शिक्षार्थी केंद्रित उपागम में सामूहिक क्रियाकलाप तथा सहपाठियों से सहपाठियों का सीखना एक आम बात होती है।

- **पृष्ठपोषण के माध्यम से सीखने को बढ़ावा**– शिक्षार्थी केंद्रित उपागम में शिक्षक शिक्षार्थियों को उनकी प्रगति, मजबूती, कमजोरियों तथा सुधार हेतु सुझाव प्रदान कर पृष्ठपोषण प्रदान करता है ताकि शिक्षार्थी अपनी प्रगति एवं कमजोरियों के क्षेत्रों को जानकर सीखने व समझने हेतु आंतरिक रूप से प्रेरित हों।

- **स्वगति से सीखने के अवसर उपलब्ध कराना**– शिक्षार्थी केंद्रित उपागम में शिक्षार्थियों को अपनी गति व सामर्थ्य के अनुसार सीखने के अवसर भी प्राप्त होते हैं क्योंकि इस उपागम में शिक्षक सिर्फ एक पथ प्रदर्शक एवं सहयोगी के रूप में ही शिक्षार्थियों को उनके अनुसार ही सीखने के लिए प्रोत्साहित करता है एवं शिक्षार्थी अपने अनुसार सीखते हैं।

10.6 शिक्षार्थी केन्द्रित उपागम का महत्व

शिक्षार्थी केंद्रित उपागम के मुख्य केंद्र बिन्दु शिक्षार्थियों की रुचियां एवं आवश्यकताएं होती हैं। यह उपागम शिक्षार्थियों को अपने द्वारा निर्धारित लक्ष्यों एवं उद्देश्यों की पूर्ति हेतु बनाई गई रणनीतियों और उनकी प्रगति पर विचार कर सक्रिय रूप से सीखने हेतु भागीदारी करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। शिक्षार्थी केंद्रित उपागम शिक्षार्थियों के लिए अनेक महत्व रखते हैं। शिक्षार्थी केंद्रित उपागम में सर्वप्रथम व सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि यह अधिक इंटेरैक्टिव व आकर्षक शिक्षण–अधिगम अनुभव को बढ़ावा देता है जिससे शिक्षार्थी सक्रिय रूप से सीखने की प्रक्रिया में भाग लेते हैं। इससे शिक्षार्थियों में सीखने के लिए उत्साह बढ़ता है व प्रेरणा मिलती है, जिसके कारण शिक्षार्थियों में बेहतर ज्ञान व कौशल का विकास होता है। इसके अलावा

शिक्षार्थी केन्द्रित उपागम के द्वारा एक समावेशी शिक्षण–अधिगम वातावरण विकसित होता है, जिसके अंतर्गत विभिन्न शिक्षण–अधिगम शैलियों व दृष्टिकोणों का समावेशन होता है। अतः इस उपागम के माध्यम से शिक्षार्थी आजीवन व निरंतर सीखने के लिए तत्पर रहते हैं। शिक्षार्थी केन्द्रित उपागम का महत्व इसलिए भी अधिक बढ़ जाता है क्योंकि इसमें वैयक्तिक विभिन्नताओं का भी ध्यान रखा जाता है जिसमें शिक्षार्थी अपनी रुचि, क्षमता एवं आवश्यकतानुसार सीख व ज्ञान प्राप्त कर सकता है। शिक्षार्थी सहपाठियों के साथ सामूहिक क्रियाकलाप में भाग लेते हैं इस वजह से शिक्षार्थियों को चर्चाओं एवं संवाद में भाग लेकर अपने संप्रेषण कौशल में सुधार करने के अवसर आसानी से उपलब्ध होते हैं। इस उपागम में शिक्षार्थियों को अधिगम हेतु स्वतंत्रता प्राप्त होती है जिसके कारण उनमें आत्मनिर्भरता व रचनात्मकता जैसे गुण विकसित होते हैं। अतः कहा जा सकता है कि शिक्षार्थी केंद्रित उपागम शिक्षार्थियों के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है क्योंकि शिक्षार्थियों को अधिगम हेतु अधिक सक्रिय रूप से सहभागिता के अवसर प्राप्त होते हैं।

10.7 विभिन्न शिक्षार्थी केन्द्रित उपागम

शिक्षार्थी केन्द्रित उपागम शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया में शिक्षार्थियों को केंद्र में रखकर उनकी रुचियों, आवश्यकताओं एवं लक्ष्यों के अनुसार शिक्षा प्रदान करने पर बल देता है। कुछ प्रमुख शिक्षार्थी केन्द्रित उपागम निम्नलिखित हैं–

- ह्युरिस्टिक उपागम
- खोज उपागम
- परियोजना उपागम
- समस्या समाधान उपागम

10.7.1 ह्युरिस्टिक उपागम

ह्युरिस्टिक यूनानी भाषा के शब्द ह्युरिस या ह्युरिस्टिक्म से बना है जिसका अर्थ होता है "मैं अन्वेषण करता हूँ।" इस उपागम के माध्यम से अधिगम प्राप्त करने वाले शिक्षार्थियों को अन्वेषक कहा जाता है। ह्युरिस्टिक उपागम के प्रवर्तक एच0ई0 आर्मस्ट्रांग माने जाते हैं। ह्युरिस्टिक उपागम का समर्थन हरबर्ट स्पेन्सर ने भी किया था। ह्युरिस्टिक उपागम का प्रयोग सर्वप्रथम विज्ञान शिक्षण हेतु किया गया था। ह्युरिस्टिक उपागम के अंतर्गत शिक्षार्थी स्वयं खोज द्वारा सीखते हैं। शिक्षक की भूमिका केवल पथ–प्रदर्शक या मार्गदर्शक की होती है जो शिक्षार्थियों को यथोचित समय पर त्रुटि या गलतियां सुधारने हेतु मार्ग प्रशस्त करने का कार्य करते हैं। शिक्षार्थी जैसे–जैसे अन्वेषण या खोज का कार्य और प्रयोग करते रहते हैं उसी प्रकार उन्हें नवीन ज्ञान प्राप्त होता रहता है।

एच0 ई0 आर्मस्ट्रांग ने ह्युरिस्टिक उपागम के बारे में कहा है कि "शिक्षार्थियों या व्यक्तियों द्वारा किसी भी विषय के सीखने व समझने की प्रक्रिया अन्वेषण है तथा शिक्षार्थियों या व्यक्तियों को उस विषय से सम्बन्धित तथ्यों एवं सिद्धांतों की खोज स्वयं करनी होती है।" ह्यूरिस्टिक उपागम में शिक्षार्थी एक अन्वेषणकर्ता या खोजकर्ता की तरह कार्य करता है। शिक्षार्थी के पास प्रयोग से संबंधी जानकारी प्रारंभ में नहीं होती है, शिक्षार्थी को स्वयं प्रयोग या खोज से सम्बन्धित सूचनाओं, जानकारियों तथा सिद्धांतों की खोज करने के लिए अनेक प्रयास एवं प्रयोग करने पड़ते हैं। इसके साथ ही साथ अन्वेषण से सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन एवं समीक्षा करनी पड़ती है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

3. ह्युरिस्टिक यूनानी भाषा के किस शब्द से बना है?

....

....

4. ह्युरिस्टिक उपागम के प्रवर्तक कौन हैं?

....

....

ह्युरिस्टिक उपागम के सोपान

ह्युरिस्टिक उपागम के अन्तर्गत प्रमुख सोपान निम्नलिखित हैं–

- समस्या या ज्ञात किए जाने वाले प्रकरण की उत्पत्ति।
- समस्या या प्रकरण को समझना एवं विश्लेषण करना।
- समस्या या प्रकरण से सम्बन्धित सूचनाओं, साहित्य एवं आंकड़ों को एकत्रित करना।
- एकत्रित सूचनाओं, तथ्यों एवं आंकड़ों का विश्लेषण करना।
- समस्या या प्रकरण से सम्बन्धित परिकल्पनाओं का परीक्षण।
- सही परिकल्पनाओं का सत्यापन तथा निष्कर्ष प्राप्ति।

ह्युरिस्टिक उपागम की विशेषताएं

ह्युरिस्टिक उपागम की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

- ह्यूरिस्टिक उपागम से शिक्षार्थियों के अंदर वैज्ञानिक विधि एवं दृष्टिकोंण विकसित होता है।
- इस विधि के माध्यम से शिक्षार्थी सत्य के एकदम निकट पहुंचते हैं।
- इस उपागम के माध्यम से शिक्षार्थियों में निरीक्षण शक्ति का तीव्र विकास होता है साथ ही साथ शिक्षार्थियों में सक्रिय रूप से विचार प्रक्रिया का भी विकास होता है।
- इस उपागम के माध्यम से शिक्षार्थियों में परिश्रम करने के प्रति रुचि एवं क्षमता विकसित होती है।
- इस उपागम के माध्यम से प्राप्त किए गए ज्ञान या सीखे गए कौशलों द्वारा शिक्षार्थियों में क्रियाशीलता, आत्मनिर्भरता एवं आत्मविश्वास जैसे गुण विकसित होते हैं।
- यह उपागम शिक्षार्थियों को वर्तमान जीवन तथा भावी जीवन हेतु तैयार करता है।
- शिक्षार्थी केंद्रित उपागम के माध्यम से प्राप्त किया गया ज्ञान अत्यंत स्थायी प्रकृति का होता है।
- इस उपागम के माध्यम से शिक्षार्थियों के अंदर अवबोध एवं चिंतन शक्ति का विकास तीव्र गति से होता है।
- इस उपागम के माध्यम से प्राप्त होने वाला ज्ञान उस समय जिस समय यह ज्ञान प्राप्त किया जा रहा है या अन्वेषण किया जा रहा है, कक्षा कक्ष में ही पूर्ण रूप से संपन्न हो जाता है इसलिए शिक्षार्थियों को के लिए गृह कार्य की विशेष आवश्यकता नहीं होती है।

ह्युरिस्टिक उपागम की सीमाएं

ह्युरिस्टिक उपागम की सीमाएं निम्नलिखित हैं–

- ह्यूरिस्टिक उपागम के माध्यम से संचालित शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया धीमी गति से चलती है जिसके कारण निर्धारित समय में निर्धारित पाठ्यक्रम पूरा नहीं हो पता है।
- इस उपागम के माध्यम से शिक्षार्थियों को निष्कर्षों तक पहुंचने में कठिनाई महसूस होती है।

- कक्षा–कक्ष में इस उपागम के माध्यम से शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया संचालित करने हेतु शिक्षक को विशेष प्रकार की तैयारी करनी होती है।
- प्राथमिक स्तर की कक्षाओं या शिक्षार्थियों के लिए यह उपागम उपयुक्त नहीं होता है।
- ह्यूरिस्टिक उपागम के माध्यम से शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया तभी सुचारू रूप से संचालित हो सकती है जब वहां एक अच्छा पुस्तकालय व अच्छी प्रयोगशाला हो।
- इस उपागम के माध्यम से शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया संचालित करने में समय, धन व श्रम अधिक लगता है।
- जहां शिक्षार्थियों की संख्या बहुत अधिक हो वहां इस उपागम से शिक्षा प्रदान करना एक कठिन कार्य होता है।
- शैक्षिक व मानसिक रूप से कमजोर शिक्षार्थियों हेतु यह उपागम उपयोगी नहीं होता है।

ह्युरिस्टिक उपागम के सफल संचालन हेतु सुझाव

ह्युरिस्टिक उपागम के सफल संचालन हेतु सुझाव निम्नांकित हैं–

- अन्वेषण उपागम का रूप कक्षा–कक्ष में वास्तविक होना चाहिए।
- अन्वेषण उपागम पूरे पाठ्यक्रम के लिए नहीं बल्कि कुछ चयनित पाठ्यवस्तु के लिए ही अपनाना चाहिए।
- शिक्षक को अन्वेषण उपागम के अपने दायित्व एवं कर्तव्यों के प्रति सजग रहना चाहिए।
- शिक्षक एवं शिक्षार्थी दोनों को अन्वेषण उपागम के प्रयोग से पूर्व, प्रयोग हेतु पूर्ण जानकारी या प्रशिक्षण देना चाहिए।
- ह्युरिस्टिक उपागम के माध्यम से जो समस्या या विषयवस्तु शिक्षार्थियों के सम्मुख प्रस्तुत की जानी हो वह वास्तविक, उपयोगी व प्रभावी होनी चाहिए।
- इस उपागम के पूर्व निश्चित सोपानों के अनुसार ही शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया का संचालन विद्यार्थियों के बीच संपन्न करना चाहिए।
- इस उपागम के माध्यम से संचालित शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया में संलग्न शिक्षार्थियों के बीच शिक्षक द्वारा बात–बात पर हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए।

10.7.2 खोज उपागम

खोज उपागम के प्रणेता जे0 एस0 ब्रूनर माने जाते हैं। खोज या खोज के माध्यम से नए तथ्यों या नवीन ज्ञान की खोज की जाती है। इसके साथ ही साथ पुराने तथ्यों से नए तथ्यों को स्थापित किया जाता है अर्थात पुराने ज्ञान को नए ढंग से प्रस्तुत किया जाता है। खोज उपागम के अंतर्गत शिक्षक किसी प्रकरण की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को प्रस्तुत कर शिक्षार्थियों के सामने एक समस्या को रखता है। शिक्षार्थी उस समस्या से सम्बन्धित साहित्य के अध्ययन एवं तथ्यों की खोज कर नये तथ्यों, ज्ञान एवं मान्यताओं को सामने रखते हैं या प्रस्तुत करते हैं। चूँकि खोज उपागम के माध्यम से अध्ययन हेतु ऐतिहासिक तथ्यों का सहारा अधिक लिया जाता है, इसीलिए इसे ऐतिहासिक खोज उपागम भी कहा जाता है। सामान्यतः सामाजिक विज्ञान या सामाजिक विषयों के शिक्षण, अधिगम तथा शोध में खोज हेतु इस उपागम का प्रयोग सर्वाधिक किया जाता है।

इस उपागम के प्रणेता जे0 एस0 ब्रूनर ने खोज उपागम के बारे में कहा है कि "खोज उपागम के अंतर्गत शिक्षार्थियों को अपनी आयु, कक्षा, मानसिक स्तर तथा अन्य सम्बन्धित तथ्यों एवं कारकों के अनुरूप उन्हें नवीन ज्ञान की खोज मौलिक रूप से करनी पड़ती है।" इस उपागम में इस प्रकार से तथ्यों को व्याख्यायित

किया जाता है जिससे तथ्यों का बोध नए तरीके से होने लगता है। इस उपागम में शिक्षार्थी प्रथम खोजकर्ता से लेकर अंतिम खोजकर्ता या निष्कर्ष प्राप्तकर्ता तक की स्थिति में कार्य करता रहता है। इस उपागम में शिक्षार्थियों को इस प्रकार रखा जाता है या उनको रहना पड़ता है कि वे अच्छे से देख व समझ सकें कि किस प्रकार से विभिन्न तथ्यों या खोजों में समय, स्थान एवं परिस्थितियों के अनुरूप ठहराव, बदलाव या नवीनता आती है। साथ ही साथ यह भी पता चलता है कि कैसे एक सिद्धांत के पश्चात दूसरा सिद्धांत अस्तित्व में आता है या सिद्धांतों में परिवर्तन होता है। इस उपागम में शिक्षार्थी तथ्यों या ज्ञान और इन तथ्यों या ज्ञान के अनुमान के बीच के अंतर का मूल्यांकन भी करते हैं। यह उपागम महाराष्ट्र के कुछ विद्यालयों में अधिक प्रचलित है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

5. खोज उपागम के प्रवर्तक कौन हैं?

....

....

खोज उपागम की विशेषताएं

खोज उपागम की निम्नलिखित विशेषताएं हैं–

- इस उपागम में शिक्षार्थी स्वयं खोज करते हैं व सीखते हैं।
- खोज उपागम विषयवस्तु का ज्ञान प्राप्त करने या सीखने के लिए शिक्षार्थियों को स्वाध्याय, गहन अवलोकन, अंतर्दृष्टि एवं चिंतन हेतु प्रोत्साहित करता है।
- खोज उपागम रटन्त स्मृति या रटकर सीखने की आदत को छोड़कर किसी प्रकरण के गहन अध्ययन, गहन विश्लेषण एवं संश्लेषण द्वारा सीखने की आदत को बढ़ावा देता है।
- इस उपागम के माध्यम से शिक्षार्थियों में सृजनात्मक या अपसारी चिंतन का विकास होता है।
- खोज उपागम के माध्यम से शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया में शिक्षार्थी पूरी रोचकता, तत्परता एवं सक्रिय रूप से शामिल होते हैं।
- खोज उपागम के माध्यम से प्राप्त ज्ञान अपेक्षाकृत स्थायी प्रकृति का होता है।
- खोज उपागम परिपक्व तथा उच्च कक्षाओं के शिक्षार्थियों की शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया के लिए अत्यंत उपयोगी होता है।
- खोज उपागम के द्वारा शिक्षार्थी विषयवस्तु या प्रकरण में निपुणता प्राप्त करते हैं।

खोज उपागम की सीमाएं

खोज उपागम की सीमाएं निम्नलिखित हैं–

- यह उपागम सभी विषयों तथा सभी प्रकरणों के लिए उपयोगी नहीं होता है।
- इस उपागम के माध्यम से शिक्षण एवं अधिगम की गति अत्यंत धीमी होती है।
- इस उपागम के माध्यम से शिक्षण एवं अधिगम प्रक्रिया में निर्धारित समय में निर्धारित पाठ्यक्रम पूरा नहीं हो पता है।

- इस उपागम के माध्यम से शिक्षार्थियों को निष्कर्षों तक पहुंचने में कठिनाई महसूस होती है।
- कक्षा–कक्ष में इस उपागम के माध्यम से शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया संचालित करने हेतु शिक्षक को विशेष प्रकार की तैयारी करनी होती है।
- प्राथमिक स्तर की कक्षाओं या शिक्षार्थियों के लिए यह उपागम उपयुक्त नहीं होता है।
- ह्यूरिस्टिक उपागम के माध्यम से शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया तभी सुचारू रूप से संचालित हो सकती है जब वहां एक अच्छा पुस्तकालय व अच्छी प्रयोगशाला हो।
- इस उपागम के माध्यम से शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया संचालित करने में समय, धन व श्रम अधिक लगता है।
- जहां शिक्षार्थियों की संख्या बहुत अधिक हो वहां इस उपागम से शिक्षा प्रदान करना एक कठिन कार्य होता है।
- शैक्षिक व मानसिक रूप से कमजोर शिक्षार्थियों हेतु यह उपागम उपयोगी नहीं होता है।

ह्युरिस्टिक एवं खोज उपागम के बीच अन्तर– ह्युरिस्टिक एवं खोज उपागम के अध्ययन के बाद आप लोगों को इन दोनों उपागमों में काफी समानता सी प्रतीत होगी परंतु ह्युरिस्टिक एवं खोज उपागमों की प्रकृति में मूलभूत अंतर है जो निम्नलिखित है–

- ह्यूरिस्टिक उपागम का बहुतायत प्रयोग विज्ञान विषय या विज्ञान से सम्बन्धित विषयों के अध्ययन हेतु किया जाता है जबकि खोज उपागम का प्रयोग होता है सामाजिक विज्ञान विषयों या समाज से सम्बन्धित विषयों के अध्ययन हेतु किया जाता है।
- ह्युरिस्टिक उपागम का प्रयोग वर्तमान से सम्बन्धित अध्ययनों हेतु किया जाता है जबकि खोज उपागम का प्रयोग प्राचीन घटनाओं से सम्बन्धित अध्ययन हेतु किया जाता है।
- ह्युरिस्टिक उपागम में शिक्षार्थियों को वस्तुनिष्ठ रूप से प्रकरण का बोध कराया जाता है जबकि खोज उपागम में शिक्षार्थियों के लिए वस्तुनिष्ठ रूप तथ्यों की सिर्फ व्याख्या की जाती है।

10.7.3 परियोजना उपागम

प्रोजेक्ट या परियोजना उपागम को विकसित करने का श्रेय जॉन डीवी के शिष्य डब्ल्यू0 एच0 किलपैट्रिक को प्राप्त है। किलपैट्रिक ने कहा है कि "परियोजना वह उद्देश्यपूर्ण क्रिया है जो पूरी सलंग्नता एवं तत्परता के साथ सामाजिक वातावरण में सम्पन्न होता है।" इसी प्रकार स्टीवेन्सन ने परियोजना के बारे में कहा है कि "परियोजना या योजना एक समस्या परक कार्य है, जो स्वाभाविक परिस्थितियों के अंदर पूर्णता को प्राप्त करता है।" बेलार्ड ने परियोजना के बारे में कहा है कि "परियोजना पाठशाला में प्रदान किया जाने वाला यथार्थ जीवन का ही एक भाग है। पार्कर ने भी परियोजना के सम्बन्ध में लिखा है कि "परियोजना शिक्षार्थियों में कार्ययोजना एवं सम्पन्नता विकसित करने व इनके लिए उत्तरदायी बनाने हेतु कार्य की एक इकाई है।" इस उपागम में शिक्षार्थियों के सामने एक समस्या रखी जाती है तथा शिक्षार्थी अपनी रुचि इच्छा एवं योजनानुसार कार्य करते हुए हल निकालते हैं या निष्कर्ष प्राप्त करते हैं। वास्तविक रूप से योजना उपागम के अंतर्गत किसी समस्या के पूर्ण समाधान से सम्बन्धित एक कार्य–योजना शिक्षार्थियों के सामने प्रस्तुत की जाती है। शिक्षार्थी अपनी रुचि, इच्छा, ज्ञान, विवेक एवं अनुभव के अनुरूप कार्ययोजना पर कार्य करते हुए समस्या के समाधान हेतु प्रयास करते हैं तथा समाधान या निष्कर्ष प्राप्त करते हैं।

परियोजना उपागम का स्वरूप रूसो की पुस्तक 'एमील' में दिखाई देता है। फ्रेडरिक फ्रोबेल की पुस्तक 'एजुकेशन ऑफ मैन' में भी परियोजना उपागम का स्वरूप दिखाई देता है। जिसमें उन्होंने शिक्षा के लिए क्रियाओं या कार्यों को बल दिया है। इसी प्रकार विलियम कॉर्बेट की पुस्तक 'एडवाइज टू यंग मैन' में परियोजना उपागम की झलक दिखाई देती है, जिसमें उन्होंने अपने खुद के बच्चों हेतु ग्रामीण योजनाओं का वर्णन किया है। सर्वप्रथम व्यावसायिक क्षेत्र में परियोजना उपागम का प्रयोग किया गया परंतु शैक्षिक क्षेत्र में इस

उपागम को विकसित करने का श्रेय कोलम्बिया विश्वविद्यालय को जाता है। परंतु इस उपागम को एक पद्धति के रूप में विकसित करने का श्रेय विलियम किलपैट्रिक को जाता है, जिन्होंने जॉन डीवी के प्रयोजनवाद के सिद्धांत के आधार पर सन् 1918 में इसका विकास किया। परियोजना उपागम के अंतर्गत कार्य करने या अध्ययन करने हेतु शिक्षार्थियों के सामने कुछ समस्याएं रखी जाती हैं उन्हें योजनानुसार स्वतंत्रता पूर्वक समस्या का समाधान करने हेतु आंकड़ों के संग्रह एवं समस्या के समाधान से सम्बन्धित अन्य सामग्री एकत्रित करने की छूट दी जाती है। इस उपागम में शिक्षार्थियों को वही समस्याएं दी जाती हैं जो संभवतः उनके जीवन से सम्बन्धित होती हैं।

परियोजना उपागम के अंतर्गत शिक्षार्थियों को स्वयं से कार्य करने के लिए किसी समस्या या कार्य को दिया जाता है जो कि शिक्षार्थियों के अध्ययन व शैक्षिक विकास हेतु अति उपयोगी होता है। शिक्षार्थी एक योजना के अनुसार स्वतंत्रता पूर्वक कार्य करते हैं जिससे उनमें उत्तरदायित्व की भावना का विकास होता है साथ ही साथ उनके सामाजिक भावना के विकास हेतु बल दिया जाता है। इस उपागम के अंतर्गत किसी समस्या के समाधान से सम्बन्धित उद्देश्यों का निर्धारण कर, उद्देश्यों को प्राप्त करने हेतु एक कार्य योजना तैयार की जाती है। तैयार की की गई कार्ययोजना के अनुरूप शिक्षार्थी अपनी रुचि एवं क्षमता के आधार पर कार्य को पूरा करते हैं व निष्कर्ष प्राप्त करते हैं तत्पश्चात शिक्षार्थियों द्वारा किए गए कार्यों एवं निष्कर्षों की सामाजिक उपयोगिता का मूल्यांकन किया जाता है। वर्तमान समय में परियोजना उपागम का उपयोग सिर्फ शैक्षिक क्षेत्र तक ही सीमित नहीं है बल्कि शैक्षिक के साथ ही साथ व्यावसायिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, तकनीकी एवं प्रबन्धन आदि क्षेत्रों में भी हो रहा है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

6. प्रोजेक्ट या परियोजना उपागम को विकसित करने का श्रेय किनको प्राप्त है?

....

....

7. प्रोजेक्ट या परियोजना उपागम का विकास कब हुआ?

....

....

परियोजना उपागम के सिद्धांत

परियोजना उपागम के सिद्धांत निम्नवत हैं–

- उद्देश्य पूर्णता का सिद्धांत
- कार्यशीलता का सिद्धांत
- वास्तविकता का सिद्धांत
- उपयोगिता का सिद्धांत
- स्वतंत्रता का सिद्धांत
- सामाजिक विकास का सिद्धांत
- रोचकता का सिद्धांत
- समन्वयता का सिद्धांत

- मितव्ययता का सिद्धांत
- अनुभव आधारित प्रयोग का सिद्धांत

परियोजना उपागम के प्रकार

डब्ल्यू0 एच0 किलपैट्रिक ने परियोजना को चार प्रकारों में वर्गीकृत किया है–

- कलात्मक परियोजना
- समस्यात्मक परियोजना
- रचनात्मक परियोजना
- अभ्यास आधारित परियोजना

कुछ विद्वानों ने प्रयोजना को दो प्रकारों में वर्गीकृत किया है–

- व्यक्तिगत परियोजना
- सामूहिक परियोजना

परियोजना उपागम के सोपान

परियोजना उपागम के अंतर्गत किसी समस्या के प्रारंभ से लेकर उसके समाधान या निष्कर्ष प्राप्ति तक की योजना बनाने एवं संचालित करने हेतु निम्नलिखित पदों को ध्यान में रखा जाता है–

(i) समस्या से सम्बन्धित परिस्थिति का निर्माण– इस उपागम के अंतर्गत सर्वप्रथम समस्या से सम्बन्धित परिस्थितियों का उदय होता है। जिसमें शिक्षार्थियों पर कोई समस्या या कार्य शिक्षक की तरफ से जबरदस्ती थोपा नहीं जाता अपितु शिक्षक शिक्षार्थी से परस्पर बातचीत कर ऐसी परिस्थिति का निर्माण करते हैं। अतः शिक्षार्थियों में किसी समस्या या किसी विशेष कार्य के प्रति स्वतः रुचि जागृत हो जाती है तथा शिक्षार्थी उस समस्या या कार्य के समाधान या निष्कर्ष प्राप्ति हेतु तत्पर हो जाते हैं।

(ii) परियोजना का चयन करना एवं उद्देश्यों का निर्धारण– शिक्षार्थियों के सम्मुख समस्या से सम्बन्धित जो विभिन्न परिस्थितियां उत्पन्न हुई हैं या शिक्षार्थियों ने जिन विभिन्न परिस्थितियों का अध्ययन किया है, उनमें से किसी एक मान्य एवं सर्वोत्तम समस्या का चयन परियोजना के रूप में किया जाता है। परियोजना का चयन शिक्षार्थियों द्वारा स्वयं किया जाना चाहिए। चयनित परियोजना को किसी न किसी उद्देश्य एवं आवश्यकताओं की पूर्ति अवश्य करनी चाहिए अर्थात चयनित परियोजना के उद्देश्यों का निर्धारण अवश्य करना चाहिए जिससे शिक्षार्थियों की विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति संभव हो सके।

(iii) परियोजना को पूर्ण करने हेतु कार्यक्रम या योजना बनाना– जब परियोजना का चयन हो जाता है उसके बाद अगला चरण समस्या के समाधान हेतु योजना बनाना होता है। अर्थात परियोजना का विषय निश्चित हो जाने के पश्चात् शिक्षार्थी परियोजना को पूरा करने हेतु अपनी–अपनी योजना या कार्यक्रम शिक्षकों के सम्मुख प्रस्तुत करते हैं। प्रस्तुत योजना या कार्यक्रम पर विचार–विमर्श करते हुए अंततः सर्वमान्य योजना या कार्यक्रम को स्वीकार किया जाता है। स्वीकृत योजनानुसार सभी शिक्षार्थियों को उनकी योग्यता एवं रुचि अनुसार कार्यों एवं उत्तरदायित्वों का आवंटन भी कर दिया जाता है।

(iv) कार्यक्रम का क्रियान्वयन या परियोजना को व्यावहारिक रूप देना– कार्यक्रम की रूपरेखा या योजना बनाने के बाद कार्य का व्यावहारिक रूप में क्रियान्वयन किया जाता है। जिन शिक्षार्थियों को जो कार्य या उत्तरदायित्व सौंपे गए हैं वह अपना कार्य करना प्रारंभ कर देते हैं, जिसके अंतर्गत उन्हें अपने कार्यों एवं उत्तरदायित्व की पूर्ति हेतु विभिन्न प्रकार के ज्ञान का अर्जन करना होता है। शिक्षक शिक्षार्थियों द्वारा किए जा रहे हैं कार्यों एवं अध्ययनों का निरीक्षण करता है, उनको प्रोत्साहित करता है तथा जहां अवरोध या समस्याएं आती हैं उनके समाधान हेतु सुझाव प्रदान करता है या पथ प्रदर्शक की भूमिका निभाता है। अंततः सभी शिक्षार्थी अपने कार्यों एवं उत्तरदायित्वों को योजना अनुसार पूर्ण करते हुए या आवश्यकतानुसार संशोधन करते हुए

निष्कर्ष प्राप्ति या समस्या का समाधान तक पहुंचते हैं।

(v) परियोजना का मूल्यांकन– एक परियोजना जब पूर्ण हो जाती है तब शिक्षक एवं शिक्षार्थी मिलकर उसका मूल्यांकन करते हैं। इसके अंतर्गत शिक्षार्थी यह पता लगाते हैं कि पूर्व निश्चित लक्ष्यों एवं उद्देश्यों की पूर्ति हुई है या नहीं, हुई है तो कहां तक हुई है? या कितनी सफलता प्राप्त हुई है? इस परियोजना कार्य में क्या–क्या कमियां रह गई हैं? फिर इन कमियों को जानकर उन कमियों से शिक्षा ग्रहण करते हैं ताकि उन कमियों को दूर कर सकें। इन्हीं सभी बातों का मूल्यांकन परियोजना में किया जाता है। इससे शिक्षार्थी अपने ही द्वारा किए गए कार्यों का मूल्यांकन करना या समालोचना करना भी सीख जाते हैं। अंतत शिक्षार्थी यह समझ पाते हैं कि उन्होंने परियोजना से क्या सीखा।

(vi) परियोजना का अभिलेखन– इससे परियोजना कार्य से सम्बन्धित क्रियाओं का पूरा रिकॉर्ड लिख कर रख लिया जाता है। परियोजना कार्य के अभिलेखन के अंतर्गत परियोजना के विभिन्न चरणों में की गई प्रक्रियाओं, आई सूक्ष्मताओं का स्पष्ट एवं विस्तृत लेखा–जोखा तैयार किया जाता है। परियोजना कार्य के अभिलेखन से भविष्य में यदि कोई परियोजना कार्य किया जाता है तो उसे करने में सहायता मिलती है।

परियोजना उपागम को विशेषताएं

परियोजना उपागम की निम्नलिखित विशेषताएं हैं–

- यह उपागम बाल केंद्रित दृष्टिकोंण पर आधारित होता है।
- इस उपागम में मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोंण समाहित होता है।
- परियोजना उपागम में प्रयोगात्मक एवं व्यवहारिक कौशल का प्रयोग होता है।
- इस उपागम में शिक्षार्थियों की योग्यता, क्षमता, रुचि एवं आवश्यकता आदि का ध्यान रखा जाता है।
- इस उपागम के माध्यम से शिक्षार्थियों में स्वयं करके सीखने तथा स्वाध्याय की आदत का विकास होता है।
- इस उपागम द्वारा प्राप्त ज्ञान स्पष्ट एवं स्थायी प्रकृति का होता है।
- इस उपागम द्वारा शिक्षार्थियों में खोज प्रवृत्ति का विकास होता है, जिससे उनमें शोधपरक दृष्टिकोंण विकसित होता है।
- इस उपागम के द्वारा शिक्षार्थी सक्रिय रूप से, समयबद्ध होकर एवं परिश्रम के साथ ज्ञान प्राप्त करते हैं।
- परियोजना उपागम के माध्यम से सभी शिक्षार्थियों को अभिव्यक्ति का अवसर प्राप्त होता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

8. प्रोजेक्ट या परियोजना उपागम एक ....केन्द्रित दृष्टिकोंण है।

परियोजना उपागम की सीमाएं

परियोजना उपागम की सीमाएं निम्नलिखित हैं–

- परियोजना उपागम में अधिक श्रम एवं व्यय लगता है।

- परियोजना उपागम की सफलता संस्थान में अच्छे पुस्तकालय, प्रयोगशाला तथा अन्य भौतिक संसाधनों पर निर्भर करती है लेकिन भारत के प्रत्येक संस्थानों में ऐसी उत्तम सुविधा कम ही है।
- परियोजना उपागम के माध्यम से निर्धारित शैक्षिक सत्र में पूरे पाठ्यक्रम को पूरा करना संभव नहीं है क्योंकि इस उपागम के माध्यम से पढ़ाने में समय अधिक लगता है। अतः इस उपागम के माध्यम से पूरे पाठ्यक्रम को नहीं पढ़ाया जा सकता।
- परियोजना उपागम के माध्यम से औसत से कम बुद्धि–लब्धि वाले, कमजोर तथा पिछड़े शिक्षार्थियों को नहीं पढ़ाया जा सकता है।
- परियोजना उपागम के माध्यम से शिक्षार्थियों के विकास के सभी पक्षों का ध्यान नहीं दिया जा सकता है।
- पूरी तरह से परियोजना उपागम को नहीं लागू किया जा सकता है क्योंकि इसके लिए अनुभवी, प्रशिक्षित एवं योग्य शिक्षकों की आवश्यकता होती है।
- परियोजना उपागम में प्राप्त किए गए ज्ञान की पुनरावृत्ति या अभ्यास के लिए अवसर उपलब्ध नहीं होते हैं।
- परियोजना उपागम के माध्यम से सभी विषयों का अध्ययन भी उपयोगी नहीं होता है।

परियोजना उपागम के प्रयोग हेतु सुझाव

परियोजना उपागम के प्रयोग हेतु निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किए जा रहे हैं–

- परियोजना उपागम की सफलता के लिए शिक्षकों को इस उपागम हेतु प्रशिक्षित किया जाना चाहिए, जिससे परियोजना उपागम के उद्देश्यों को पूरा किया जा सके।
- परियोजना उपागम को कक्षा में शिक्षार्थियों का समूह बनाकर सामूहिक रूप से परियोजना का क्रियान्वयन करना चाहिए। इससे सभी शिक्षार्थियों को उनकी योग्यता एवं रुचि के अनुसार कार्य मिलेंगे।
- परियोजना उपागम में शिक्षार्थियों को विचारों, अनुभवों व ज्ञान को आपस में साझा करने के पर्याप्त अवसर देने चाहिए।
- परियोजना के क्रियान्वयन के समय शिक्षकों को अत्यंत सजग एवं क्रियाशील रहना चाहिए जिससे शिक्षार्थी मार्ग से विचलित न हो पायें।
- परियोजना उपागम में शिक्षार्थियों को समय–समय पर प्रोत्साहित करते रहना चाहिए।

10.7.4 समस्या समाधन उपागम

प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में समय–समय पर अनेक प्रकार की अनेक समस्याएं आती रहती हैं। इन समस्याओं के कारण व्यक्तियों में द्वंद, संघर्ष, तनाव, कुंठा, निराशा एवं असफलता जैसी प्रवृत्तियां जन्म लेती हैं, जिसके कारण व्यक्ति जीवन की समस्याओं से विमुख होने एवं समस्याओं का समाधान करने का प्रयास करता है। शिक्षार्थियों के सम्मुख भी विभिन्न प्रकार की समस्याएं आती हैं। ऐसी समस्याओं का सामना व समाधान करने में शिक्षार्थियों को सक्षम बनाने हेतु एक अच्छा शिक्षक प्रारंभ से ही अपने शिक्षण कार्य में समस्या समाधान उपागम का प्रयोग करता है। समस्या समाधान उपागम के माध्यम से शिक्षण कार्य कर वह शिक्षार्थियों में सोच–विचार, तर्क तथा निर्णय क्षमता आदि का विकास कर शिक्षार्थियों के अंदर किसी भी समस्या का सामना करने व समस्या समाधान करने की योग्यता विकसित करता है।

समस्या समाधान एक प्रकार का जटिल व्यवहार व जटिल प्रक्रिया है जिसमें कई प्रकार की मनोवैज्ञानिक क्रियाएं व प्रक्रियाएं शामिल होती हैं। समस्यात्मक स्थिति उस परिस्थिति को कहा जाता है जिसमें कोई व्यक्ति या शिक्षार्थी किसी लक्ष्य तक पहुंचने का प्रयत्न करता है परंतु वह लक्ष्य तक पहुंचने में शुरुआत में असफल होता है। जिसके कारण व्यक्ति या शिक्षार्थी को दो या उससे अधिक बार अनुक्रियाएं करनी पड़ती हैं

तथा इन अनुक्रियाओं से उन्हें प्रभावशाली उद्दीपक संकेत मिलते हैं। शिक्षार्थियों के सामने इस प्रकार की समस्यापरक परिस्थितियों को उत्पन्न किया जाता है जिससे शिक्षार्थी चिंतन, निरीक्षण एवं तर्क के द्वारा स्वयं समस्या का समाधान निकाल सके। सुकरात के संवादों में भी समस्या समाधान उपागम की झलकियां दिखाई पड़ती हैं। समस्या समाधान उपागम के लिए चिंतन स्तर का शिक्षण–अधिगम कार्य होना आवश्यक होता है, जो मौलिक चिंतन व सार्थक ज्ञान को दर्शाता है।

कुछ विद्वानों ने समस्या समाधान को निम्नलिखित प्रकार से परिभाषित करने का प्रयास किया है–

"किसी समस्या या कठिनाई का एक संतोष पूर्ण हल या समाधान प्राप्त करने के उद्देश्य से किया जाने वाला नियोजित कार्य ही समस्या समाधान है। समस्या समाधान में तथ्यों का मात्र संग्रह करना या सिर्फ किसी के विचारों की तर्क रहित स्वीकृति शामिल नहीं होती है, बल्कि यह एक विचारशील चिंतन की एक संपूर्ण प्रक्रिया होती है।" **– थॉमस एम0 रिस्क**

"दो या इससे अधिक सीखे गए नियमों, विचारों या प्रत्ययों को एक उच्च स्तरीय नियम, विचार या प्रत्यय के रूप में विकसित करना समस्या समाधान अधिगम है।"

– रॉबर्ट गैने

अतः हम कह सकते हैं की समस्या समाधान उपागम इस प्रकार का शैक्षिक क्रियाकलाप है जिसके माध्यम से शिक्षक एवं शिक्षार्थी किसी शैक्षिक समस्या या कठिनाई के निवारण के लिए प्रयास करते हैं तथा सीखने के लिए शिक्षार्थी स्वयं प्रेरित होते हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

9. समस्या समाधान उपागम एक ....केन्द्रित दृष्टिकोंण है।

समस्या समाधन उपागम के सोपान

बॉक्सिग महोदय ने समस्या समाधान उपागम के निम्नलिखित सोपान बताएं हैं–

1. कठिनाई की स्वीकृति
2. कठिनाई का समस्या के रूप में परिभाषीकरण या स्पष्टीकरण
3. समस्या समाधान हेतु कार्य करना–
   (i) तथ्यों को का इकट्ठा करना
   (ii) तथ्यों को व्यवस्थित करना
   (iii) तथ्यों का विश्लेषण करना
4. निष्कर्ष प्राप्ति
5. निष्कर्षों का प्रयोग

समस्या समाधन उपागम को विशेषताएं

समस्या समाधन उपागम की निम्नलिखित विशेषताएं हैं–

- समस्या समाधान उपागम शिक्षार्थियों को विभिन्न कठिनाइयों के समाधान हेतु प्रशिक्षण प्राप्त करने का अवसर देता है।

- समस्या समाधान उपागम में शिक्षार्थी क्रियाशील होता है साथ ही साथ स्वयं से सीखने का प्रयास करता है।
- मानसिक कुशलताओं, योग्यताओं तथा अभिधारणाओं के विकास में समस्या समाधान उपागम सहायक होता है।
- समस्या समाधान उपागम के माध्यम से शिक्षार्थियों में शैक्षिक आकांक्षा बढ़ती है।
- समस्या समाधान उपागम के माध्यम से प्राप्त ज्ञान स्थाई प्रकृति का होता है।
- शिक्षार्थियों को आत्मनिर्णय अर्थात स्वयं निर्णय लेने में समस्या समाधान उपागम कुशल बनाता है।
- समस्या समाधान उपागम में शिक्षार्थी रटने के स्थान पर प्रखर बुद्धि का प्रयोग करता है।
- शिक्षार्थियों के मौलिक चिंतन के विकास में समस्या समाधान उपागम महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
- शिक्षार्थियों में सहयोग, सहिष्णुता एवं उदारता जैसे गुणों का विकास भी समस्या समाधान उपागम के माध्यम से होता है।
- समस्या समाधान के बाद शिक्षार्थियों को आत्मसंतुष्टि प्राप्त होती है।

समस्या समाधन उपागम को सीमाएं

समस्या समाधन उपागम की सीमाएं निम्नलिखित हैं–

- सभी विषयों की सम्पूर्ण पाठ्यवस्तु के अध्ययन–अध्यापन का कार्य समस्या समाधान उपागम से कर पाना मुश्किल है।
- इसमें शिक्षार्थियों की ज्ञान प्राप्त करने व सीखने की गति बहुत धीमी होती है जिससे अध्ययन–अध्यापन कार्य में समय अधिक लगता है।
- इस उपागम के माध्यम से निर्धारित शैक्षिक सत्र में निर्धारित पाठ्यक्रम के अध्ययन–अध्यापन के कार्य को पूरा नहीं किया जा सकता है।
- समस्या समाधान उपागम के आधिकाधिक प्रयोग से अध्ययन कार्य में नीरस्ता आने लगती है।
- इस उपागम के माध्यम से केवल उच्च स्तर के विद्यार्थियों को ही पढ़ाया जा सकता है, छोटी कक्षाओं के विद्यार्थियों को नहीं।
- किसी भी समस्या का अनुभव कर उसे परिभाषित करना आसान कार्य नहीं होता है।
- समस्या समाधान उपागम का प्रयोग केवल प्रखर बुद्धि के शिक्षार्थियों तक ही सीमित है क्योंकि इसके माध्यम से कमजोर शिक्षार्थियों को ज्ञान प्राप्त करने में कठिनाई होती है।
- समाधान उपागम का प्रयोग केवल उच्च आकांक्षी शिक्षार्थियों के लिए ही किया जा सकता है।
- प्राप्त किए गए ज्ञान की पुनरावृत्ति या अभ्यास करना समस्या समाधान उपागम में कठिनाई भरा कार्य है।
- समस्या समाधान के माध्यम से अध्ययन किए जा रहे पाठ्यक्रम में तारतम्यता नहीं बन पाती है।

10.8 सारांश

शिक्षार्थियों एवं समाज के लोगों को ज्ञान प्रदान करने के उद्देश्य से समाज में विद्यालयों की स्थापना की जाती है जिनमें शिक्षण कार्य विभिन्न उपागम या दृष्टिकोंण के माध्यम से सम्पन्न होता है। इस इकाई में

सीखने व सिखाने के शिक्षार्थी केन्द्रित उपागमों को बताने का प्रयास किया गया है। सीखने व सिखाने के विभिन्न शिक्षार्थी केन्द्रित उपागमों के अन्तर्गत ह्युरिस्टिक उपागम, खोज उपागम, परियोजना उपागम, समस्या समाधान उपागम एवं भूमिका निर्वाह उपागम के सम्प्रत्यय, विशेषताओं तथा सीमाओं आदि को बताया गया है। ह्युरिस्टिक उपागम के अंतर्गत शिक्षार्थी स्वयं खोज द्वारा सीखते हैं। शिक्षक की भूमिका केवल पथ–प्रदर्शक या मार्गदर्शक की होती है जो शिक्षार्थियों को यथोचित समय पर त्रुटि या गलतियां सुधारने हेतु मार्ग प्रशस्त करने का कार्य करते हैं।

खोज उपागम के अंतर्गत शिक्षक किसी प्रकरण की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को प्रस्तुत कर शिक्षार्थियों के सामने एक समस्या को रखता है। शिक्षार्थी उस समस्या से सम्बन्धित साहित्य के अध्ययन एवं तथ्यों की खोज कर नये तथ्यों, ज्ञान एवं मान्यताओं को प्रस्तुत करते हैं। परियोजना उपागम के अंतर्गत किसी समस्या के पूर्ण समाधान से सम्बन्धित एक कार्य–योजना शिक्षार्थियों के सामने प्रस्तुत की जाती है। शिक्षार्थी अपनी रुचि, इच्छा, ज्ञान, विवेक एवं अनुभव के अनुरूप कार्ययोजना पर कार्य करते हुए समस्या के समाधान हेतु प्रयास करते हैं तथा समाधान प्राप्त करते हैं। समस्या समाधान उपागम इस प्रकार का शैक्षिक क्रियाकलाप है जिसके माध्यम से शिक्षक एवं शिक्षार्थी किसी शैक्षिक समस्या या कठिनाई के निवारण के लिए प्रयास करते हैं तथा सीखने या समस्या के समाधान हेतु शिक्षार्थी स्वयं प्रेरित होते हैं।

10.9 अभ्यास के प्रश्न

1. शिक्षार्थी केन्द्रित उपागम से आप क्या समझते हैं?
2. शिक्षार्थी केन्द्रित उपागम के सामान्य सिद्धान्त कौन–कौन से हैं? वर्णन कीजिए।
3. ह्युरिस्टिक उपागम एवं खोज उपागम के बीच मूलभूत अन्तर को स्पष्ट कीजिए।
4. परियोजना उपागम के विभिन्न सोपानों की व्याख्या कीजिए।

10.10 चर्चा के बिन्दु

1. शिक्षर्थी केन्द्रित उपागम की क्या उपयोगिता है? चर्चा कीजिए।
2. समस्या समाधान उपागम की विशेषताएं एवं सीमाएं क्या हैं? चर्चा कीजिए।

10.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. देखने का एक नजरिया या दृष्टिकोंण
2. शिक्षार्थी
3. ह्युरिस या ह्युरिस्टिक्म
4. एच0 ई0 आर्मस्ट्रांग
5. जे0 एस0 ब्रूनर
6. जॉन डीवी के शिष्य डब्ल्यू0 एच0 किलपैट्रिक
7. 1918
8. छात्र या शिक्षार्थी
9. छात्र या शिक्षार्थी

10.12 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. कुलश्रेष्ठ, एस0पी0 (1982), *शैक्षिक तकनीकी के मूल आधार,* मेरठ : आर0 लाल बुक डिपो।
2. मित्तल, एस0 (2016), *शैक्षिक तकनीकी एवं कक्षा–कक्ष प्रबन्ध,* जयपुर : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।

3. अग्रवाल, जे0सी0 (2008), *शैक्षिक तकनीकी, प्रबन्ध एवं मूल्यांकन,* आगरा : अग्रवाल पब्लिकेशन्स।
4. मालवीय, आर0 (2013), *शैक्षिक तकनीकी एवं प्रबन्धन,* इलाहाबाद : शारदा पुस्तक भवन।
5. फिन, जे0डी0 (1972), द इमर्जिंग टेक्नॉलाजी ऑफ एजूकेशन फ्राम एक्सटेन्डिंग एजूकेशन थ्रू टेक्नॉलाजी, वाशिंगटन : ए0एफ0सी0टी0।

इकाई– 11 : शिक्षक केन्द्रित रणनीतियां

इकाई की संरचना

11.1 प्रस्तावना

11.2 इकाई के उद्देश्य

11.3 शिक्षण रणनीति

11.4 शिक्षण रणनीति, शिक्षण विधि एवं शिक्षण युक्ति

11.5 शिक्षण रणनीतियों एवं शिक्षण विधियों में अन्तर

11.6 शिक्षण रणनीतियों की विशेषताएं

11.7 शिक्षक केन्द्रित शिक्षण रणनीतियां

11.8 शिक्षक केन्द्रित शिक्षण रणनीतियों की विशेषताएं

11.9 शिक्षक केन्द्रित शिक्षण रणनीतियों की सीमाएं

11.10 विभिन्न शिक्षक केन्द्रित शिक्षण रणनीतियां

  11.10.1 व्याख्यान रणनीति

  11.10.2 प्रदर्शन रणनीति

  11.10.3 व्याख्यान–सह–प्रदर्शन रणनीति

  11.10.4 ट्युटोरियल रणनीति

11.11 सारांश

11.12 अभ्यास के प्रश्न

11.13 चर्चा के बिन्दु

11.14 बोध प्रश्नों के उत्तर

11.15 कुछ उपयोगी पुस्तकें

11.1 प्रस्तावना

वर्तमान समय के भागदौड़ भरे जीवन में शिक्षार्थियों को शिक्षित करने का प्रमुख उत्तरदायित्व विद्यालयों का है। समाज में स्थापित इन शिक्षण संस्थानों में शिक्षक, शिक्षार्थी पाठ्यक्रम, शैक्षिक संसाधन एवं विद्यालयी वातावरण आदि शिक्षा प्रक्रिया को सुचारू रूप से सम्पन्न करने के प्रमुख घटक हैं। विद्यालयों में शिक्षक शिक्षण कार्य करते हैं व शिक्षार्थी अध्ययन कार्य करते हैं जिससे शिक्षार्थियों में विभिन्न कौशलों व ज्ञान का विकास होता है। शिक्षण का मुख्य उद्देश्य शिक्षार्थियों को सीखने की अवधारणाओं को समझाना एवं उन्हें वास्तविक जीवन के लिए तैयार करना है। सम्पूर्ण विश्व में शिक्षक अपने शिक्षार्थियों को पढ़ाने के लिए कई तरीकों या नीतियों का इस्तेमाल करते रहे हैं। इन तरीकों या नीतियों में से कुछ शिक्षार्थी केन्द्रित नीतियां होती हैं, कुछ शिक्षक केन्द्रित। इकाई–10 में हम शिक्षार्थी केन्द्रित उपागमों का अध्ययन कर चुके हैं। इस इकाई में हमलोग शिक्षण की शिक्षक केन्द्रित नीतियों का अध्ययन करेंगे। शिक्षक केन्द्रित नीतियों के अन्तर्गत व्याख्यान नीति, प्रदर्शन नीति, लेक्चर कम डेमॉन्सट्रेशन नीति एवं ट्यूटोयिल नीति आदि लोकप्रिय और आम तौर पर इस्तेमाल की जाने वाली नीतियां है।

11.2 इकाई के उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि–

1. शिक्षण नीतियों के सम्प्रत्यय को समझकर अभिव्यक्त कर सकेंगे।

2. शिक्षक केन्द्रित नीतियों को समझकर उनकी विशेषताओं व कमियों का मूल्यांकन कर सकेंगे।
3. शिक्षण नीति, शिक्षण विधि एवं शिक्षण युक्ति के बीच अन्तर को स्पष्ट कर सकेंगे।
4. व्याख्यान नीति की विशेषताओं एवं सीमाओं को जानकर शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया को प्रभावी बना सकेंगे।
5. प्रदर्शन नीति को समझकर अपने शिक्षण कार्य में प्रयोग कर सकेंगे।
6. व्याख्यान–सह–प्रदर्शन नीति को समझकर अपने शिक्षण कार्य में अपना सकेंगे।
7. ट्युटोरियल नीति की विशेषताओं व सीमाओं की समीक्षा कर सकेंगे।

11.3 शिक्षण रणनीति

शिक्षण नीति दो शब्दों से मिलकर संयुक्त रूप से बनी है– शिक्षण+नीति। शिक्षण वांछित उद्देश्यों को प्राप्त करने हेतु एक ऐसी अंतर्क्रियात्मक प्रक्रिया है जो कक्षागत परिस्थितियों में शिक्षक एवं शिक्षार्थियों के मध्य सम्पन्न होती है। शिक्षण कार्य के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु बनाई गई या नियोजित पूर्व योजना को ही शिक्षण नीति कहते हैं। शिक्षण नीति को **शिक्षण व्यूहरचना** भी कहा जाता है। युद्धकला से व्यूहरचना की उत्पत्ति हुई है। युद्ध में सेना द्वारा जिस प्रकार से विरोधी सेना को परास्त करने हेतु युद्ध से पूर्व ही यह चक्रव्यूह बनाया जाता है कि युद्ध में विजय प्राप्त करने हेतु क्या–क्या कदम उठाना है, उसी प्रकार जिस उद्देश्य से शिक्षण कार्य किया जा रहा है उसके उद्देश्यों की पूर्ति के लिए एक शिक्षक शिक्षण कार्य आरम्भ करने से पूर्व ही संसाधनों की उपलब्धता को ध्यान में रखकर एक कार्ययोजना बनाता है, इसे ही शिक्षण नीति या शिक्षण व्यूहरचना कहते हैं। शिक्षण नीति के बारे में हम यह भी कह सकते हैं कि शिक्षण नीति कक्षागत परिस्थितियों में इस प्रकार की कौशलपूर्ण व्यवस्था है जिसमें शिक्षक शिक्षण कार्य के उद्देश्यों की पूर्ति हेतु शिक्षार्थियों में व्यवहार परिवर्तन या वांछित व्यवहार लाने का प्रयास करता है।

शिक्षण नीति को विभिन्न विद्वानों ने निम्नलिखित प्रकार से परिभाषित किया है–

"ऐसी योजनाएं जिनमें शिक्षण के उद्देश्यों, पाठ्वस्तु, अधिगम अनुभव, शिक्षार्थियों की पृष्ठभूमि, कार्य विश्लेषण तथा शिक्षार्थियों के व्यवहार परिवर्तन आदि को विशिष्ट महत्व दिया जाता है, शिक्षण व्यूहरचना कहलाती है।" – **स्ट्रेसर**

"पाठ या विषयवस्तु की एक सामान्यीकृत योजना ही शिक्षण नीति है, जिसमें अनुदेशन के उद्देश्यों के रूप में वांछित व्यवहार परिवर्तन की संरचना शामिल होती है तथा इसमें शिक्षण युक्तियां तथा विधियां भी तैयार करते हैं।" – **स्टोन्स तथा मॉरिस**

एक शिक्षक शिक्षण कार्य शुरू करने के पूर्व ही कक्षा में पाठ्यवस्तु के प्रस्तुतीकरण के लिए उपयुक्त शिक्षण नीतियों को चयनित कर लेता है। शिक्षण नीति में अनेक क्रियाकलाप या कारक शामिल होते हैं जो संयुक्त रूप से शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाते हैं। शिक्षण नीति के अंतर्गत शिक्षण की युक्तियां एवं शिक्षण विधियां आदि शामिल होती हैं।

11.4 शिक्षण रणनीति, शिक्षण विधि एवं शिक्षण युक्ति

शिक्षण रणनीति या शिक्षण व्यूहरचना एक वृहद अवधारणा है। शिक्षण विधियां एवं शिक्षण युक्तियां शिक्षण नीति के अंतर्गत शामिल होती हैं। शिक्षण विधि में इस बात का ध्यान रखा जाता है कि पाठ्यवस्तु को किस प्रकार से प्रस्तुत किया जाये जिससे शिक्षार्थी पाठ्यवस्तु को सरलता से सीख व समझ सकें। वहीं शिक्षण नीति के अंतर्गत शिक्षण के उद्देश्यों, शिक्षार्थियों के व्यवहार, आवश्यकताओं, रुचियों, क्षमताओं एवं मानसिक स्तर आदि सभी पक्षों को ध्यान में रखकर पाठ्यवस्तु का प्रस्तुतीकरण किया जाता है। आई०के० डेवीज ने भी कहा है कि शिक्षण नीतियां शिक्षण विधियों से अधिक व्यापक होती हैं।

शिक्षण युक्तियों का अर्थ शिक्षक के उन सभी क्रियाकलापों से लगाया जाता है जिसे शिक्षक शिक्षण विधियों के क्रियान्वयन व शिक्षण नीतियों के समुचित विकास हेतु करता है। शिक्षण युक्तियों का प्रयोग एक शिक्षक अपने शिक्षण कार्य को रुचिकर व प्रभावशाली बनाने तथा विषयवस्तु को स्पष्ट करने हेतु करता है। शिक्षण युक्तियां शाब्दिक एवं अशाब्दिक दोनों रूपों में हो सकती हैं। जैसे– वांछित अनुक्रिया हेतु उद्दीपन को प्रस्तुत

करना, सरलता से सीखने–सिखाने के क्रम में अनुक्रियाओं को रखना, सीखी गई अनुक्रियाओं या व्यवहार का अभ्यास करवाना, सही या वांछित अनुक्रियाओं का पुनर्बलन आदि। शिक्षण नीतियों में शिक्षण विधियों का सहारा लिया जाता है तथा शिक्षण विधियों में शिक्षण युक्तियों का सहारा लिया जाता है। अतः यदि हम शिक्षण नीतियों की बात करते हैं तो एक शिक्षण नीति के अंतर्गत ही शिक्षण विधियां एवं शिक्षण युक्तियां आती हैं और एक शिक्षण विधि के अंदर कई शिक्षण युक्तियां शामिल हो सकती हैं। शिक्षण नीतियों तथा शिक्षण विधियों के अपने–अपने विशिष्ट अर्थ हैं परन्तु बहुत से लोग भ्रमवश इन्हें एक ही समझ लेते हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. शिक्षण नीति को और किस नाम से जाना जाता है?

   ....

   ....

2. शिक्षण नीति के अंतर्गत .... सम्मिलित होती हैं।

11.5 शिक्षण रणनीतियों एवं शिक्षण विधियों में अन्तर

शिक्षण नीतियों एवं शिक्षण विधियों में निम्नलिखित आधार पर अन्तर है–

- शिक्षण नीतियों के अंतर्गत हम शिक्षण उद्‌देश्यों को महत्व देते हैं जबकि शिक्षण विधि के अंतर्गत पाठ्‌यवस्तु के प्रस्तुतीकरण को महत्व देते हैं।
- उद्‌देश्यों के आधार पर हम शिक्षण नीतियों का चयन करते हैं जबकि पाठ्‌यवस्तु की प्रकृति के आधार पर हम शिक्षण विधियों का चयन करते हैं।
- शिक्षण नीति के अंतर्गत शिक्षण के उद्‌देश्यों, शिक्षार्थियों के व्यवहारों तथा उनके सम्बन्धों का विशेष ध्यान देते हैं जबकि शिक्षण विधियों के अन्तर्गत पाठ्‌यवस्तु, पाठ्‌यवस्तु के प्रस्तुतीकरण तथा शिक्षण कार्यों पर विशेष ध्यान देते हैं।
- शिक्षण नीतियां शिक्षण को विज्ञान मानती हैं जबकि शिक्षण को शिक्षण विधियों में कला माना जाता है।
- शिक्षण नीतियां सीखने हेतु उपयुक्त परिस्थितियों का सृजन करती हैं। जबकि शिक्षण विधियां सीखने एवं सिखाने के लिए पाठ्‌यवस्तु का प्रभावशाली तरीके से प्रस्तुतीकरण करती हैं।
- शिक्षण नीतियों की सफलता का मूल्यांकन शिक्षण उद्‌देश्यों की प्राप्ति के आधार पर किया जाता है जबकि शिक्षण विधियों की सफलता का मूल्यांकन इस बात पर किया जाता है कि शिक्षार्थियों ने पाठ्‌यवस्तु पर अधिकार (Mastery) प्राप्त किया है या नहीं।
- सूक्ष्म उपागम या माइक्रो टीचिंग का अनुसरण शिक्षण नीतियों में किया जाता है जबकि शिक्षण विधियों में स्थूल उपागम या मैक्रो टीचिंग का अनुसरण किया जाता है।
- शिक्षण नीति आधुनिक मानव व्यवस्था सिद्धांत की देन है जबकि शिक्षण विधियां परम्परागत मानव व्यवस्था सिद्धांत की देन है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

3. शिक्षण नीतियों के अंतर्गत हम शिक्षण उद्देश्यों को महत्व देते हैं जबकि शिक्षण विधि के अंतर्गत ....के प्रस्तुतीकरण को महत्व देते हैं।

4. शिक्षण नीतियां शिक्षण को विज्ञान मानती हैं जबकि शिक्षण विधियां शिक्षण को.. .... मानती हैं।

11.6 शिक्षण रणनीतियों की विशेषताएं

शिक्षण नीतियों की निम्नलिखित विशेषताएं होती हैं–

- शिक्षण नीतियां शिक्षण कार्य हेतु शिक्षण से पूर्व बनाई गई योजना होती हैं।
- शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति शिक्षण नीतियों के माध्यम से ही किया जाता है।
- शिक्षण नीतियों के माध्यम से शिक्षार्थियों के व्यवहार में वांछित परिवर्तन लाया जाता है।
- शिक्षण नीति के अन्तर्गत शिक्षण विधियां, शिक्षण युक्तियां एवं शिक्षण सूत्र आदि सम्मिलित होते हैं।
- शिक्षण कार्य में शिक्षण नीतियों के प्रयोग से शिक्षण कार्य प्रभावी होता है।
- शिक्षण की संरचना का निर्माण तथा कार्य विश्लेषण शिक्षण नीतियों के द्वारा सकुशल सम्पन्न होता है।
- शिक्षण नीतियों के प्रयोग से शिक्षण के दौरान कार्य कुशलता में बढ़ोतरी होती है।
- शिक्षण के उद्देश्यों को ध्यान में रखकर शिक्षण नीतियों को बनाया जाता है।
- एक अच्छे तथा कुशल शैक्षिक प्रबन्धन के निर्माण में भी शिक्षण नीतियों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है।
- शिक्षण कुशलता तथा कार्यनिष्ठा में वृद्धि के शिक्षण नीतियों के माध्यम से शिक्षकों की शिक्षण कुशलता तथा कार्यनिष्ठा में भी वृद्धि होती है।
- शिक्षण प्रक्रिया को उन्नत बनाने तथा शिक्षण प्रक्रिया को वैज्ञानिक आधार प्रदान करने में भी शिक्षण नीतियों की प्रमुख भूमिका होती है।

अतः एक शिक्षक शिक्षण नीतियों का प्रयोग करके अपने शिक्षण कार्य को प्रभावी तथा उत्पादकमूलक बना सकता है। जिसमें शिक्षक शिक्षण नीतियों के द्वारा शिक्षार्थियों में कम समय में ही वांछित व्यवहार परिवर्तन ला सकता है तथा शिक्षार्थियों के सिखा व समझा सकता है। अधिगम हेतु अपेक्षित वातावरण व परिस्थितियों का निर्माण भी उचित शिक्षण नीतियों के द्वारा सम्भव हो सकता है जिससे वांछित शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति संभव हो पाती है।

11.7 शिक्षक केन्द्रित शिक्षण रणनीतियां

शिक्षक केंद्रित शिक्षण नीतियां ऐसी नीतियां हैं जिनमें शिक्षण कार्य के दौरान शिक्षार्थियों से अधिक महत्वपूर्ण शिक्षक होता है। शिक्षक शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु विषयों एवं प्रकरण को प्रस्तुत करता है या समझाता है और शिक्षार्थी प्रकरण को सुनते व समझते हैं। इस प्रकार की शिक्षण नीतियों में शिक्षण कार्य के दौरान शिक्षक का स्थान प्रमुख होता है जबकि शिक्षार्थियों का स्थान द्वितीयक होता है। शिक्षक केंद्रित शिक्षण नीतियों का

तात्पर्य शैक्षिक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए बनायी गयी ऐसी पूर्व योजना है जिसमें एक शिक्षक शिक्षण कार्य की शुरुआत करने से पहले अपने यहां उपलब्ध संसाधनों तथा निर्धारित शैक्षिक उद्देश्यों के आधार पर एक कार्य योजना तैयार करता है तथा अपने ज्ञान, बुद्धि–विवेक, सुविधा व कार्य योजनानुसार पाठ्यवस्तु का ज्ञान शिक्षार्थियों तक पहुंचाता है। शिक्षार्थी भी शिक्षक पर ही अपना ध्यान केंद्रित करते हैं जिसमें शिक्षक किसी बात या तथ्य के बारे में बताते हैं या प्रदर्शित करते हैं तथा शिक्षार्थी ध्यानपूर्वक सुनते एवं समझते हैं।

11.8 शिक्षक केन्द्रित शिक्षण रणनीतियों की विशेषताएं

शिक्षक केन्द्रित शिक्षण नीतियों की निम्नलिखित विशेषताएं होती हैं–

- शिक्षक केन्द्रित शिक्षण नीतियों से कक्षा में शैक्षिक व्यवस्था समुचित बनी रहती है क्योंकि शिक्षक सम्पूर्ण कक्षा–कक्ष एवं उनकी शैक्षिक गतिविधियों पर पूरा नियंत्रण रखता है।
- कक्षा–कक्ष में सम्पूर्ण नियंत्रण होने से शिक्षक को यह चिंता नहीं रहती कि शिक्षार्थी महत्वपूर्ण सामग्री से वंचित रह जायेंगे।
- जब शिक्षक शिक्षार्थियों के समूह को शिक्षित करने की पूर्ण जिम्मेदारी लेता है, तब कक्षा–कक्ष को शैक्षिक योजना एवं तैयारी के लिए एक केंद्रित दृष्टिकोंण प्राप्त होता है।
- शिक्षक केन्द्रित शिक्षण नीतियों में शिक्षक शैक्षिक गतिविधियों के लिए अपने को सहज, आत्मविश्वासी एवं जिम्मेदार महसूस करते हैं।
- शिक्षक केन्द्रित शिक्षण नीतियों में शिक्षार्थियों को पता होता है कि उन्हें अपना ध्यान शिक्षक पर केंद्रित करना है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

5. शिक्षक केन्द्रित शिक्षण नीतियों के अन्तर्गत शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया में कौन सक्रिय भूमिका या मुख्य भूमिका में होता है?

   ....

   ....

6. शिक्षक केन्द्रित शिक्षण नीतियों के अंतर्गत कक्षा पर पूरा नियन्त्रण किसका होता है?

   ....

   ....

11.9 शिक्षक–केंद्रित शिक्षण रणनीतियों की सीमाएं

शिक्षक केन्द्रित शिक्षण नीतियों की सीमाएं निम्नलिखित हैं–

- शिक्षक–केंद्रित शिक्षण नीतियां तभी अच्छी तरह काम करती है जब शिक्षक पाठ्यवस्तु को रोचक बनाता है, बगैर रोचकता के छात्र ऊबने लगते हैं तथा उनका मन भटक सकता है अतः शिक्षार्थी महत्वपूर्ण जानकारी से वंचित हो सकते हैं।
- शिक्षक–केंद्रित शिक्षण नीतियों में शिक्षार्थी शैक्षिक कार्य अधिकांशतः अकेले ही करते हैं, जिससे शिक्षार्थी

अपने साथियों के साथ खोजपूर्ण ज्ञान की प्रक्रिया को सहभागिता के साथ सम्पन्न करने के अवसर से चूक सकते हैं।

- सहयोग, विद्यालय एवं विद्यालय के बाहर के जीवन में एक आवश्यक कौशल है, जिसे शिक्षक–केंद्रित शिक्षण नीतियों में प्रोत्साहित नहीं किया जाता है।
- छात्रों को अपने संचार और आलोचनात्मक सोच कौशल को विकसित करने का कम अवसर मिल सकता है।
- शिक्षार्थियों को आलोचनात्मक सोच कौशल एवं अपसारी चिन्तन को विकसित करने का अवसर शिक्षक–केंद्रित शिक्षण नीतियों में कम ही मिल पाता है।

11.10 विभिन्न शिक्षक केन्द्रित शिक्षण रणनीतियां

शिक्षार्थी केन्द्रित उपागम शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया में शिक्षार्थियों को केंद्र में रखकर उनकी रुचियों, आवश्यकताओं एवं लक्ष्यों के अनुसार शिक्षा प्रदान करने पर बल देता है। कुछ प्रमुख शिक्षार्थी केन्द्रित उपागम निम्नलिखित हैं–

- व्याख्यान नीति
- प्रदर्शन नीति
- व्याख्यान–सह–प्रदर्शन नीति
- ट्युटोरियल नीति

11.10.1 व्याख्यान रणनीति

व्याख्यान नीति शिक्षण का एक पारम्परिक दृष्टिकोंण है। इस नीति में शिक्षक किसी प्रकरण या पाठ्यवस्तु की व्याख्या मौखिक रूप से करते हुए शिक्षार्थियों को ज्ञान प्रदान करता है। व्याख्यान नीति लंबे समय से शिक्षण का एक प्रचलित तरीका रही है। प्रिन्टिंग प्रेस की शुरुआत से पहले ज्ञान के प्रसार या आदान–प्रदान के लिए व्याख्यान एक आवश्यक नीति थी। व्याख्यान नीति में शिक्षार्थी अक्सर व्याख्याता द्वारा कही या बोली गयी बातों को समझते एवं याद करते हैं। व्याख्यान विधि में शिक्षक सक्रिय रूप से शामिल होते हैं और शिक्षार्थी व्याख्यान को निष्क्रिय रूप से सुनते हैं। व्याख्यान विधि पाठ्यवस्तु को बहुत तेजी के साथ एवं कुशल तरीके से याद करने व समझने में मदद करती है। व्याख्यान विधि में व्याख्याता/शिक्षक द्वारा शिक्षार्थी तक सूचना का एकतरफा प्रवाह शामिल होता है। शिक्षक पाठ्यक्रम के एक निश्चित भाग पर व्याख्यान देता है, तथा शिक्षार्थियों को उसी के बारे में निर्देश देता है। व्याख्यान का अर्थ है किसी भी पाठ को भाषण के रूप में पढ़ाना। शिक्षक किसी विषय की पाठ्यवस्तु पर कक्षा–कक्ष में व्याख्यान देते हैं जिसे शिक्षार्थी निष्क्रिय होकर सुनते हैं। यह नीति उच्च स्तर की कक्षाओं या उच्च शिक्षा के लिए अधिक उपयोगी होती है। व्याख्यान नीति के माध्यम से किसी विषय के विषयवस्तु की सूचना तो दी जाती है परन्तु शिक्षार्थियों को स्वअध्ययन के लिए प्रेरित करने व प्राप्त ज्ञान के व्यावहारिक प्रयोग की क्षमता का विकास इस विधि के माध्यम से कम ही होता है। व्याख्यान नीति में यह भी ज्ञात करना कठिन होता है कि शिक्षार्थी किस सीमा तक शिक्षक द्वारा प्रदान किए गए ज्ञान को ग्रहण कर रहे हैं।

समय के साथ, व्याख्यान नीति में भी परिवर्तन एवं परिमार्जन हुआ है जिसमें व्याख्यान के साथ–साथ विभिन्न शिक्षण तकनीकों जैसे पावर–प्वाइंट प्रजेन्टेशन, चित्र, आडियो एवं वीडियो क्लिप आदि का समावेशन हुआ है। व्याख्यान को अधिक आकर्षक और मनोरंजक बनाने के लिए ही शिक्षक इन विभिन्न रणनीतियों का उपयोग करते हैं। ये रणनीतियाँ व्याख्यान विधि के परिणामों को बढ़ाती हैं और शिक्षार्थियों की सीखने की अवधारण दर में सुधार करती हैं। शिक्षण की अत्यंत प्राचीन नीति होने एवं नयी–नयी शिक्षण नीतियों के विकास के बावजूद व्याख्यान नीति आज भी शिक्षण की एक प्रमुख नीति बनी हुयी है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

7. व्याख्यान नीति में शिक्षक किसी प्रकरण या पाठ्यवस्तु की व्याख्या किस रूप में करता है?

....

....

8. व्याख्यान नीति में शिक्षार्थी की भूमिका किस रूप में होती है?

....

....

व्याख्यान रणनीति की विशषताएं

व्याख्यान नीति की निम्नलिखित विशेषताएं हैं–

- व्याख्यान नीति उच्च स्तर की कक्षाओं के लिए अत्यंत उपयोगी होती है।
- व्याख्यान नीति शिक्षण की सदियों से उपयोग की जाने वाली उच्च कक्षाओं में ज्ञान का प्रसार करने के सर्वोत्तम तरीकों में से एक है।
- व्याख्यान नीति के माध्यम से कक्षाएँ सुचारू रूप से बिना किसी देरी के चलती हैं, कम समय में अधिक सूचनाएँ दी जाती हैं। जिससे कक्षा का बहुमूल्य समय बचता है।
- शिक्षण की व्याख्यान नीति के माध्यम से बड़ी छात्र संख्या वाली कक्षा–कक्ष को आसानी से पढ़ाया जा सकता है।
- इस नीति के माध्यम से एक ही समय में अधिक संख्या में शिक्षार्थी सुनकर पाठ्यवस्तु को नोट कर सकते हैं।
- यह नीति अपेक्षाकृत कम समय में अधिक मात्रा में पाठ्य–सामग्री को कवर करने की क्षमता रखती है।
- शिक्षक के लिए व्याख्यान नीति सरल, संक्षिप्त तथा आकर्षक होती है।
- शिक्षक व्याख्यान देते समय विचारों के प्रवाह में वहुत–सी ऐसी नई बातें बता देते हैं, जिनसे शिक्षार्थी लाभान्वित होते हैं।
- इस नीति के प्रयोग से शिक्षकों को शिक्षण कार्य में बहुत अधिक सुविधा होती है।
- व्याख्यान नीति में शिक्षक शुरुआत से लेकर अन्त तक सक्रिय बना रहता है।
- यदि शिक्षक व्याख्यान नीति का प्रयोग कुशलता के साथ करें तो शिक्षार्थियों को पाठ्यवस्तु के प्रति आकर्षित किया जा सकता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

9. व्याख्यान नीति किस स्तर की कक्षाओं के लिए उपयोगी होती है?

....

....

10. व्याख्यान नीति किस स्तर की कक्षाओं के शिक्षार्थियों के लिए अनुचित व अमनोवैज्ञानिक होती है?

....

....

व्याख्यान रणनीति की सीमाएं

व्याख्यान नीति की सीमाएं निम्नलिखित हैं–

- व्याख्यान नीति के माध्यम से शिक्षार्थियों तक कभी–कभी सिर्फ सूचनाएँ ही पहुंचती हैं जिससे समुचित अध्ययन नहीं हो पाता है।
- याख्यान नीति में शिक्षार्थियों तक सूचना का एकतरफा प्रवाह होता है जिससे शिक्षार्थी सक्रिय रूप भागीदारी व जुड़ाव नहीं कर पाते हैं अर्थात शिक्षार्थी निष्क्रिय रूप से प्रतिभाग करते हैं।
- छोटी कक्षाओं के शिक्षार्थियों के लिए यह नीति अनुचित व अमनोवैज्ञानिक है।
- इस नीति के माध्यम से शिक्षार्थियों में ज्ञान प्राप्त करने के लिए रुचि जाग्रत नहीं हो पाती।
- शिक्षार्थियों की मानसिक शक्ति का विकास इस नीति के माध्यम से कम ही होता है।
- व्याख्यान नीति के माध्यम से प्राप्त ज्ञान अस्थाई होता है।
- व्याख्यान के समय यदि शिक्षार्थी कोई बात समझ नहीं पाते हैं तो शेष व्याख्यान भी समझने में उन्हें परेशानी होती है।
- व्याख्यान के सभी बिन्दुओं को शीघ्रतापूर्वक लिखना शिक्षार्थियों के लिए कठिन होता है।
- व्याख्यान नीति के माध्यम से शिक्षार्थियों के केवल श्रवणेन्द्रिय का प्रयोग होता है अन्य ज्ञानेन्द्रियों का नहीं।
- किसी विषय या प्रकरण का प्रयोगात्मक पक्ष व्याख्यान नीति में उपेक्षित रहता है।
- व्याख्यान नीति में शिक्षक 'शिक्षक' न होकर केवल 'वक्ता' ही होता है।
- व्याख्यान नीति मनोवैज्ञानिक नहीं है।

व्याख्यान रणनीति में सुधार हेतु सुझाव

व्याख्यान नीति में सुधार हेतु निम्नलिखित सुझाव हैं–

- व्याख्यान नीति के माध्यम से पढ़ाते समय श्यामपट्ट का उपयोग आवश्यकतानुसार करते रहना चाहिए।
- व्याख्यान नीति के माध्यम से पढ़ाते समय समुचित शैक्षिक सहायक सामग्री का प्रयोग किया जना

चाहिये।

- व्याख्यान नीति के माध्यम से पढ़ाते समय शिक्षार्थियों को कम बताकर उन्हें भी ऐसे अवसर देने चाहिये जिससे उनकी भी सहभागिता सुनिश्चित हो सके।
- व्याख्यान में शिक्षार्थियों को क्रियाशील एवं सक्रिय रखने के लिए समय–समय उनसे प्रश्न पूछे जाने चाहिए।
- व्याख्यान विधि के अलावा, शिक्षक शिक्षार्थियों को प्रभावी ढंग से पढ़ाने और शिक्षार्थियों को सीखने की प्रक्रिया में सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करने हेतु अन्य तरीकों को एकीकृत करना चाहिये।
- जटिल अवधारणाओं में मुख्य बिंदुओं को चित्रित करने और जोड़ने के लिए कहानी कहने की तकनीकों का उपयोग करें। इससे छात्रों को जानकारी को बनाए रखने के साथ–साथ हमारे आस–पास की दुनिया में संबंधित घटनाओं को पहचानने में मदद मिलती है।
- कक्षाओं को इंटरैक्टिव और मज़ेदार बनाने के लिए ग्राफ़िकल डेटा चित्रण, मल्टीमीडिया प्लेटफ़ॉर्म, पी0पी0टी0 और अन्य दृश्य सामग्रियों का उपयोग करना चाहिये।

व्याख्यान कक्षा में सीखने का एक अनिवार्य हिस्सा है। व्याख्यान देना शिक्षकों द्वारा अपने शिक्षार्थियों को ज्ञान प्रदान करने के लिए इस्तेमाल की जाने वाली एक सामान्य रणनीति है। शिक्षार्थियों को विचार देने के लिए शिक्षकों के पास बेहतरीन संचार कौशल होना चाहिए। संचार कौशल वह मूलभूत कौशल है जो शैक्षणिक प्रथाओं की प्रभावशीलता में सुधार करता है।

11.10.2 प्रदर्शन रणनीति

प्रदर्शन नीति एक शिक्षण रणनीति है जो शिक्षार्थियों को दृश्य सहायता या व्यावहारिक उदाहरणों के माध्यम से कुछ करने का तरीका दिखाती है। यह शिक्षार्थियों को विचारों को समझने और कौशल बनाने में मदद करने के लिए विभिन्न उपकरणों, मॉडलों, सिमुलेशन और प्रयोगों का उपयोग करता है। यह सैद्धांतिक और व्यावहारिक दोनों विषयों के लिए एक प्रभावी शिक्षण पद्धति है। शिक्षण के क्षेत्र में प्रदर्शन नीति एक महत्त्वपूर्ण तरीका है। इस नीति में शिक्षार्थी एवं शिक्षक दोनों ही सक्रिय रहते हैं। कक्षा में शिक्षक सैद्धान्तिक भाग के प्रस्तुतीकरण के साथ ही इस नीति द्वारा उसका प्रदर्शन करता है या व्यावहारिक रूप दिखाता है। शिक्षक पढ़ाते समय श्रव्य–दृश्य या दृश्य रूप में विषयवस्तु को प्रस्तुत करता है और शिक्षार्थी प्रयोग–प्रदर्शन का निरीक्षण करते हुए ज्ञान प्राप्त करने का प्रयास करते हैं। शिक्षार्थी आवश्यकतानुसार अपनी शंकाएँ भी शिक्षक के सामने प्रस्तुत करते हैं। क्या आपने कभी कोई कुकिंग शो देखा है और रेसिपी को आजमाने के लिए प्रेरित महसूस किया है क्योंकि आपने देखा है कि यह कैसे बनाया जाता है? यह प्रदर्शन की शक्ति है, और यह केवल पाक कला तक ही सीमित नहीं है। शिक्षा के क्षेत्र में, प्रदर्शन नीति एक मूल्यवान उपकरण है जो सीखने के अनुभव को महत्वपूर्ण रूप से बढ़ा सकता है। यह शिक्षण रणनीति ठोस से अमूर्त समझ में परिवर्तन का समर्थन करती है, जिससे यह विभिन्न शिक्षण वातावरणों में विशेष रूप से प्रभावी हो जाती है।

प्रदर्शन नीति, एक व्यावहारिक शिक्षण तकनीक है, जिसमें छात्रों को चरण–दर–चरण प्रक्रिया के माध्यम से कुछ करने का तरीका दिखाया जाता है। यह शिक्षार्थियों के सामने वांछित परिणाम का मॉडल बनाकर कौशल, अवधारणाएँ और प्रक्रियाएँ सिखाने का एक इंटरैक्टिव तरीका है। यह विधि न केवल 'कैसे करें' बल्कि प्रत्येक चरण के पीछे 'क्यों' भी बताती है, जो गहरी समझ के लिए महत्वपूर्ण है। चाहे वह वैज्ञानिक प्रयोग हो, गणितीय प्रक्रिया हो या ऐतिहासिक पुनर्रचना हो, प्रदर्शन पारंपरिक व्याख्यान विधियों की तुलना में शिक्षार्थियों को सीखने की प्रक्रिया में अधिक सक्रिय रूप से शामिल करता है।

प्रदर्शन रणनीति के चरण

प्रदर्शन नीति के निम्नलिखित चरण हैं–

- **तैयारी** : शिक्षक को प्रदर्शन के लिए सावधानीपूर्वक योजना बनाने और तैयारी करने की आवश्यकता होती है ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि यह प्रदर्शन शकुशल काम करेगा।

- **परिचय** : शिक्षक विषय का परिचय देता है और प्रदर्शन के उद्देश्यों को समझाता है।
- **प्रदर्शन** : शिक्षक दृश्य सहायता या वास्तविक जीवन के उदाहरणों का उपयोग करके गतिविधि या प्रक्रिया को चरण दर चरण दिखाता है।
- **व्याख्या** : शिक्षक चरणों की व्याख्या करता है और शिक्षार्थियों के किसी भी प्रश्न का उत्तर देता है।
- **अभ्यास** : शिक्षार्थी शिक्षक की देखरेख में गतिविधि या प्रक्रिया का अभ्यास करते हैं।
- **मूल्यांकन** : शिक्षक शिक्षार्थियों की समझ का मूल्यांकन करता है और फीडबैक प्रदान करता है।

प्रदर्शन रणनीति की विशेषताएं

प्रदर्शन नीति की निम्नलिखित विशेषताएं हैं–

- यह सीखने को मज़ेदार और रोचक बनाती है।
- यह शिक्षार्थियों को हाथों–हाथ सीखने के माध्यम से व्यावहारिक कौशल हासिल करने में मदद करती है।
- यह शिक्षार्थियों को सैद्धांतिक ज्ञान को वास्तविक जीवन की स्थितियों में लागू करने में सक्षम बनाती है।
- यह शिक्षार्थियों को संलग्न करती है और सक्रिय भागीदारी को प्रोत्साहित करती है।
- यह व्यक्तिगत और समूहिक दोनों तरह के सीखने के लिए उपयुक्त है।
- यह शिक्षार्थियों की जानकारी को बेहतर ढंग से बनाए रखने में मदद करता है।
- शिक्षार्थियों को विषय वस्तु की गहरी समझ विकसित करने में मदद करती है।
- शिक्षार्थी अमूर्त अवधारणाओं की वास्तविक दुनिया के अनुप्रयोगों को देखते हैं।
- वैज्ञानिक सोच को बढ़ावा दिया जाता है।
- प्रदर्शन नीति की दृश्य और इंटरैक्टिव प्रकृति शिक्षार्थियों को रुचिकर रूप से शामिल रखती है।
- यह नीति छोटी कक्षाओं के लिए ज्यादा उपयुक्त है।
- इस नीति के माध्यम से शिक्षार्थी स्वयं देखकर सीखते हैं।
- इस नीति में शिक्षार्थियों की श्रवणेन्द्रियां एवं दृष्टि इन्द्रियां को अधिक सक्रिय होती हैं।
- शिक्षार्थियों की निरीक्षण, तर्क एवं विचार–शक्ति का विकास इस नीति के माध्यम से होता है।
- इस नीति के माध्यम से प्राप्त ज्ञान अधिक स्थाई प्रकृति का होता है।

प्रदर्शन रणनीति की सीमाएं

प्रदर्शन नीति की सीमाएं निम्नलिखित हैं–

- प्रदर्शन के लिए सामग्री तैयार करने और निष्पादित करने में समय लग सकता है।
- इसके लिए महंगे उपकरण और सामग्री की आवश्यकता हो सकती है।
- यह कुछ विषयों के लिए उपयुक्त नहीं हो सकती है।
- यह कुछ निश्चित शिक्षण शैलियों वाले शिक्षार्थियों के लिए प्रभावी नहीं हो सकती है।

- संसाधन निर्भरता– कुछ प्रदर्शनों के लिए विशिष्ट सामग्रियों की आवश्यकता होती है जो आसानी से उपलब्ध नहीं हो सकती हैं।
- इस नीति में शिक्षार्थियों को स्वयं प्रयोग करने के अवसर नहीं मिल पाते हैं।
- कुछ शिक्षार्थी उचित प्रकार से प्रयोगों का निरीक्षण नहीं कर पाते हैं।
- कभी–कभी शिक्षक द्वारा प्रदर्शन उचित ढंग से नहीं हो पाता तब शिक्षार्थियों के मन में विषयवस्तु के प्रति अनेक भ्रान्तियाँ उत्पन्न हाने लगती हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

11. प्रदर्शन नीति में कौन सक्रिय भूमिका या मुख्य भूमिका में होता है?

....

....

12. प्रदर्शन नीति किस स्तर की कक्षाओं के लिए अधिक उपयुक्त होती है?

....

....

13. प्रदर्शन नीति के माध्यम से प्राप्त ज्ञान अधिक ....प्रकृति का होता है।

प्रदर्शन रणनीति में सुधार हेतु सुझाव

प्रदर्शन नीति में सुधार हेतु निम्नलिखित सुझाव हैं–

- प्रौद्योगिकी को शामिल करेंः प्रदर्शन नीति को बेहतर करने के लिए वीडियो, सिमुलेशन, पी0पी0टी0 या इंटरैक्टिव व्हाइटबोर्ड आदि का उपयोग करें।
- विविधता और समावेशन सुनिश्चित करेंः विभिन्न शिक्षण शैलियों और क्षमताओं को पूरा करने के लिए प्रदर्शनों को अनुकूलित करें।
- पूरक सामग्री प्रदान करेंः छात्रों को अनुसरण करने और बाद में समीक्षा करने के लिए हैंडबुक, चित्र, या गाइड आदि प्रदान करें।
- शिक्षार्थियों के समक्ष किसी भी विषयस्तु का प्रदर्शन करने से पहले उसका पूर्वाभ्यास शिक्षक को कर लेना चाहिए।
- प्रदर्शन का उद्देश्य शिक्षार्थियों के सामने स्पष्ट कर देना चाहिए।
- प्रदर्शन से पहले शिक्षार्थियों को प्रयोग, सामग्री या उपकरणों का ज्ञान करा देना चाहिए जिससे प्रदर्शन के समय शिक्षार्थियों को विषयवस्तु समझने में कठिनाई न हो।
- प्रत्येक प्रयोग या प्रदर्शन शिक्षार्थियों के सामने किया जाय, ऐसे स्थान पर किया जाये जहाँ से प्रत्येक शिक्षार्थी प्रयोग–क्रिया या प्रदर्शन को भली–भाँति देख सके।
- प्रयोग प्रदर्शन में छात्रों का सहयोग लेना चाहिए। उनकी शंकाओं का समाधान होता रहना चाहिए।

- प्रदर्शन के साथ–साथ श्यामपट्ट तथा अन्य सहायक शिक्षण सामग्रियों का उपयोग शिक्षक को कक्षा–कक्ष में करना चाहिए।
- बालकों द्वारा प्रदर्शन के निरीक्षण के आलेख की सत्यता पर बल दिया जाना चाहिए।
- प्रयोग या प्रदर्शन पूरा हो जाने के बाद उपकरणों को सावधानी पूर्वक साफ करके उचित स्थान पर रख देना चाहिए।
- प्रदर्शन के समय शिक्षक की भाषा सरल होनी चाहिए।
- प्रदर्शन के बाद शिक्षक को शिक्षार्थियों के साथ निरीक्षण एवं परिणाम सम्बन्धी वार्तालाप भी करना चाहिए।

प्रदर्शन विधि एक शक्तिशाली शिक्षण रणनीति है जो सिद्धांत और व्यवहार के बीच की खाई को पाटकर सीखने को महत्वपूर्ण रूप से बढ़ा सकती है। जब अच्छी तरह से योजना बनाई और क्रियान्वित की जाती है, तो यह छात्रों को संलग्न कर सकती है, वैज्ञानिक सोच को बढ़ावा दे सकती है और विभिन्न प्रकार की शिक्षण शैलियों को पूरा कर सकती है। हालाँकि इसमें अपनी चुनौतियाँ हैं, लेकिन विचारशील एकीकरण और पूरक उपकरणों के उपयोग से, प्रदर्शन विधि के लाभों को पूरी तरह से महसूस किया जा सकता है।

11.10.3 व्याख्यान–सह–प्रदर्शन रणनीति

व्याख्यान–सह–प्रदर्शन नीति व्याख्यान एवं प्रदर्शन दोनों नीतियों का मिलाजुला रूप है। अर्थात यह दोनों अलग नीतियाँ मिलकर संयुक्त रूप से व्याख्यान–सह–प्रदर्शन नीति को जन्म देती हैं। इस नीति में व्याख्यान नीति की कमियों को दूर करके व प्रदर्शन नीति की विशेषताओं को शामिल करके एक अधिक प्रभावशाली नीति बनाई जीती है। यह संयुक्त नीति समय और शक्ति दोनों तरह से मितव्ययी है। इस नीति में व्याख्यान की सहायता से शिक्षक सैद्धान्तिक पक्ष को स्पष्ट करता है तथा श्यामपट्ट, चित्र, मॉडल एवं अन्य शैक्षिक सहायक सामग्री की मदद से विषयवस्तु को प्रस्तुत करता है। तत्पश्चात सैद्धान्तिक पक्ष को और अधिक स्पष्ट करने हेतु कक्षा में शिक्षार्थियों की सहायता से प्रयोग प्रदर्शन करता है। प्रदर्शन एवं व्याख्यान के समय शिक्षक शिक्षार्थियों से समय–समय पर प्रश्न पूछता रहता है।

व्याख्यान–सह–प्रदर्शन नीति पारम्परिक नीतियों में से एक है। इसे चाक और टॉक नीति के रूप में भी जाना जाता है। यह एक शिक्षक केंद्रित नीति है। इस विधि में शिक्षक सक्रिय होता है और शिक्षार्थी निष्क्रिय होते हैं। शिक्षक कक्षा में प्रयोग या प्रदर्शन के साथ व्याख्यान देता है अर्थात किसी विषयवस्तु से सम्बन्धित चार्ट, चित्र, माडल, आडियो–वीडियो क्लिप, पी0पी0टी0 आदि के माध्यम से शिक्षार्थी वास्तविक उपकरण और संचालन को देखते हैं, साथ ही साथ शिक्षक उस विषयवस्तु से सम्बन्धित व्याख्यान भी देते हैं। यह विधि ठोस से अमूर्त और करके सीखने के सिद्धांतों पर काम करती है। इस विधि में विज्ञान सीखने के लिए आवश्यक गुण जैसे स्वतंत्र सोच, अपसारी चिन्तन, अवलोकन की शक्ति और तर्क विकसित किए जा सकते हैं।

व्याख्यान–सह–प्रदर्शन रणनीति की विशेषताएँ

व्याख्यान–सह–प्रदर्शन नीति की निम्नलिखित विशेषताएं हैं–

- व्याख्यान–सह–प्रदर्शन नीति में व्याख्यान नीति की सभी कमियों को दूर कर दिया जाता है।
- इस नीति में प्रदर्शन नीति की सभी विशेषताओं का समावेशन कर लिया जाता है।
- शिक्षार्थियों को और अधिक स्पष्ट ज्ञान की प्राप्ति व्याख्यान–सह–प्रदर्शन नीति के माध्यम से होती है।
- व्याख्यान–सह–प्रदर्शन नीति में समय, धन एवं श्रम की बचत होती है।
- व्याख्यान–सह–प्रदर्शन नीति शिक्षार्थियों की भागीदारी को बढ़ाती है।
- व्याख्यान–सह–प्रदर्शन नीति उपयोगी चर्चा को बढ़ावा देती है।

- व्याख्यान–सह–प्रदर्शन नीति अधिक कार्यकुशलता को सुनिश्चित करती है।
- व्याख्यान–सह–प्रदर्शन नीति में गतिविधि आधारित एवं मूर्त से अमूर्त आधारित विषयवस्तु का प्रस्तुतीकरण किया जाता है।

व्याख्यान–सह–प्रदर्शन रणनीति की सीमाएं

व्याख्यान–सह–प्रदर्शन नीति की सीमाएं निम्नलिखित हैं–

- व्याख्यान–सह–प्रदर्शन नीति में उपकरणों या शिक्षण सहायक सामग्री को स्वतंत्रतापूर्वक प्रयोग करने के अवसर छात्रों को स्वयं नहीं मिलते हैं।
- शिक्षार्थी इस नीति में स्वयं प्रयोग न करके निरीक्षण करते हैं। निरीक्षण द्वारा प्रत्येक के लिए ज्ञान प्राप्त कर पाना आसान कार्य नहीं होता है।
- इस नीति में जब मल्टीमीडिया या शैक्षिक तकनीकी द्वारा विषयवस्तु प्रदर्शित की जाती है तब यह एक खर्चीली नीति साबित होती है।
- इस नीति में शिक्षक के लिए एक मुख्य समस्या शिक्षण सहायक सामग्री की दृश्यता है क्योंकि सभी शिक्षार्थी प्रदर्शन के विवरण और परिणाम को नहीं देख पाते हैं।
- व्याख्यान एवं प्रदर्शन की बहुत तेज़ या बहुत धीमी गति कभी–कभी परेशानी उत्पन्न कर देती है।
- इस नीति में शिक्षार्थियों की व्यक्तिगत विभिन्नता का अधिक ध्यान नहीं दिया जाता है।
- यह विधि किसी तरह शिक्षार्थियों में प्रयोगशाला कौशल के विकास में बाधा उत्पन्न करती है।
- यह विधि शिक्षार्थियों में वैज्ञानिक दृष्टिकोंण विकसित करने हेतु उपयोगी नहीं है।

व्याख्यान–सह–प्रदर्शन रणनीति में सुधार हेतु सुझाव

व्याख्यान–सह–प्रदर्शन नीति में सुधार हेतु निम्नलिखित सुझाव हैं–

- शिक्षकों को प्रदर्शन एवं व्याख्यान के उद्देश्य के बारे में स्पष्ट पता होना चाहिए।
- प्रदर्शन एवं व्याख्यान दोनों की योजना पहले से ही बना लेनी चाहिए और उसका अभ्यास कर लेना चाहिए।
- इस नीति का प्रयोग शिक्षार्थियों की आयु, क्षमता तथा संसाधनों की उपलब्धता के आधार पर करना चाहिए।
- प्रदर्शन से पूर्व ही व्याख्यान–सह–प्रदर्शन सम्बन्धी सैद्धान्तिक तथा प्रयोगात्मक ज्ञान शिक्षक को स्पष्ट होना चाहिए।
- इस नीति में श्रव्य–दृश्य सामग्री का आवश्यकतानुसार प्रयोग शिक्षक को करना चाहिए।
- प्रदर्शन एवं व्याख्यान सरल तथा शिक्षार्थियों के अनुभव एवं स्तर के अनुरूप होना चाहिए।
- प्रयोग–प्रदर्शन में शिक्षार्थियों का अधिकाधिक सहयोग लेना चाहिए। उन्हें प्रयोग या प्रदर्शन सम्बन्धी छोटे–छोटे उत्तरदायित्व भी सौंपे जाने चाहिए।
- शिक्षकों के पास एक बड़ा ब्लैकबोर्ड आवश्यक है ताकि प्रदर्शन के सिद्धांतों और अन्य मामलों को संक्षेप में प्रस्तुत किया जा सके और आवश्यक आरेख और रेखाचित्र भी बनाए जा सकें इसके साथ ही व्याख्यान भी दिया जाना चाहिये।

11.10.4 ट्युटोरियल रणनीति

लोकतांत्रिक देशों में शिक्षा प्राप्त करना सभी व्यक्तियों का मौलिक अधिकार है। इसलिए व्यक्तिगत शिक्षण के स्थान पर सामूहिक शिक्षण पर बल दिया जाता है, ताकि कम व्यय पर बड़े समूह को शिक्षित किया जा सके। लेकिन यह भी सत्य है कि सामूहिक–शिक्षण में शिक्षक प्रत्येक विद्यार्थी की 'व्यक्तिगत' समस्याओं का समाधान नहीं कर सकता या शिक्षार्थियों की व्यक्तिगत विभिन्नता का ध्यान नहीं रख पाता। इसका कारण यह है कि यदि वह ऐसा करता है, तो वह निर्धारित पाठ्यक्रम निर्धारित समय में पूरा नहीं कर सकता। सामूहिक–शिक्षण के इस दोष को दूर करने हेतु विद्यार्थियों को छोटे–छोटे समूहों में विभाजित कर दिया जाता है, ताकि समूह शिक्षण के दौरान सामने आने वाली व्यक्तिगत समस्याओं का सफलतापूर्वक समाधान किया जा सके। ट्युटोरियल कक्षा का एक उप–भाग है, जिसमें शिक्षक व्यक्तिगत शिक्षण के माध्यम से विद्यार्थियों के छोटे–छोटे समूहों की समस्याओं का समाधान करने का प्रयास करते हैं। अतः ट्युटोरियल या अनुवर्ग एक ऐसी शिक्षण नीति है जिसका प्रयोग आवश्यकतानुसार व्यक्तिगत तथा सामूहिक दोनों रूपों में किया जा सकता है। ट्युटोरियल या अनुवर्ग नीति को परिभाषित करते हुए लॉरेन्स उडेंग (Laurance Urdang) ने लिखा है कि– "यह नीति ट्युटर द्वारा गहन अनुदेशन का एक सत्र होती है। यह शिक्षा की एक प्रणाली है जिसमें ट्युटर (शिक्षक) द्वारा निर्देश दिए जाते हैं जो सामान्य सलाहकार के रूप में भी कार्य करता है।"

ट्युटोरियल में शिक्षार्थियों की व्यक्तिगत समस्याओं के साथ–साथ अध्ययन सम्बन्धी कठिनाइयों पर भी ध्यान दिया जाता है। इसलिए इस नीति को 'गहन शिक्षण' (Intensive Instruction) भी कहा जाता है। ट्युटोरियल के माध्यम से ज्ञानात्मक एवं भावात्मक पक्षों से उच्च स्तर के उद्देश्यों को प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। यह कम उम्र के शिक्षार्थियों तथा प्रौढ़ों की पढ़ाई के लिए अत्यंत उपयोगी है।

ट्युटोरियल के प्रकार

ट्युटोरियल या अनुवर्ग नीति के सामान्यतः तीन प्रकार होते हैं–

1. **समूह ट्युटोरियल**– समूह ट्युटोरियल औसत स्तर के वयस्क विद्यार्थियों की समस्याओं को हल करने के लिए विशिष्ट शिक्षण दिया जाता है।
2. **पर्यवेक्षित ट्युटोरियल**– पर्यवेक्षित ट्युटोरियल में शिक्षार्थी और शिक्षक व्यक्तिगत रूप से समय–समय पर समस्याओं पर चर्चा–परिचर्चा या विचार–विमर्श करते हैं। शिक्षार्थी अपनी कठिनाइयाँ या समस्याएं बताते हैं। फिर शिक्षक उन समस्याओं को हल करने का प्रयास करता है। इस तरह शिक्षक और शिक्षार्थियों के बीच चर्चा के बाद समस्याओं का समाधान निकल आता है।
3. **प्रयोगात्मक ट्युटोरियल**– शारीरिक कौशल विकसित करने और मनोप्रेरक कौशल के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए प्रयोगात्मक ट्युटोरियल आयोजित किए जाते हैं। इसके लिए शिक्षार्थियों को प्रयोगशाला में काम करना पड़ता है।

कुछ लोग ट्युटोरियल के संचालन में शिक्षक को प्राथमिक और शिक्षार्थियों को गौण मानते हैं। ऐसी स्थिति में यदि कोई ट्युटोरियल व्याख्यान का रूप ले लेता है तो इसे निरंकुश रणनीति माना जाएगा। इसके विपरीत यदि शिक्षक के बजाय विद्यार्थी अधिक सक्रिय हों तो यह निश्चित रूप से लोकतांत्रिक रणनीतियों में अपना मुख्य स्थान बनाएगा।

ट्युटोरियल रणनीति की विशेषताएँ

ट्युटोरियल नीति की निम्नलिखित विशेषताएं हैं–

- ट्युटोरियल नीति शिक्षण एवं अधिगम के सुधारात्मक पक्ष पर ध्यान केन्द्रित करती है।
- शिक्षार्थियों की समस्याओं को उनके पूर्व–ज्ञान के आधार पर समाधान करते हैं।
- ट्युटोरियल के माध्यम से ज्ञानात्मक एवं भावात्मक पक्षों से उच्च स्तर के उद्देश्यों को प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है।

- यह नीति शिक्षार्थियों की उपलब्धियों को बढ़ाने में भूमिका निभाती है।
- ट्युटोरियल नीति आवश्यकतानुसार वैयक्तिक एवं सामूहिक दोनों रूपों में प्रयोग की जा सकती है।
- शिक्षक व्यक्तिगत शिक्षण के माध्यम से विद्यार्थियों के छोटे–छोटे समूहों की समस्याओं का समाधान करते हैं।
- ट्युटोरियल नीति में कार्य को पूरा करने हेतु शुरुआत में छोटे–छोटे संकेत शिक्षार्थियों को दिए जाते हैं, जिन्हें बाद में समस्या सुलझाते समय धीरे–धीरे हटाते जाते हैं।

ट्युटोरियल रणनीति की सीमाएँ

व्याख्यान नीति की सीमाएं निम्नलिखित हैं–

- इस नीति में केवल अपने विषय से सम्बन्धित समस्याओं का ही समाधान एक शिक्षक सफलता पूर्वक कर कर सकता है। शिक्षक दूसरे विषयों से सम्बन्धित समस्याओं के समाधान हेतु रुचि नहीं दिखाते।
- ट्युटोरियल नीति समूह के प्रत्येक शिक्षार्थियों के लिए होती है परन्तु कभी–कभी शिक्षक कुछ विशेष शिक्षार्थियों पर ही अपना ध्यान केन्द्रित करता है।
- इस नीति में कुछ शिक्षार्थियों के कारण दूसरे शिक्षार्थियों को बोलने या अभिव्यक्ति के अवसर कम मिल पाते हैं।
- शिक्षार्थियों के विभिन्न समूहों में स्पर्द्धा या द्वन्द की स्थिति भी उत्पन्न होती है।
- इस नीति में शिक्षार्थियों को अपसारी चिन्तन तथा सुजनात्मकता के अवसर कम मिल पाते हैं।

ट्युटोरियल रणनीति के प्रयोग हेतु सुझाव

ट्युटोरियल नीति के प्रयोग हेतु सुझाव निम्नवत् हैं–

- इस नीति में समूह के सभी शिक्षार्थियों का ध्यान शिक्षकों को निष्पक्षता पूर्वक रखना चाहिये।
- इस नीति में शिक्षार्थियों के अनुभवों, रुचियों तथा विशिष्टीकरण को ध्यान में रखकर ही शिक्षकों को शिक्षार्थियों की ट्युटोरियल कक्षाएँ लेनी चाहिए।
- इस नीति में शिक्षार्थियों की समस्याओं को दूर करना ही शिक्षकों का प्रमुख उद्देश्य होना चाहिए।
- इस नीति में अपनी बातों एवं कठिनाइयों को शिक्षक के सामने रखने के समान अवसर शिक्षार्थियों को दिए जाने चाहिए।
- इस नीति में समूह निर्माण की प्रक्रिया का प्रमुख आधार मनोवैज्ञानिक होना चाहिए।
- इस नीति में सुधारात्मक शिक्षण व सामान्य समस्या समाधान कौशल दोनों प्रकार के उद्देश्य विकसित किये जाने चाहिए।
- इस नीति में विभिन्न समूहों के मध्य उत्पन्न स्पर्द्धा एवं ईर्ष्या पर सावधानी पूर्वक ध्यान देना चाहिए।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

14. ट्युटोरियल नीति सामान्यतः कितने प्रकार की होती है?

....

....

11.11 सारांश

शिक्षण को सबसे महान व्यवसायों में से एक माना जाता है, शिक्षकों को न केवल शिक्षक बल्कि मानव जाति के भविष्य के संरक्षक के रूप में भी जाना जाता है। एक शिक्षक शिक्षण कार्य शुरू करने के पूर्व ही अपनी कक्षा में पाठ्यवस्तु के प्रस्तुतीकरण के लिए उपयुक्त शिक्षण नीतियों को चयनित करता है जिससे शिक्षार्थियों को कम समय में अधिक से अधिक शिक्षित किया जा सके। शिक्षण नीति में अनेक क्रियाकलाप या कारक शामिल होते हैं जो संयुक्त रूप से शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को प्रभावशाली बनाते हैं। शिक्षण नीति के अंतर्गत शिक्षण की युक्तियां एवं शिक्षण विधियां आदि शामिल होती हैं। शिक्षक केन्द्रित शिक्षण नीतियों के अन्तर्गत मुख्य रूप से व्याख्यान नीति, प्रदर्शन नीति, व्याख्यान–सह–प्रदर्शन नीति एवं ट्युटोरियल नीति आदि शामिल हैं। यह सभी नीतियां एक प्रभावी शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया के लिए अत्यंत आवश्यक हैं।

11.12 अभ्यास के प्रश्न

1. शिक्षण नीतियों के सम्प्रत्यय को स्पष्ट कीजिए।
2. शिक्षण नीति, शिक्षण विधि एवं शिक्षण युक्ति के बीच अन्तर को स्पष्ट कीजिए।
3. किन्हीं दो शिक्षक केन्द्रित नीतियों का विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिए।

11.13 चर्चा के बिन्दु

1. शिक्षक केन्द्रित नीतियों की विशेषताओं व कमियाँ क्या हैं? चर्चा कीजिए।

11.14 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. शिक्षण व्यूहरचना
2. शिक्षण विधियां, शिक्षण सूत्र एवं शिक्षण युक्तियां
3. पाठ्यवस्तु
4. कला
5. शिक्षक
6. शिक्षक का
7. मौखिक रूप में
8. निष्क्रिय या गौण
9. उच्च स्तर
10. निम्न स्तर के शिक्षार्थियों के लिए

11. शिक्षक

12. निम्न स्तर की कक्षाओं के लिए

13. स्थाई

14. तीन

11.15 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. कुलश्रेष्ठ, एस0पी0 (2008), *शैक्षिक तकनीकी के मूल आधार,* मेरठ : आर0 लाल बुक डिपो।
2. मित्तल, एस0 (2016), *शैक्षिक तकनीकी एवं कक्षा–कक्ष प्रबन्ध,* जयपुर : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।
3. अग्रवाल, जे0सी0 (2008), *शैक्षिक तकनीकी, प्रबन्ध एवं मूल्यांकन,* आगरा : अग्रवाल पब्लिकेशन्स।
4. मालवीय, आर0 (2013), *शैक्षिक तकनीकी एवं प्रबन्धन,* इलाहाबाद : शारदा पुस्तक भवन।
5. फिन, जे0डी0 (1972), द इमर्जिंग टेक्नॉलाजी ऑफ एजूकेशन फ्राम एक्सटेन्डिंग एजूकेशन थ्रू टेक्नॉलाजी, वाशिंगटन : ए0एफ0सी0टी0।

इकाई– 12 : समूह केन्द्रित उपागम एवं रणनीतियां

इकाई की संरचना

12.1 प्रस्तावना

12.2 इकाई के उद्देश्य

12.3 शिक्षण उपागम एवं रणनीतियां

12.4 समूह केन्द्रित शिक्षण उपागम एवं रणनीतियां

12.5 समूह–केन्द्रित शिक्षण उपागम एवं रणनीतियों के मुख्य पहलू

12.6 समूह केन्द्रित शिक्षण उपागम एवं रणनीतियों का महत्व

12.7 विभिन्न समूह केन्द्रित शिक्षण उपागम एवं रणनीतियां

12.7.1 प्रश्नोत्तर नीति

12.7.2 वार्तालाप नीति

12.7.3 सहयोगात्मक अधिगम

12.7.4 भूमिका निर्वाह नीति

12.7.5 फ्लिप्ड कक्षा–कक्ष

12.8 सारांश

12.9 अभ्यास के प्रश्न

12.10 चर्चा के बिन्दु

12.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

12.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

12.1 प्रस्तावना

समूह–केन्द्रित शिक्षण एक ऐसा दृष्टिकोण या शिक्षण नीति है जिसमें शिक्षकों एवं सभी शिक्षार्थियों की सक्रिय भागीदारी और सहयोग के माध्यम से सीखने को बढ़ावा दिया जाता है। यह शिक्षक एवं शिक्षार्थी सभी सक्रिय अधिगम पर ज़ोर देते हैं। समूह–केंद्रित शिक्षण में शिक्षक एवं सभी शिक्षार्थियों के मध्य सहयोग, संचार एवं समूहकार्य को प्राथमिकता दी जाती है। समूह केन्द्रित शिक्षण उपागम एवं रणनीतियों के माध्यम से शिक्षार्थियों में आलोचनात्मक चिन्तन, समस्या समाधान योग्यता एवं निर्णय लेने के कौशल आदि का विकास होता है। समूह केन्द्रित शिक्षण उपागम एवं रणनीतियां एक सहायक तथा समावेशी शैक्षिक वातावरण बनाने का प्रयास करते हैं, जो विविधता एवं विभिन्न दृष्टिकोणों का समर्थन करते हैं। अतः समूह केन्द्रित शिक्षण उपागम एवं रणनीतियां शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया को मजबूती प्रदान करते हैं तथा अधिगम को बढ़ावा देती हैं।

12.2 इकाई के उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि–

1. शिक्षण उपागम एवं रणनीतियों के सम्प्रत्यय को समझ कर अभिव्यक्त कर सकेंगे।
2. समूह केन्द्रित शिक्षण उपागम एवं रणनीतियों को समझ कर छात्रों को अध्ययन हेतु प्रेरित कर सकेंगे।
3. समूह केन्द्रित शिक्षण उपागम एवं रणनीतियों के महत्व को स्पष्ट कर सकेंगे।
4. प्रश्नोत्तर नीति के गुण एवं दोषों की विवेचना कर सकेंगे।

5. वार्तालाप नीति को समझकर शिक्षण–अधिगम में उसकी उपयोगिता का मूल्यांकन कर सकेंगे।
6. सहयोगात्मक अधिगम को समझकर अपने अध्ययन में शामिल कर सकेंगे।
7. 'सहपाठी शिक्षण–अधिगम' की प्रक्रिया को समझकर उसका विश्लेषण कर सकेंगे।

12.3 शिक्षण उपागम एवं रणनीतियां

शिक्षण उपागम एवं शिक्षण नीति अक्सर एक दूसरे के स्थान पर प्रयोग किये जाते हैं, लेकिन इनके अर्थ अलग–अलग होते हैं। शिक्षण उपागम एक बृहद अवधारणा है जो शिक्षा के सम्पूर्ण दर्शन को रेखांकित करता है। शिक्षण उपागम सीखने या अधिगम के तरीकों के विषय में सिद्धांतों या मान्यताओं का एक समूह होता है। जबकि शिक्षण नीति एक विशिष्ट तकनीकि है जिसका उपयोग शिक्षण के किसी विशेष उद्देश्य को प्राप्त करने हेतु किया जाता है। शिक्षण नीति शिक्षण उपागम का एक व्यावहारिक अनुप्रयोग होता है। प्रभावी शिक्षण–अधिगम के लिए, शिक्षण उपागम, रणनीतियों और विधियों को एकीकृत करना अति महत्वपूर्ण है। शिक्षण–अधिगम सुनिश्चित करता है कि शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया के सभी घटक वांछित अधिगम परिणाम प्राप्त करने हेतु एक साथ संयुक्त रूप से कार्य करते हैं।

12.4 समूह केन्द्रित शिक्षण उपागम एवं रणनीतियां

समूह–केन्द्रित शिक्षण उपागम एवं रणनीतियां एक ऐसी शैक्षिक पद्धति हैं, जिसमें शिक्षक एवं शिक्षार्थी सभी मिलकर सामूहिक रूप से सीखने की प्रक्रिया में सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित करते हैं। समूह–केन्द्रित शिक्षण उपागम एवं रणनीतियों के अन्तर्गत शिक्षक एक मार्गदर्शक या पथप्रदर्शक की भूमिका का निर्वहन करता है, जिसमें वह शिक्षार्थियों को स्वयं चिन्तन करने या सोचने, समझने एवं समस्या समाधान की योग्यता विकसित करने के अवसर प्रदान करता है। शिक्षार्थी भी शिक्षक की इस भूमिका का लाभ उठाते हुए स्वयं एवं साथियों के सामूहिक प्रयास तथा सहयोग के माध्यम से सीखते हैं या सीखने का प्रयास करते हैं।

समूह–केन्द्रित शिक्षण उपागम एवं रणनीतियां ऐसे शैक्षिक क्रियाकलप हैं जो सहयोगात्मक शिक्षण–अधिगम पर जोर देते हैं, जहाँ शिक्षक एवं सभी शिक्षार्थी साझा शिक्षण उद्देश्यों को प्राप्त करने हेतु एक साथ समूहों में कार्य करते हैं। ये रणनीतियाँ शिक्षक एवं प्रत्येक शिक्षार्थी अर्थात समूह के सदस्यों के सामूहिक ज्ञान, कौशल एवं अनुभवों का लाभ उठाती हैं, और एक ऐसा सीखने के माहौल या वातावरण को बढ़ावा देती हैं जो समूहकार्य, आलोचनात्मक चिन्तन या विचार, संचार और समस्या–समाधान कौशल को बढ़ावा देती हैं। अतः समूह–केन्द्रित शिक्षण उपागम एवं रणनीतियां एक ऐसा प्रभावी तरीका है जिसके द्वारा शिक्षार्थी सक्रिय रूप से सीख व समझ सकते हैं और अपने अन्दर कौशलों का विकास कर सकते हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. समूह केन्द्रित उपागम के अन्तर्गत शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया में कौन सक्रिय भूमिका या मुख्य भूमिका में होता है?

....

....

12.5 समूह–केन्द्रित शिक्षण उपागम एवं रणनीतियों के मुख्य पहलू

समूह केन्द्रित शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया के मुख्य पहलू निम्नलिखित हैं–

सहयोग– शिक्षार्थी कार्यों को पूरा करने, समस्याओं का समाधान करने, परियोजना बनाने, ज़िम्मेदारी साझा

करने एवं एक–दूसरे से सीखने हेतु एक साथ कार्य करते हैं।

परस्पर क्रिया– शिक्षण–अधिगम की प्रक्रिया को सुचारू रूप से सम्पन्न करने हेतु समूह के सदस्यों के मध्य लगातार एवं सार्थक बातचीत सामग्री की समझ और अवधारण को बढ़ाती या विकसित करती है।

सहभागिता– सामूहिक गतिविधियों में शिक्षक एवं शिक्षार्थियों की सक्रिय भागीदारी शिक्षार्थियों की सहभागिता और प्रेरणा को बढ़ाती है, जिससे अधिगम में बढ़ोत्तरी होती है।

सहपाठी अधिगम– शिक्षार्थी एक–दूसरे की सोच, विचारों, अंतर्दृष्टि, दृष्टिकोण एवं प्रतिक्रिया से सीखते हैं।

सामाजिक कौशल का विकास– सामूहिक कार्यों के माध्यम से शिक्षार्थियों में आवश्यक पारस्परिक सम्प्रेषण कौशल एवं सामाजिक कौशलों का विकास होता है।

12.6 समूह केन्द्रित शिक्षण उपागम एवं रणनीतियों का महत्व

समूह केंद्रित शिक्षण उपागम एवं रणनीतियां आधुनिक शिक्षा में एक सहयोगात्मक और आकर्षक शिक्षण–अधिगम वातावरण को बढ़ावा देकर महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। समूह केन्द्रित उपागम एवं रणनीतियों का महत्व इस प्रकार है समझा जा सकता है–

(i) बेहतर अधिगम तथा समझ

समूह केंद्रित शिक्षण उपागम एवं रणनीतियों के माध्यम से सहयोगात्मक ज्ञान का निर्माण होता है। सामूहिक गतिविधियाँ शिक्षार्थियों को अपना ज्ञान साझा करने, प्रश्न पूंछने एवं एक–दूसरे के विचारों के समर्थन हेतु प्रोत्साहित करती हैं, जिससे पाठ्यवस्तु के प्रति गहरी समझ विकसित होती है।

इसमें शिक्षार्थियों को पाठ्यवस्तु के विभिन्न दृष्टिकोणों से अवगत कराया जाता है, जिससे शिक्षार्थियों में आलोचनात्मक सोच एवं अपसारी चिन्तन विकसित होता है और वे विभिन्न नजरिये से अवधारणाओं या विषयवस्तु को समझ व सीख पाते हैं।

(ii) आवश्यक कौशलों का विकास

- **सम्प्रेषण कौशल**– समूह कार्य के लिए प्रभावी सम्प्रेषण की आवश्यकता होती है, जिससे शिक्षार्थियों को अपने विचारों को दूसरों के सम्मुख स्पष्ट रूप से व्यक्त करने तथा दूसरों के विचारों को सक्रिय रूप से सुनने में सहायता मिलती है।
- **समूहकार्य और सहयोग**– शिक्षार्थी दूसरों के साथ प्रभावी ढंग से एक–साथ काम करना सीखते हैं। जिससे उनके अन्दर सहयोग, एकजुटता और सामाजिकता जैसे कौशलों का विकास होता है।
- **समस्या समाधान कौशल**– समस्याओं को हल करने हेतु समूहों में कार्य करना शिक्षार्थियों को आलोचनात्मक तथा रचनात्मक रूप से सोचने के लिए प्रोत्साहित करता है। जिससे शिक्षार्थियों में सहयोगात्मक रूप से समस्या का समाधान खोजने की क्षमता का विकास होता है।

(iii) बढ़ी हुई सहभागिता और प्रेरणा

- **सक्रिय भागीदारी**– सामूहिक गतिविधियां शिक्षार्थियों को सीखने हेतु सक्रिय रूप से भागीदार बनाती हैं, जिससे सीखने की प्रक्रिया अधिक आकर्षक और आनंददायक बन जाती है।
- **सहपाठी सहायता**– सहपाठियों के साथ सीखने पर शिक्षार्थी प्रायः अधिक सहज एवं समर्थित महसूस करते हैं, जिससे उनका आत्मविश्वास और सीखने की प्रेरणा बढ़ जाती है।

(iv) सामाजिक तथा भावनात्मक विकास

- **पारस्परिक कौशल**– सामूहिक कार्यों से सहानुभूति, सम्मान एवं समझ जैसे सामाजिक कौशलों का विकास शिक्षार्थियों में होता है, जो व्यक्तिगत और व्यावसायिक सम्बन्धों के लिए आवश्यक होते हैं।

- **अपनेपन की भावना**– समूह का हिस्सा होने से समुदाय और अपनेपन की भावना पैदा होती है, जो शिक्षार्थियों के शैक्षिक प्रदर्शन तथा भावनात्मक लगाव या जुड़ाव को सकारात्मक रूप से प्रभावित करती है।

(v) वास्तविक जीवन की तैयारी

कुछ कार्यों या व्यावसायों में सहयोग तथा समूहकार्य की जरूरत होती है। समूह केंद्रित शिक्षण उपागम एवं रणनीतियां शिक्षार्थियों को वर्तमान कार्यस्थल में सहयोगात्मक प्रकृति हेतु तैयार करती हैं। समूह गतिविधियों में अक्सर जटिल एवं वास्तविक जीवन से सम्बन्धित समस्याओं को हल करना शामिल होता है, जिससे शिक्षार्थियों को अपने सीखने को व्यावहारिक संदर्भों में लागू करने में सहायता मिलती है।

(vi) व्यक्तिगत उत्तरदायित्व तथा जिम्मेदारी

समूह कार्य शिक्षार्थियों को न केवल अपने स्वयं के सीखने हेतु बल्कि समूह की सफलता हेतु भी जवाबदेह होना सिखाता है, जिससे जिम्मेदारी की भावना बढ़ती है। शिक्षार्थियों को समूहों के भीतर नेतृत्व की भूमिका निभाने के अवसर मिलते हैं, जिससे उन्हें नेतृत्व कौशल और पहल करने की क्षमता विकसित करने में मदद मिलती है।

(vii) बेहतर शैक्षिक प्रदर्शन

सहकारी या सहयोगात्मक शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया में शामिल शिक्षार्थी अक्सर पारम्परिक शिक्षण–अधिगम वातावरण में रहने वालों की तुलना में उच्च शैक्षिक प्रदर्शन प्राप्त करते हैं। सहयोगात्मक शिक्षण–अधिगम गतिविधियाँ सूचना के प्रति धारण तथा पुनः स्मरण में अत्यंत सहायक होती हैं, क्योंकि शिक्षार्थी जो कुछ अपने साथियों के साथ चर्चा करते हैं या काम करते हैं वह उन्हें स्थाई रूप से स्मरण रहता है।

(viii) समावेशिता तथा विविधता का होना

समूह केंद्रित शिक्षण उपागम एवं रणनीतियां अधिक समावेशी होती हैं, जिसमें विभिन्न क्षमताओं और पृष्ठभूमि के शिक्षार्थियों को एक–दूसरे के साथ योगदान करने और सीखने का अवसर मिलता है। विभिन्न समूहों में कार्य करने से शिक्षार्थियों को विभिन्न दृष्टिकोणों और संस्कृतियों की सराहना करने और उन्हें महत्व देने में मदद मिलती है, जिससे समावेशिता तथा सहिष्णुता को बढ़ावा मिलता है।

12.7 विभिन्न समूह केन्द्रित शिक्षण उपागम एवं रणनीतियां

समूह–केन्द्रित शिक्षण उपागम एवं रणनीतियां ऐसे शैक्षिक क्रियाकलाप हैं जो सहयोगात्मक शिक्षण–अधिगम पर जोर देते हैं, जहाँ शिक्षक एवं सभी शिक्षार्थी साझा शिक्षण उद्देश्यों को प्राप्त करने हेतु एक साथ समूहों में कार्य करते हैं। कुछ प्रमुख समूह केन्द्रित शिक्षण उपागम एवं रणनीतियां निम्नलिखित हैं–

(i) प्रश्नोत्तर नीति

(ii) वार्तालाप नीति

(iii) सहयोगात्मक अधिगम

(iv) भूमिका निर्वाह नीति

(v) फ्लिप्ड कक्षा–कक्ष

12.7.1 प्रश्नोत्तर नीति

शैक्षिक क्षेत्र में प्रश्नोत्तर को नीति, विधि एवं उपागम के रूप में स्थापित करने का श्रेय, जो प्रश्नोत्तर नीति के आदि–प्रतिपादक के रूप में जाने जाते हैं सुकरात महोदय को जाता है। प्रश्नोत्तर नीति एक अत्यन्त प्राचीनतम् नीति है। प्रश्नोत्तर नीति के अन्तर्गत प्रश्न के माध्यम से शिक्षार्थियों द्वारा अपने ज्ञान एवं अनुभव के आधार पर दिये गये उत्तरों से शिक्षण प्रक्रिया संचालित होती है। इस नीति द्वारा सर्वप्रथम प्रश्नों को व्यवस्थित एवं क्रमिक रुप से आबद्ध करते हैं तत्पश्चात् उन्हें शिक्षार्थियों के सम्मुख प्रस्तुत करते हैं, जिससे शिक्षार्थियों में

नवीन ज्ञान के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न होती है और फिर शिक्षार्थी अपने पूर्व ज्ञान के आधार पर उत्तर देते हैं। शिक्षार्थियों द्वारा दिए गए सही उत्तरों पर आधारित विचारों या कथनों से सम्बन्ध स्थापित करते हुए शिक्षार्थियों को नए ज्ञान से जोड़ा जाता है। प्रश्नोत्तर नीति के माध्यम से शिक्षण कार्य सम्पन्न करते समय शिक्षक प्रकरण या विषयवस्तु की विशिष्टता को ध्यान में रखकर अनेक प्रकार के प्रश्नों का उपयोग करते हैं। प्रश्नोत्तर नीति के माध्यम से शिक्षण–अधिगम की प्रक्रिया सम्पन्न होते समय कई प्रकार के प्रश्नों का प्रयोग किया जा सकता है जो निम्नवत् हैं –

- व्याख्यात्मक प्रश्न
- वर्णनात्मक प्रश्न
- परिभाषात्मक प्रश्न
- विवेचनात्मक प्रश्न
- उदाहरणार्थ प्रश्न
- आलोचनात्मक प्रश्न
- तुलनात्मक प्रश्न
- विश्लेषणात्मक प्रश्न
- सूची प्रश्न
- रूपरेखात्मक प्रश्न
- निर्णयात्मक प्रश्न
- सम्बन्ध कथन प्रश्न
- सारांश प्रश्न
- उद्देश्य कथन प्रश्न
- कल्पनात्मक प्रश्न

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

2. प्रश्नोत्तर नीति के जन्मदाता कौन माने जाते हैं?

....

....

प्रश्नोत्तर नीति की विशेषताएं

प्रश्नोत्तर नीति की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

- प्रश्नोत्तर नीति के माध्यम से शिक्षार्थियों में सजगता एवं चिन्तन प्रवृत्ति विकसित होती है।
- यह नीति नवीन ज्ञान के प्रति जिज्ञासा एवं रुचि उत्पन्न करती है।
- प्रश्नोत्तर नीति छोटे बच्चों एवं संस्थानों के लिए भी उपयोगी होती है।

- यह नीति वैचारिक प्रखरता जैसे गुणों का विकास शिक्षार्थियों मे करती है।
- प्रश्नोत्तर नीति शिक्षार्थियों के मानसिक पहलुओं का विकास मनोवैज्ञानिक आधार पर करती है।
- प्रश्नोत्तर नीति के माध्यम से शिक्षार्थियों के पूर्व ज्ञान का ऑकलन करने व शिक्षण–अधिगम की रुपरेखा बनाने में सहायता प्राप्त होती है।
- प्रश्नोत्तर नीति के माध्यम से सीखे गए तथ्यों की पुनरावृत्ति या अभ्यास भी किया जा सकता है।
- प्रश्नोत्तर नीति के माध्यम से शिक्षार्थियों की समस्याओं या कठिनाइयों को ज्ञात करने व इन कठिनाइयों या समस्याओं का समाधान करने में सहायता होती है।
- प्रश्नोत्तर नीति के माध्यम से शिक्षार्थियों की उपलब्धियों का मूल्यांकन भी किया जा सकता है।
- प्रश्नोत्तर नीति के माध्यम से शिक्षार्थियों की सृजनात्मक व कल्पनात्मक अभिक्षमता का ज्ञान भी प्राप्त किया जा सकता है।

प्रश्नोत्तर नीति की सीमाएं

प्रश्नोत्तर नीति की सीमाएं निम्नलिखित हैं–

- प्रश्नोत्तर नीति प्रत्येक शिक्षार्थियों हेतु सुविधाजनक या उचित नहीं होती। कमजोर या पिछड़े शिक्षार्थी इस नीति में प्रयुक्त प्रश्नों से घबरा जाते हैं।
- प्रश्नोत्तर नीति में प्रश्नों का सही चयन या उपयोग केवल अनुभवी, प्रशिक्षित एवं कुशल शिक्षक ही कर सकते हैं।
- प्रश्नोत्तर नीति के माध्यम से प्रदान किया जाने वाला शिक्षण–अधिगम नीरस एवं ऊबाऊ होता है।
- इस नीति में प्रश्नों का उचित चयन तथा प्रश्नों का निर्माण करना एक कठिन कार्य होता है।
- प्रश्नोत्तर नीति के माध्यम से विषय–वस्तु या तथ्यों के ज्ञान को पूरी तरह से स्पष्ट करना एक अत्यन्त जटिल कार्य है। अन्ततः इसमें अन्य शिक्षण उपागमों एवं रणनीतियों का सहयोग लेना पड़ जाता है।
- प्रयोगिक विषयों की शिक्षा में प्रश्नोत्तर नीति अनुपयोगी होती है।
- उच्चतर स्तर की कक्षाओं के अध्यापन में प्रश्नोत्तर नीति अनुपयोगी होती है।
- प्रश्नोत्तर नीति में स्मृति शक्ति का सर्वाधिक महत्व होता है अन्य गुणों का कम।
- प्रश्नोत्तर नीति के माध्यम से शिक्षार्थियों में विषयवस्तु के प्रति अवधारणात्मक दृष्टिकोंण विकसित करने, कठिन सम्प्रत्ययों को जानने व समझने में समस्या होती है।

प्रश्नोत्तर नीति के सफल संचालन हेतु सुझाव

प्रश्नोत्तर नीति के सफल संचालन हेतु सुझाव निम्नांकित हैं–

- प्रश्नोत्तर नीति में निपुण शिक्षकों का प्रयोग ही इस नीति में करना चाहिए।
- इस नीति में समुचित प्रश्नों का निर्माण व प्रश्नों का उचित चयन करना चाहिये।
- इस नीति में प्रश्नों को व्यवस्थित एवं क्रमिक रुप से आबद्ध करते हुए उन्हें शिक्षार्थियों के सम्मुख प्रस्तुत करते हैं।
- प्रश्नोत्तर नीति में प्रश्नों को इस प्रकार से पूंछना चाहिए जिससे शिक्षार्थी अपने पूर्व ज्ञान के आधार पर जुड़ सकें।
- इस नीति में प्रश्न पूंछने के साथ ही साथ सम्प्रत्ययों एवं तथ्यों का स्पष्टीकरण भी शिक्षार्थियों के सम्मुख

करना चाहिए।

- इस नीति में अध्ययन हेतु सभी को समान अवसर उपलब्ध कराने के लिए शिक्षार्थियों में समान रुप से प्रश्नों का वितरण करना चाहिए।
- इस नीति में कुछ पसंदीदा शिक्षार्थियों से ही बार–बार प्रश्नों के उत्तर नहीं पूंछना चाहिए।
- इस नीति के माध्यम से शिक्षण के दौरान कुछ प्रश्न विनोदी एवं हास्यात्मक भी पूँछे जाने चाहिए जिससे शिक्षार्थियों में नीरसता न आए।
- इस नीति में पूँछे जाने वाले प्रश्नों की भाषा सरल व स्पष्ट होनी चाहिये जिससे प्रवाहपूर्ण प्रश्नोत्तर प्रक्रिया सम्पन्न हो सके।
- प्रश्नोत्तर नीति में प्रश्नों के निर्माण एवं चयन का आधार कक्षा, आयु एवं शिक्षार्थियों के बौद्धिक स्तर होना चाहिए।
- विभिन्न प्रश्नों के मध्य पारस्परिक व क्रमिक सम्बन्ध होना चाहिए।

12.7.2 वार्तालाप नीति

वार्तालाप एक शैक्षिक समूह गतिविधि है, जिसमें शिक्षक और शिक्षार्थी मिलकर किसी समस्या या विषय पर चर्चा करते हैं। शिक्षार्थी एक–दूसरे से सहयोग पूर्वक किसी समस्या या विषयवस्तु पर विचार करते हैं। वार्तालाप नीति में किसी एक समस्या या विषय का चयन कर लिया जाता है, शिक्षक चयनित समस्या या विषय पर वार्तालाप या वाद–विवाद करने हेतु शिक्षार्थियों को प्रेरित करता है। वार्तालाप नीति शिक्षक एवं शिक्षार्थियों के मध्य अन्तर्क्रिया के अवसर को बढ़ाती है। इस नीति की सफलता हेतु यह आवश्यक होता है कि शिक्षार्थियों को अपने विचार प्रकट करने की पर्याप्त स्वतंत्रता हो। इस नीति में अपने–अपने विचार व्यक्त करने के लिए सभी शिक्षार्थियों को प्रेरित करना चाहिये, जिसके लिए शिक्षक एक निरीक्षक, निर्देशक तथा पथप्रदर्शक के रूप में कार्य करते रहते हैं। वार्तालाप रणनीतियां भी कई प्रकार की होती हैं–

- औपचारिक वार्तालाप
- अनौपचारिक वार्तालाप
- संरचनाकृत वार्तालाप

(i) औपचारिक वार्तालाप–

औपचारिक वार्तालाप का प्रयोग पूर्व निर्धारित कार्यक्रम तथा पूर्व निर्धारित उद्‌देश्यों की प्राप्ति के लिए किया जाता है, जिसके नियम तथा सिद्धान्त भी पूर्व निर्धारित ही होते हैं। यह एक औपचारिक चर्चा है, जिसे शिक्षक द्वारा प्रश्नोत्तर के माध्यम से नियंत्रित किया जाता है। यह शिक्षक एवं शिक्षार्थियों के मध्य सम्पन्न होता है।

(ii) अनौपचारिक वार्तालाप–

अनौपचारिक वार्तालाप में पूर्व निर्धारित नियम एवं सिद्धान्त नहीं होते हैं। अर्थात अनौपचारिक वार्तालाप में प्रतिभाग करने वाले शिक्षक एवं शिक्षार्थी किसी भी नियम से बंधे हुए नहीं होते हैं। अनौपचारिक वार्तालाप की शुरुआत समस्या की उत्पति, विषयवस्तु की प्रकृति, कक्षा–कक्ष में में उत्पन्न तात्कालिक परिस्थिति, शिक्षार्थियों की जिज्ञासा आदि विभिन्न कारणों से शिक्षक एवं शिक्षार्थियों की स्वैच्छिक भागीदारी है। अनौपचारिक वार्तालाप शिक्षक एवं शिक्षार्थियों के मध्य तथा शिक्षार्थियों एवं शिक्षार्थियों के मध्य हो सकता है।

(iii) संरचनाकृत वार्तालाप– संरचनाकृत वार्तालाप के भी तीन रूप हैं–

- **'बज' वार्तालाप**– ये छोटे, संरचित, उद्देश्यपूर्ण 'बज़' सत्र हैं जिनमें छोटे–छोटे समूह होते हैं और उसके बाद पूरी कक्षा को कुछ विशिष्ट प्रश्नों पर रिपोर्ट दी जाती है।
- **सार्थक संरचनाकृत सामान्य वार्तालाप**– ये उद्देश्यपूर्ण संरचित समूह चर्चा होती है, जिसके बाद पूरी

कक्षा को रिपोर्ट दी जाती है और उसके बाद सामान्य चर्चा होती है।

- **शिक्षण बिन्दुओं पर वार्तालाप**– यह एक समूह चर्चा है जिसमें चर्चा के निश्चित बिन्दु होते हैं। इस नीति के द्वारा शिक्षार्थियों के व्यवहार में वांछित परिवर्तन पूर्णतः लाने का प्रयास किया जाता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

3. वार्तालाप नीति के मुख्यतः कितने प्रकार हैं?

....

....

वार्तालाप नीति की विशेषताएं

वार्तालाप नीति की निम्नलिखित विशेषताएं हैं–

- इस नीति में शिक्षण के गलत उपागमों को हतोत्साहित किया जाता है।
- वार्तालाप नीति के माध्यम से शिक्षार्थियों में आत्मविश्वास बढ़ता है।
- वार्तालाप नीति शिक्षार्थियों की अभिवृत्ति को विकसित करने में सहायक होती है।
- यह नीति ध्यानपूर्वक सुनने एवं उचित उत्तर देने हेतु शिक्षार्थियों को प्रेरित करती है।
- इस नीति में शिक्षक एवं शिक्षार्थी एक–दूसरे के नजदीक आते हैं तथा एक–दूसरे को अच्छी तरह समझते हैं।
- यह नीति शिक्षार्थियों को सक्रिय करती है।
- वार्तालाप नीति शिक्षार्थियों की सृजनात्मक क्षमताओं का विकास करती है।
- वार्तालाप नीति एक लोकतांत्रिक नीति है।
- इस नीति में सामाजिक पहलुओं को सीखने के अवसर अधिक मिलते हैं।
- वार्तालाप नीति के माध्यम से ज्ञानात्मक एवं भावात्मक दोनों पक्षों का विकास होता है।
- वार्तालाप नीति के माध्यम से तर्कशक्ति का अधिक विकास होता है, ज्ञान में बृद्धि होती है तथा अभिव्यक्ति के कौशल का विकास होता है।

वार्तालाप नीति की सीमाएं

वार्तालाप नीति की सीमाएं निम्नलिखित हैं–

- वार्तालाप नीति में सभी शिक्षार्थिओं को अभिव्यक्ति के समान अवसर नहीं मिल पाते हैं।
- इस नीति के माध्यम से कभी–कभी शिक्षार्थियों में ईर्ष्या एवं स्पर्द्धा जैसी बातें जाग्रत हो जाती हैं।
- कभी–कभी शिक्षार्थी विषयवस्तु से दूर भटक जाते हैं।
- अनुचित आलोचना करने वाले या बाल की खाल निकालने वाले शिक्षार्थी वार्तालाप नीति के उद्देश्यों को प्रभावित कर सकते हैं।

वार्तालाप के लिए सुझाव

वार्तालाप की सफलता हेतु निम्नलिखित सुझाव हैं–

- अभिव्यक्ति के लिए सभी शिक्षार्थियों को समान अवसर दिए जाने चाहिये।
- कक्षा–कक्ष में चुप रहने वाले शिक्षार्थियों को मुख्य धारा में लाया जाय।
- विचारोत्तेजक प्रश्न शिक्षार्थियों से पूंछकर वार्तालाप हेतु तत्पर करना चाहिए।
- वार्तालाप नीति में वार्तालाप हेतु प्रकरण का चयन शिक्षार्थियों से पारस्परिक विचार–विनिमय द्वारा किया जाना चाहिए।
- वार्तालाप में रचनात्मक तथा सार्थक आलोचनाओं को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।
- जहाँ तक सम्भव हो वार्तालाप में विवादास्पद विषयवस्तु या प्रकरण से बचें।
- इस नीति में शिक्षक को समूह वार्तालाप के एक सक्रिय नियंत्रक के रूप में कार्य करना चाहिए।
- इस नीति में वार्तालाप हमेशा सार्थक एवं उद्देश्यपूर्ण होना चाहिए।

12.7.3 सहयोगात्मक अधिगम

यह एक ऐसी स्थिति होती है जिसमें दो या दो से अधिक लोग एक साथ कुछ सीखते हैं या सीखने का प्रयास करते हैं। सहयोगात्मक अधिगम एक शैक्षिक उपागम है जिसमें शिक्षार्थियों का समूह किसी समस्या को हल करने, किसी कार्य को पूरा करने या किसी उत्पाद को बनाने के लिए एक साथ काम करते हैं। यह उपागम इस विचार पर आधारित है कि सीखना एक सामाजिक गतिविधि है और शिक्षार्थियों को अपने साथियों के साथ बातचीत करने से लाभ हो सकता है। सहयोगात्मक अधिगम के कुछ प्रमुख पहलू इस प्रकार हैं–

बातचीत और संवाद– शिक्षार्थी चर्चा में शामिल होते हैं, अपने तर्क को स्पष्ट करते हैं और दूसरों के दृ ष्टिकोण को सुनते हैं, जो विषय वस्तु की उनकी समझ को गहरा करने में मदद करता है।

साझा लक्ष्य– कक्षा समूह के साझा उद्देश्य होते हैं और शिक्षार्थी इन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए एक साथ काम करते हैं। इसमें अक्सर कार्यों को विभाजित करना, संसाधनों को साझा करना और आपसी सहायता प्रदान करना शामिल होता है।

सकारात्मक अंतर्निर्भरता– शैक्षिक सफलता कक्षा समूह के सामूहिक प्रयासों से जुड़ी होती है। प्रत्येक शिक्षार्थी का योगदान आवश्यक है और उनका काम दूसरों के काम को पूरक बनाता है।

व्यक्तिगत जवाबदेही– कक्षा समूह के रूप में काम करते समय, प्रत्येक शिक्षार्थी अपने काम के हिस्से के लिए जिम्मेदार होता है। यह सुनिश्चित करता है कि हर कोई योगदान दे रहा है और सीख रहा है।

सामाजिक कौशल का विकास– सहयोगात्मक शिक्षण सम्प्रेषण, संघर्ष समाधान, नेतृत्व और स्मूहकार्य कौशल को बढ़ावा देता है, जो शैक्षणिक और व्यावसायिक दोनों सेटिंग्स में मूल्यवान होता है।

चिंतनशील अभ्यास– कक्षा समूह के सदस्य प्रायः चिंतन में संलग्न होते हैं, तथा चर्चा करते हैं कि उनके सहयोगात्मक प्रयासों में क्या अच्छा काम हुआ तथा क्या सुधार किया जा सकता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

4. सहयोगात्मक अधिगम इस विचार पर आधारित है कि सीखना एक .... गतिविधि है।
5. सहयोगात्मक अधिगम एक ऐसी स्थिति होती है जिसमें दो या दो से अधिक लोग एक साथ कुछ .... हैं।

सहयोगात्मक अधिगम की विशेषताएं

सहयोगात्मक अधिगम की निम्नलिखित विशेषताएं हैं–

- इस अधिगम में व्यक्तिगत रूप से सीखने के विपरीत, लोग एक–दूसरे के संसाधनों तथा कौशल (जैसे– एक–दूसरे से जानकारी लेना, एक–दूसरे के विचारों का मूल्यांकन करना, एक–दूसरे के काम की निगरानी करना आदि) का लाभ उठाते हैं।
- यह अधिगम उन पद्धतियों व वातावरण को संदर्भित करता है जहां प्रत्येक शिक्षार्थी एक–दूसरे पर निर्भर होता है और एक–दूसरे के प्रति जवाबदेह भी होता है।
- सहयोगात्मक अधिगम की अवधारणा शिक्षार्थियों को अध्ययन के लिए याद करने की तकनीक का उपयोग करने के बजाय समूह में किये गये प्रयासों को लगातार नई जानकारी के प्रसंस्करण में सक्रिय रूप से शामिल होने में मदद करती है। ऐसे अधिगम के लिए एक स्वस्थ एवं सहयोगात्मक सामाजिक वातावरण का होना अत्यंत आवश्यक है।
- सहयोगात्मक अधिगम से शिक्षक–शिक्षार्थी तथा शिक्षार्थी–शिक्षार्थी अंतर्क्रिया को बढ़ावा मिलता है।
- सहयोगात्मक अधिगम से शिक्षार्थियों में कुशल नेतृत्व तथा संम्प्रेषण कौशल का विकास होता है।

सहयोगात्मक अधिगम की सीमाएं

सहयोगात्मक अधिगम की सीमाएं निम्नलिखित हैं–

- यदि समूह के सदस्यों के बीच विश्वास या सम्मान की कमी है तो प्रभावी ढंग से एक साथ काम करना कठिन हो सकता है।
- यदि समय की कमी हो तथा सदस्यों के बीच सहयोग का अभाव हो तो काम को समय पर समाप्त करना कठिन हो सकता है।
- समूह के सभी सदस्यों का सक्रिय होना तथा कार्य के प्रति गंभीर होना आवश्यक है अन्यथा काम करने में कठिनाई उत्पन्न हो सकती है।
- कार्य के सफलतापूर्वक संचालन के लिए समूह के सभी सदस्यों का योगदान समान होना चाहिए। कभी–कभी असमान योगदान से समूह के सदस्यों में निराशा और नाराजगी की भावना उत्पन्न हो सकती है।
- यदि समूह गतिशीलता की स्थिति अच्छी नहीं है तो भी सहयोगात्मक अधिगम चुनौतीपूर्ण तथा उबाऊ हो सकता है।

सहयोगात्मक अधिगम को प्रभावी बनाने हेतु सुझाव

सहयोगात्मक अधिगम के क्रियान्वयन हेतु निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किए जा सकते हैं–

- स्पष्ट उद्देश्य निर्धारित करेंः सहयोगात्मक गतिविधि के लक्ष्यों और अपेक्षित परिणामों को परिभाषित करें।
- संरचना और मार्गदर्शनः सहयोगात्मक गतिविधि के लिए एक स्पष्ट संरचना प्रदान करें और आवश्यकतानुसार मार्गदर्शन प्रदान करें।
- योगदान का आकलन करेंः सहयोगात्मक अधिगम में समूह के आउटपुट और व्यक्तिगत योगदान दोनों का मूल्यांकन करने के लिए विभिन्न मूल्यांकन विधियों का उपयोग करें।
- सहायक वातावरण बनाएँः एक सकारात्मक और समावेशी माहौल को प्रोत्साहित करें जहाँ सभी शिक्षार्थी मूल्यवान महसूस करें और भाग लेने के लिए प्रेरित हों।
- सहयोगात्मक अधिगम एक शक्तिशाली उपागम है, जिसे प्रभावी ढंग से लागू करने पर, विषय–वस्तु की

गहरी समझ, बेहतर सामाजिक कौशल और अधिक आकर्षक शिक्षण अनुभव प्राप्त हो सकता है।

12.7.4 भूमिका निर्वाह नीति

यह अभिनय या भूमिका निर्वहन की एक नीति है जिससे शिक्षार्थियों में ज्ञानात्मक व सामाजिक कौशल विकसित करने में मदद मिलती है। यह विधि अनुकरणीय शिक्षण प्रणाली को बढ़ावा देती है। इसमें कक्षा के शिक्षार्थियों को छोटे–छोटे समूहों में बांट दिया जाता है और उनसे उनसे दूसरों के अनुभवों का अनुकरण कराया जाता है। इसमें शिक्षार्थियों को शिक्षक व शिक्षार्थी दोनों की ही भूमिका को निभाना पड़ता है। इसमें शिक्षार्थियों को पूर्व अभ्यास नहीं कराया जाता है बल्कि तुरंत ही कोई भूमिका दी जाती है जिसका निर्वाह उनको करना पड़ता है। भूमिका निभाना एक आकर्षक और प्रभावी शिक्षण पद्धति है जिसमें शिक्षार्थियों को विशिष्ट भूमिकाएँ निभानी होती हैं और वास्तविक जीवन की स्थितियों का अभिनय करना होता है। यह आलोचनात्मक सोच, अपसारी चिन्तन, सृजनात्मकता, सहानुभूति, समस्या–समाधान और सम्प्रेषण कौशल विकसित करने के लिए एक शक्तिशाली उपकरण है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

6. भूमिका निर्वहन नीति के माध्यम से शिक्षार्थियों में ज्ञानात्मक विकास के साथ–साथ ....विकास विकसित करने में मदद मिलती है।

भूमिका निर्वाह नीति की विशेषताएं

भूमिका निर्वाह नीति की निम्नलिखित विशेषताएं हैं–

- इसमें पढ़ाई के साथ शिक्षार्थियों को मनोरंजन का भी अवसर मिलता है जिससे पढ़ाई उनका बोझिल नहीं लगती।
- मानवीय सम्बन्धों पर आधारित होने के कारण शिक्षार्थियों को अपने मन की भावनाओं और संवेगों को व्यक्त करने का अवसर प्राप्त होता है।
- यह विधि छोटी कक्षाओं के लिए अधिक उपयोगी एवं रुचिकर है। छोटी कक्षा के शिक्षार्थी इस विधि द्वारा जल्दी सीखते हैं तथा लंबे समय तक अपनी स्मृति में धारण करते हैं।
- यह सामाजिक विज्ञान के विषयों (इतिहास, नागरिक शास्त्र एवं समाजशास्त्र) स्वास्थ्य शिक्षा, खेल शिक्षा, यौन शिक्षा तथा मूल्य आधारित नैतिक शिक्षा के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण नीति है।
- इस नीति द्वारा भूमिका निर्वाह की समीक्षा व उसमें सुधार किया जा सकता है।

भूमिका निर्वाह नीति की सीमाएं

भूमिका निर्वाह नीति की सीमाएं निम्नलिखित हैं–

- यह ज्ञान प्रदान करने की अथवा अधिगम की एक औपचारिक नीति है।
- इसमें शिक्षार्थी कृत्रिम वातावरण में कार्य करते हैं जिससे घटनाओं व परिस्थितियों को वास्तविक रूप देना पूर्णतः संभव नहीं हो पाता।
- इससे विशिष्ट शिक्षण कौशलों का विकास शिक्षार्थियों में करना कठिन है।
- इस नीति में कुछ शिक्षार्थी अपने साथियों के सामने प्रदर्शन करने में असहज या चिंतित महसूस करते हैं।

- कुछ शिक्षार्थी स्वयं को भूमिका या परिदृश्य में पूरी तरह से संलिप्त करने में संघर्ष कर सकते हैं। जिससे कुछ शिक्षार्थी भमिका–निर्वाह पर हावी हो सकते हैं, जबकि अन्य निष्क्रिय रहते हैं।
- समूह गतिविधि में प्रत्येक शिक्षार्थी के व्यक्तिगत योगदान का मूल्यांकन करना चुनौतीपूर्ण हो सकता है।
- भमिका–निर्वाह की योजना बनाना, तैयारी करना और संचालन करना शिक्षक के लिए समय लेने वाला हो सकता है।
- कुछ भूमिकाएं वास्तविक जीवन की स्थितियों को सटीक रूप से प्रतिबिंबित नहीं कर सकती हैं।

भूमिका निर्वाह नीति के क्रियान्वयन हेतु सुझाव

भूमिका निर्वाह नीति के क्रियान्वयन हेतु निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किए जा सकते हैं–

- भूमिका निर्वाह नीति में शिक्षार्थियों को विभिन्न परिस्थितियों के बारे में विस्तृत सूचनाएँ प्रदान कर देनी चाहिये। तत्पश्चात शिक्षार्थियों को भूमिका निर्वहन करने व विषयवस्तु को आगे बढ़ाने के लिए स्वतंत्रता प्रदान करनी चाहिए।
- किस शिक्षार्थी को कौन सी भूमिका देनी है इसका निर्णय पहले ही करना चाहिये अर्थात शिक्षार्थियों के बीच भूमिकाएँ वितरित करना चाहिये।
- भूमिका निर्वहन के लिए दिशानिर्देश प्रदान करना चाहिये जैसे समय सीमा, अपेक्षित परिणाम और मूल्यांकन के लिए विशिष्ट मानदंड आदि।
- इस नीति के अन्तरंग तथा वाहय सिद्धान्तों एवं विधियों को भली–भांति जान लेना चाहिए।
- इस नीति के माध्यम से वास्तविक शिक्षण–अधिगम कार्य प्रारम्भ करने से पहले ही भूमिका अभ्यास के लिए अवसर प्रदान करना चाहिए।
- शिक्षक को भूमिका निर्वहन के समय कक्षा में उपस्थित रहना चाहिए।
- भूमिका निर्वहन के बाद अभिनय एवं विषयवस्तु के सभी पक्षों व कार्यों पर विस्तृत चर्चा व समीक्षा शिक्षक एवं शिक्षार्थी दोनों को मिलकर करनी चाहिए।

12.7.5 फिलप्ड कक्षा–कक्ष

फ़िलप्ड कक्षा–कक्ष एक नया दृष्टिकोंण है। फ्लिप्ड कक्षा–कक्ष एक अनुदेशात्मक शिक्षण तथा मिश्रित अधिगम का एक मिला–जुला रूप है जो पारम्परिक शिक्षण वातावरण के उलट है। यह अनुदेशात्मक शिक्षण सामग्री को कक्षा के बाहर उपलब्ध करा कर शिक्षण की परम्परागत व्यवस्था को बदलता है। इसमें शिक्षक अपने व्याख्यानों को पहले से रिकॉर्ड कर लेता है, रिकॉर्डिंग को कैनवास पर पोस्ट कर देता है ताकि सभी शिक्षार्थी मिलकर इसे देखें और फिर कक्षा के दौरान इन व्याखानों पर चर्चा करके अपने असाइनमेंट को पूरा कर सकें। अर्थात फिलप्ड कक्षा–कक्ष में शिक्षार्थियों को कक्षा में व्याख्यान सुनने और उसके बाद होमवर्क करने के बजाय, फ़िलप्ड कक्षा–कक्ष मॉडल में शिक्षार्थियों को पहले कक्षा के बाहर नई सामग्री के साथ जुड़ना शामिल है, आमतौर पर वीडियो, रीडिंग या अन्य संसाधनों के माध्यम से। फिर कक्षा का समय अभ्यास, परियोजनाओं, चर्चाओं या अन्य गतिविधियों के लिए समर्पित होता है जो सामग्री की गहरी समझ और अनुप्रयोग को बढ़ावा देते हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

7. फिलप्ड कक्षा–कक्ष अनुदेशात्मक शिक्षण सामग्री को कक्षा–कक्ष के .... उपलब्ध करा कर शिक्षण की परम्परागत व्यवस्था को बदलता है।

फिलप्ड कक्षा–कक्ष की विशेषताएं

फिलप्ड कक्षा–कक्ष की निम्नलिखित विशेषताएं हैं–

- फ्लिप्ड कक्षा–कक्ष में शिक्षार्थियों को पहले से ही स्व–अध्ययन का अवसर मिल जाता है जिससे नये विषयों अथवा नए टॉपिक से उनका परिचय का स्थापित हो जाता है। जिससे शिक्षकों को मूल बातें कवर करने में कम समय लगता है तथा उनको शिक्षार्थियों में अधिक गहराई से विषयों की समझ विकसित करने के लिए समय मिल जाता है।

- शिक्षार्थियों को स्व–अध्ययन का अवसर मिलने से उनमें स्वतंत्र शिक्षण कौशल का विकास होता है। इससे शिक्षार्थियों में आत्मविश्वास एवं आत्मनिर्भरता आती है तथा वह आजीवन सीखने के लिए आवश्यक शिक्षण कौशल विकसित करते हैं।

- फ्लिप्ड कक्षा–कक्ष में सभी शिक्षार्थी पढ़ाये जाने वाले प्रकरण की बुनियादी जानकारी के साथ उपस्थित होते हैं जिससे शिक्षकों को उनको प्रकरण का विवरण देने में ज्यादा समय नहीं देना पड़ता है। वे बाकी का समय प्रकरण या पाठ को अधिक आकर्षक बनाने में खर्च कर सकते हैं।

- फ्लिप्ड कक्षा–कक्ष में सीखने से शिक्षार्थियों के लिए एक लाभ सक्रिय रूप से सीखते हुए विषय या प्रकरण की गहरी समझ विकसित होती है। चूंकि इसमें शिक्षार्थी पहले से ही शिक्षक द्वारा उपलब्ध कराई गयी शिक्षण सामग्री का उपयोग करके स्व–अनुभव से ज्ञान का अर्जन कर चुके होते हैं और बाद में कक्षा में शिक्षक द्वारा पढ़ाने पर शिक्षार्थी अपने द्वारा अर्जित ज्ञान के निर्माण में सक्रिय रूप से शामिल होते हैं।

- फ्लिप्ड कक्षा–कक्ष परम्परागत कक्षा की अपेक्षा शिक्षार्थियों को ज्ञानार्जन करने में लचीलापन तथा सुलभता प्रदान करता है। इस कक्षा पद्धति में शिक्षार्थियों को किसी भी स्थान से, किसी भी समय अध्ययन करने के लिए आवश्यक संसाधन प्रदान किए जाते हैं। इस सुलभता से उन्हें अध्ययन करने में सुविधा होती है तथा वह स्व–अध्ययन के लिए अभिप्रेरित भी होते हैं।

फ्लिप्ड कक्षा–कक्ष की सीमाएं

फ्लिप्ड कक्षा–कक्ष की निम्नलिखित सीमाएं हैं–

- सभी शिक्षार्थियों के पास विद्यालय या कक्षा के बाहर इंटरनेट या कम्प्युटर की उपलब्धता का न होना अथवा नेटवर्क की समस्या का होना।

- फ्लिप्ड कक्षा–कक्ष के लिए शिक्षकों को बहुत सारी योजना तथा तैयारी की आवश्यकता होती है। सभी शिक्षार्थियों की आवश्यकताओं को पूरा करने वाले आकर्षक पाठ, ऑनलाइन व्याख्यान एवं शैक्षणिक गतिविधियां बनाना एक शिक्षक के लिए काफी चुनौतीपूर्ण कार्य हो सकता है।

- विशेष शिक्षण आवश्यकताओं वाले शिक्षार्थियों के लिए फ्लिप्ड कक्षा–कक्ष अच्छा हो सकता है परन्तु ऐसे शिक्षार्थियों को अतिरिक्त समय व सहायता प्रदान करना एक शिक्षक के लिए काफी मुश्किल हो सकता है।

- फ्लिप्ड कक्षा–कक्ष उन शिक्षार्थियों के लिए बोझिल हो सकता है जो स्वतंत्र रूप से कार्य करने या अपनी पढ़ाई में सक्रिय भूमिका निभाने के इच्छुक नहीं हैं। पढ़ाई के लिए स्व–अभिप्रेरित शिक्षार्थी ही फ्लिप्ड कक्षा–कक्ष से लाभ ले सकते हैं।

फ्लिप्ड कक्षा–कक्ष को प्रभावी ढंग से लागू करने हेतु सुझाव

फ़्लिप्ड कक्षा–कक्ष को प्रभावी ढंग से लागू करने के लिए यहाँ कुछ सुझाव दिए गए हैं–

- अवधारणाओं को समझाने वाले छोटे, संक्षिप्त और आकर्षक वीडियो बनाएँ।
- शिक्षार्थियों की रुचि बनाए रखने के लिए हास्य एवं वास्तविक जीवन के उदाहरणों का उपयोग करें।
- समझ विकसित करने के लिए लेख, वर्कशीट या इंटरैक्टिव ऑनलाइन मॉड्यूल जैसी पूरक सामग्री प्रदान करें।

- सीखने या अधिगम को अधिक आकर्षक और इंटरैक्टिव बनाने के लिए प्रयोग, सिमुलेशन या मॉडल को शामिल करें।
- अध्ययन सामग्री को वितरित करने के लिए गूगल कक्षा–कक्ष, कैनवस या मॉड्यूल जैसे प्लेटफ़ॉर्म का उपयोग करें।
- शिक्षार्थियों की आवश्यकताओं और प्रतिक्रिया के आधार पर अपनी योजनाओं को अनुकूलित करें।
- फ़्लिप्ड कक्षा की प्रभावशीलता का लगातार मूल्यांकन करें और आवश्यकतानुसार सुधार करें।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

8 किन्हीं तीन प्रमुख समूह केन्द्रित उपागम एवं रणनीतियों का नाम बताएं?

....

....

12.8 सारांश

समूह–केंद्रित शिक्षण उपागम एवं नीतियाँ एक आकर्षक, सहयोगी और समावेशी शिक्षण वातावरण बनाने के लिए आवश्यक हैं। वे न केवल शैक्षिक सीखने को बढ़ाते हैं बल्कि आवश्यक जीवन कौशल के विकास को भी बढ़ावा देते हैं, शिक्षार्थियों को भविष्य की व्यक्तिगत और व्यावसायिक सफलता के लिए तैयार करते हैं। इन रणनीतियों को शामिल करके, शिक्षक एक गतिशील और इंटरैक्टिव कक्षा बना सकते हैं जो सभी शिक्षार्थियों की सहभागिता को बढ़ाता है, सहयोगात्मक शिक्षण को प्रोत्साहित करता है, और भविष्य की सफलता के लिए आवश्यक कौशल विकसित करता है। जिनमें प्रश्नोत्तर नीति, वार्तालाप नीति, भमिका निर्वाह नीति, सहयोगात्मक अधिगम एवं फिलप्ड कक्षा–कक्ष आदि की भूमिका प्रमुख है।

12.9 अभ्यास के प्रश्न

1. समूह–केन्द्रित शिक्षण उपागम एवं रणनीतियों के मुख्य पहलुओं की सूची तैयार कीजिए।
2. समूह केन्द्रित शिक्षण उपागम एवं रणनीतियों का महत्व की विवेचना कीजिए।
3. प्रश्नोत्तर नीति को परिभाषित करते हुए इसकी विशेषताओं एवं सीमाओं का मूल्यांकन कीजिए।

12.10 चर्चा के बिन्दु

1. फिलप्ड कक्षा–कक्ष की वर्तमान समय में क्या प्रासंगिकता है? चर्चा कीजिए।

12.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. शिक्षक एवं शिक्षार्थी
2. सुकरात
3. तीन प्रकार
4. सामाजिक गतिविधि
5. सीखते या अधिगम करते हैं।

6. भावात्मक तथा सामाजिक विकास
7. कक्षा–कक्ष के बाहर
8. प्रश्नोत्तर नीति, वार्तालाप नीति एवं सहयोगात्मक अधिगम

12.11 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. कुलश्रेष्ठ, एस0पी0 (1982), *शैक्षिक तकनीकी के मूल आधार,* मेरठ : आर0 लाल बुक डिपो।
2. मित्तल, एस0 (2016), *शैक्षिक तकनीकी एवं कक्षा–कक्ष प्रबन्ध,* जयपुर : राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।
3. अग्रवाल, जे0सी0 (2008), *शैक्षिक तकनीकी, प्रबन्ध एवं मूल्यांकन,* आगरा : अग्रवाल पब्लिकेशन्स।
4. मालवीय, आर0 (2013), *शैक्षिक तकनीकी एवं प्रबन्धन,* इलाहाबाद : शारदा पुस्तक भवन।
5. फिन, जे0डी0 (1972), द इमर्जिंग टेक्नॉलाजी ऑफ एजूकेशन फ्राम एक्सटेन्डिंग एजूकेशन थ्रू टेक्नॉलाजी, वाशिंगटन : ए0एफ0सी0टी0।

खण्ड 05 : अधिगम प्रक्रिया का शिक्षण आयोजन

खण्ड परिचय

प्रत्येक समाज की संरचना, उसके सिद्धांत, उसकी सभ्यता और संस्कृति तथा उसकी बदलती हुई आवश्यकता होती है और शिक्षा का उद्देश्य वर्तमान समाज में स्थापित सिद्धान्त, संस्कृति, मूल्य, आदर्श एवं आवश्यकताओं को जनसामान्य तक पहुँचाना होता है। शिक्षण के उद्देश्य शिक्षा के उद्देश्यों से ही निर्मित होते हैं। जिस प्रकार समाज परिवर्तनशील होता है उसी प्रकार शिक्षा एवं शिक्षण के उद्देश्य परिवर्तनशील होते हैं। शिक्षण करने समय अध्यापक के समक्ष अनेक प्रकार की समस्याएँ आती हैं। कभी भिन्नता की तथा कभी नवीन शिक्षण विधियों की, तो कभी शिक्षक तथा छात्रों की एवं अन्य दूसरी समस्याएं आती हैं लेकिन एक कुशल अध्यापक वही है जो इन समस्याओं का निराकरण करते हुए उत्तम शिक्षण करते हैं। शिक्षण शिक्षा की प्रक्रिया का एक अभिन्न अंग है। यह सीखने को प्रेरित करने के उद्देश्य से क्रियाओं की एक प्रणाली है। इसका विशेष कार्य ज्ञान प्रदान करना, समझ और कौशल विकसित करता है। शिक्षण में शिक्षक और छात्रों के बीच एक अंतःक्रिया होती है, जिसके द्वारा छात्रों को लक्ष्य की ओर मोड़ दिया जाता है। प्रस्तुत खण्ड में कक्षा में शिक्षण के दौरान बनाये जाने वाली योजनाओं और अधिगम के मार्ग में आने वाली समस्याओं के बारे में चर्चा किया जायेगा। दोनों इकाईयो के बारे में संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है–

इकाई – 13 शिक्षण में योजना बनाना एवं लिर्णय लेने से सम्बन्धित है। अधिगम प्रक्रिया के सुचारू संचालन के लिए एक अच्छे शिक्षण की योजना बनानी होती है। नियोजन अध्यायों को स्पष्ट और समयबद्ध बनाने में मदद करता है, जिसका अर्थ यह है कि छात्र शिक्षण के दौरान सक्रिय रहते हैं और रूचि लेते हैं। योजना को प्रभावी बनाने की प्रक्रिया को लचीला रखना होता है ताकि अध्यापक पढ़ाते समय अपने छात्रों की प्रतिक्रियाओं के आधार पर शिक्षण प्रक्रिया में बदलाव कर सकें। प्रस्तुत इकाई में शिक्षण में योजना बनाना और उससे सम्बन्धित निर्णय लेने इत्यादि पर विस्तृत चर्चा की गई है।

इकाई – 14 कक्षा–कक्ष अधिगम के मुद्दे एवं चिंताओं या समस्याओं से सम्बन्धित है। कक्षा शिक्षण में आने वाली चुनौतियाँ शिक्षकों के सामने आने वाली पर्याप्त समस्याओं में से एक हैं और एक अच्छा शिक्षक इन सभी चुनौतियों को बहादुरी से पार करने का साहस रखता है। शिक्षकों द्वारा सामना की जाने वाली कुछ सामान्य कक्षा चुनौतियों में शिक्षक से सम्बंधित मुद्दे, छात्रों से सम्बंधित मुद्दे एवं अन्य मुद्दे आदि शामिल हैं। इन सामान्य कक्षा चुनौतियों को संबोधित करने से न केवल शिक्षक प्रतिधारण दर में सुधार करने में मदद मिल सकती है बल्कि छात्र की सफलता दर और शिक्षा की अंतिम गुणवत्ता में भी वृद्धि हो सकती है। प्रस्तुत इकाई में वर्तमान शिक्षा परिदृश्य में कक्षा शिक्षण में आने वाली कुछ मुद्दों की चर्चा की गयी है।

इकाई – 15 शिक्षण के सूत्र मीडिया और व्यवसायिकता के मुद्दों से संबंधित है। इस इकाई के अंतर्गत शिक्षण के सूत्र, मीडिया के मुद्दे जिसके अंतर्गत श्रव्य–दृश्य सहायक सामग्री, इलेक्ट्रॉनिक मीडिया एवं प्रिंट मीडिया का विस्तृत वर्णन दिया गया है। व्यवसायिकता के मुद्दे के अंतर्गत व्यवसाय या पेशे के मानदंड तथा एक पेशेवर शिक्षक की क्या विशेषताएं होती है इस पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है।

इकाई– 13 : शिक्षण में योजना बनाना एवं निर्णय लेना

इकाई की संरचना

13.1 प्रस्तावना

13.2 इकाई के उद्देश्य

13.3 शिक्षण के लिए योजना बनाना

13.3.1 शिक्षण का पूर्व–सक्रिय चरण

13.3.2 शिक्षण का अन्तः क्रियात्मक चरण

13.3.3 शिक्षण के बाद का सक्रिय चरण

13.4 शिक्षण में निर्णय लेना

13.5 सारांश

13.6 अभ्यास के प्रश्न

13.7 चर्चा के बिन्दु

13.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

13.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

13.1 प्रस्तावना

शिक्षण शिक्षा की प्रक्रिया का एक अभिन्न अंग है। यह सीखने को प्रेरित करने के उद्देश्य से क्रियाओं की एक प्रणाली है। इसका विशेष कार्य ज्ञान प्रदान करना, समझ और कौशल विकसित करना है। शिक्षण में शिक्षक और छात्रों के बीच एक अंतःक्रिया होती है, जिसके द्वारा छात्रों को लक्ष्य की ओर मोड़ दिया जाता है। इस प्रकार शिक्षण का एकमात्र तत्व शिक्षक और छात्रों के बीच पारस्परिक संबंध या अंतःक्रिया है जो छात्रों को लक्ष्य की ओर ले जाता है। शिक्षण को जानकारी और उपयुक्त परिस्थितियों या गतिविधियों को प्रदान करके सीखने में दूसरे की सहायता करने की कला के रूप में माना जा सकता है। एक अच्छे शिक्षक को इन सब चुनौतियों को दूर करके अच्छा शिक्षण करना चाहिए।

13.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि –

1. शिक्षण के दौरान योजना बनाने के महत्व को समझ सकेंगे
2. शिक्षण योजना के विभिन्न चरणों को समझ सकेंगे।
3. शिक्षण योजना के विभिन्न चरणों में सुझाई गई गतिविधियों से अवगत हो सकेंगे।
4. शिक्षण में निर्णय लेने के महत्व को समझ सकेंगे।

13.3 शिक्षण के लिए योजना बनाना

शिक्षण एक जटिल कार्य है। इस कार्य को करने के लिए एक व्यवस्थित योजना की आवश्यकता होती है। शिक्षण को विभिन्न चरणों के संदर्भ में माना जाता है और प्रक्रिया को बनाने वाले विभिन्न चरणों को शिक्षण के चरण कहा जाता है।

शिक्षण को तीन चरणों में विभाजित किया जा सकता है–

1. शिक्षण का पूर्व–सक्रिय चरण
2. शिक्षण का अंतःक्रियात्मक चरण
3. शिक्षण के बाद का सक्रिय चरण

13.3.1 शिक्षण का पूर्व–सक्रिय चरण

शिक्षण के पूर्व–सक्रिय चरण में शिक्षण की योजना बनाई जाती है। इस चरण में वे सभी गतिविधियाँ शामिल हैं जो एक शिक्षक कक्षा–कक्ष में शिक्षण से पहले या कक्षा–कक्ष में प्रवेश करने से पहले करता है। पूर्व–शिक्षण में अनिवार्य रूप से एक पाठ की योजना बनाना शामिल है। पाठ की योजना को केवल पाठ योजना की रूपरेखा ही नहीं, बल्कि व्यापक रूप में देखने की जरूरत है। योजना में छात्रों के सीखने के संदर्भ में प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्यों की पहचान करना, अपनाई जाने वाली रणनीतियाँ और तरीके, शिक्षण सहायक सामग्री का उपयोग आदि शामिल हैं। इस समय शिक्षक अपने शिक्षण को सुनियोजित तथा सफल बनाने के लिए चिन्तन करता है, सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन करता है और दूसरों से विचार–विमर्श करता है।

शिक्षण के इस चरण में निम्नलिखित पहलुओं के बारे में निर्णय लेने के लिए योजना बनाई जाती है–

1. सिखाई जाने वाली सामग्री का चयन
2. सामग्री का संगठन
3. उपयोग किए जाने वाले शिक्षण के सिद्धांतों और सिद्धांतों का औचित्य
4. शिक्षण की उपयुक्त विधियों का चयन
6. मूल्यांकन उपकरणों की तैयारी और उपयोग के बारे में निर्णय।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. शिक्षण प्रक्रिया को वैज्ञानिक ढंग से .... भागों में विभाजित किया जाता है।
2. पूर्व सक्रिय चरण में शिक्षक छात्रों को ज्ञान प्रदान करने के लिए .... की योजना बनाता है और पढ़ाने की तैयारी करता है।
3. शिक्षक कक्षा में जाने से पूर्व अपने पाठन के ....निर्धारित करता है।

(अ) शिक्षण के पूर्व–सक्रिय चरण में सुझाई गई गतिविधियाँ

शिक्षक के पूर्व अवस्था में निम्नांकित क्रियाएँ शिक्षक को करनी पड़ती हैं–

1. **उद्देश्यों का निर्माण एवं निर्धारण :** शिक्षक कक्षा में जाने से पूर्व अपने पाठन के उद्देश्य निर्धारित करता है। वह उद्देश्यों को व्यावहारिक परिवर्तन के सन्दर्भ में परिभाषित करता है। छात्रों के पूर्व ज्ञान एवं पूर्व व्यवहार तथा अनुभव, कक्षा, स्तर, आयु, मानसिक योग्यताओं आदि के आधार पर वह उद्देश्य बनाता है।
2. **पाठ्य–वस्तु का चुनाव :** शिक्षण उद्देश्यों के चयन के बाद शिक्षक निर्धारित उद्देश्यों के अनुसार पाठ्य–सामग्री या पाठ्य–वस्तु का चयन करता है। पाठ्य–वस्तु के चुनाव के समय पाठ्य–वस्तु की प्रकृति, स्तर, स्वरूप, भाषा व प्रतीक के साथ–साथ छात्रों के स्तर, आयु आदि का भी ध्यान रखा जाता है। शिक्षक चिन्तन करता है कि उसे कौन–सा पाठ पढ़ाना है, क्यों पढ़ाना है, छात्रों का पूर्व ज्ञान किस प्रकार

का है तथा किस स्तर पर प्रेरणा प्रदान करती है तथा किस प्रकार से उसका मूल्यांकन करना होगा।

3. **शिक्षण–शैली** : पाठ्य–वस्तु के चुनाव के पश्चात् शिक्षक इस बात पर चिन्तन करता है कि वह चयन की गयी पाठ्य–वस्तु को कैसे और किस शैली से पढ़ाये। इसके लिए वह पाठ के विभिन्न बिन्दुओं को मनोवैज्ञानिक एवं तर्कपूर्ण ढंग से क्रमबद्ध करता है जिससे कि छात्र अधिक सरलता से इसे सीख सके।

4. **शिक्षण–व्यूह रचना चयन** : इस क्रिया में शिक्षक छात्रों की आयु, परिपक्वता, योग्यताओं आदि के आधार पर ज्ञान प्रदान करने के लिए इस बात पर चिन्तन करता है कि वह शिक्षण की कौन–सी व्यूह रचनाओं का प्रयोग करे ताकि छात्र सरलता से ज्ञान प्राप्त कर सकें। सभी प्रशिक्षण संस्थान छात्राध्यापकों को विभिन्न व्यूह रचनाओं के विषय में इसीलिए ज्ञान प्रदान करते हैं जिससे कि वे कक्षा में सही व्यूह रचनाओं आदि का चयन कर सकें और शिक्षण कार्य को सुचारु रूप से कर सके।

5. **शिक्षण युक्तियों का चुनाव** : शिक्षक को कक्षा में जाने से पहले ही इस बात का निर्णय करना चाहिये कि पाठ्य–वस्तु के किन–किन शिक्षण बिन्दुओं को स्पष्ट करने के लिए शिक्षण के समय कौन सी शिक्षण युक्तियाँ तथा प्रविधियाँ, उदाहरण तथा सहायक सामग्री का प्रयोग करेगा। कक्षा में कब प्रश्न करेगा, व्याख्यान देगा और किस समय कौन सी श्रव्य–दृश्य सामग्री का प्रयोग करेगा। शिक्षक को पहले से योजना बना लेनी चाहिये कि वह शिक्षण का मूल्यांकन कैसे और किन प्रविधियों के माध्यम से करेगा।

13.3.2 शिक्षण का अंतःक्रियात्मक चरण

दूसरे चरण में योजना का निष्पादन शामिल है, जहां छात्रों को उपयुक्त तरीकों से सीखने के अनुभव प्रदान किए जाते हैं। इस अवस्था में वे सभी क्रियाएँ समावेशित होती हैं जो शिक्षक कक्षा में प्रवेश करने के समय से लेकर पाठ्य–वस्तु प्रस्तुत करने के समय तक करता है। इस अवस्था में शिक्षक और छात्र कक्षा में आमने–सामने होते हैं। शिक्षक शाब्दिक या अशाब्दिक प्रेरणा प्रदान करता है, पाठ के विभिन्न तत्वों का वर्णन करता है, प्रश्न पूछता है और उत्तर सुनता है साथ ही उन्हें लक्ष्य तक पहुँचाने का प्रयास करता है।

(अ) शिक्षण के अंतः क्रियात्मक चरण में सुझाई गई गतिविधियाँ

वे सभी गतिविधियाँ जो एक शिक्षक द्वारा कक्षा में प्रवेश करने के बाद की जाती हैं, शिक्षण के अंतःक्रियात्मक चरण के तहत (एक साथ संयोजित करने के लिए) सम्मिलित की जाती हैं। आम तौर पर इन गतिविधियों का संबंध कक्षा में सामग्री की प्रस्तुति और वितरण से होता है। शिक्षक विद्यार्थियों को विभिन्न प्रकार की मौखिक उत्तेजना प्रदान करता है, स्पष्टीकरण देता है, प्रश्न पूछता है, छात्र की प्रतिक्रिया को सुनता है और मार्गदर्शन प्रदान करता है। शिक्षण की अन्तःप्रक्रिया में शिक्षक द्वारा कक्षा के अन्दर किये जाने वाली समस्त क्रियाएँ आती हैं, जिनमें से प्रमुख हैं।

1. **कक्षा का आकार जानना** : जैसे ही शिक्षक कक्षा में प्रवेश करता है, सबसे पहले उसे कक्षा के आकार का पता चलता है। वह कुछ ही पलों में कक्षा के सभी विद्यार्थियों पर अपनी नजरें डालता है। वह उन विद्यार्थियों को जानता है जो उसके शिक्षण में उसकी मदद कर सकते हैं और जो विद्यार्थी इस धारणा के परिणामस्वरूप उसके लिए समस्या पैदा कर सकते हैं। उसी तरह, छात्र शिक्षक के व्यक्तित्व को महसूस कर सकते हैं। इसलिए, इस स्तर पर, शिक्षक को शिक्षक की तरह दिखना चाहिए। उसे निश्चित रूप से परोक्ष रूप से उन सभी विशेषताओं का प्रदर्शन करना चाहिए जो एक अच्छे शिक्षक में मौजूद होनी चाहिए। संक्षेप में, शिक्षक को एक कुशल और प्रभावशाली व्यक्तित्व के रूप में प्रकट होना चाहिए।

3. **छात्रों का निदान** : कक्षा में कक्षा के आकार की अनुभूति के तुरन्त बाद शिक्षक यह ज्ञात करने का प्रयास करता है कि छात्रों का स्तर, पूर्व–ज्ञान, योग्यताएँ, क्षमताएँ, अभिवृत्ति व अभिरुचियाँ कैसी हैं और छात्रों को कैसी और किस स्तर पर पढ़ाया जाना चाहिये। शिक्षक प्रत्यक्षीकरण से छात्रों की योग्यता का पता करता है या सूचनाएँ एकत्रित करता है और उनके अनुसार शिक्षण की अनुक्रियाएँ प्रारम्भ करता है।

4. **क्रिया अथवा उपलब्धि या निष्पत्ति कार्य** : शिक्षण में इनका सम्बन्ध उन क्रियाओं तथा प्रतिक्रियाओं या उपलब्धि से है जो शिक्षक और छात्रों के मध्य कक्षा के अन्दर होती हैं। इन क्रियाओं को शाब्दिक अन्तःप्रक्रिया या अशाब्दिक अन्तःप्रक्रिया में बाँटते हैं। इनमें उद्दीपकों का चुनाव, उनका प्रस्तुतीकरण, पृष्ठ–पोषण तथा पुनर्बलन तथा शिक्षण युक्तियों का चुनाव करना अधिक महत्त्वपूर्ण क्रियाएँ हैं।

i. **उद्दीपकों का चुनाव** : शिक्षण उद्दीपक तथा अनुक्रिया पर आधारित है। इसमें शिक्षक छात्रों के समक्ष शाब्दिक तथा अशाब्दिक उद्दीपक प्रस्तुत करता है। शिक्षण प्रक्रिया की सफलता इन्हीं उद्दीपकों के चयन पर निर्भर करती है। अतः शिक्षक को चाहिये कि वह ऐसे उद्दीपकों का प्रयोग करे जो कक्षा में अधिक प्रभावपूर्ण सिद्ध हों। उद्दीपकों के चयन के बारे में शिक्षक को पूरा ज्ञान होना चाहिये कि किस परिस्थिति में कौन–से उद्दीपक अधिक अच्छे परिणाम देते हैं।

ii. **उद्दीपकों का प्रस्तुतीकरण** : उद्दीपक के चयन के पश्चात् शिक्षक को उद्दीपक प्रस्तुत करते समय काफी सावधान रहना चाहिये। सबसे पहले तो उसे उद्दीपक के बारे में ज्ञान होना चाहिये कि उसे किस प्रकार कक्षा में प्रस्तुत किया जाये। यदि उद्दीपक गलत तरीके से प्रस्तुत कर दिया गया तो उसकी अनुक्रियाएँ भी गलत हो जायेंगी। अतः उद्दीपक प्रस्तुत करते समय उनके स्वरूप, संदर्भ तथा क्रम का ध्यान भी रखना चाहिये।

iii. **पृष्ठ–पोषण तथा पुनर्बलन** : पृष्ठ–पोषण का पुनर्बलन से हमारा तात्पर्य उन परिस्थितियों से है जो विशेष अनुक्रिया की सम्भावना बढ़ाती हैं। इनके माध्यम से वांछित व्यवहार या अनुक्रिया को स्थायी बनाया जाता है। ये परिस्थितियाँ दो प्रकार की होती हैं– धनात्मक तथा ऋणात्मक।

(अ) **धनात्मक पुनर्बलन** : इसमें वांछित व्यवहार से बार–बार होने की सम्भावना में वृद्धि होती है। जैसे प्रशंसा, पुरस्कार, नया ज्ञान मिलना, प्रमाण–पत्र आदि।

(ब) **ऋणात्मक पुनर्बलन** : यह अवांछित व्यवहार रोकने के लिए प्रयोग किया जाता है। जैसे दण्ड, डाँट–फटकार।

पृष्ठ–पोषण तथा पुनर्बलन अनुक्रिया या व्यवहार को शक्ति प्रदान करते हैं, व्यवहार में वांछित परिवर्तन करते हैं और व्यवहार को सही या संशोधित भी करते हैं। अतः शिक्षण में इनका प्रयोग छात्रों के व्यवहार में अभीष्ट परिवर्तन लाने के लिए किया जाता है।

5. **शिक्षण युक्तियों का विस्तार** : शिक्षक कक्षा में छात्रों को नया ज्ञान देने के लिए विभिन्न प्रकार की शिक्षण युक्तियों का प्रयोग करता है, जिससे कि उसकी शिक्षण क्रियाएँ अधिक उपयोगी बन सके। शिक्षण युक्तियों के विस्तार करते समय शिक्षक को पाठ्य–वस्तु के प्रस्तुतीकरण, अधिगम के प्रकार तथा छात्रों की पृष्ठभूमि, पूर्वज्ञान, आयु, कक्षा आदि उनकी आवश्यकताएँ, अभिप्रेरणाएँ, अभिवृत्तियाँ आदि का ध्यान रखना चाहिये तभी वह सही युक्तियों का चयन एवं प्रयोग कर सकेगा। शिक्षण का यह दूसरा चरण नियोजन स्तर पर जो योजना बनाई गई है या तय की गई है, यह उसके कार्यान्वयन से संबंधित है। यह वास्तविक शिक्षण का चरण है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

4. शिक्षण के पूर्व सक्रिय चरण में कौन–कौन सी क्रियाएँ शिक्षक को करनी पड़ती है?

....

....

5. शिक्षा के अंतः क्रियात्मक चरण में शिक्षक को कौन सी क्रियाएं करनी होती है?

....

....

13.3.3 शिक्षण के बाद का सक्रिय चरण

इस अवस्था में शिक्षण कार्य समाप्त हो जाने के बाद शिक्षक सीखे गये कार्य का मूल्यांकन करता है। मूल्यांकन का कार्य उद्देश्यों के आधार पर किया जाता है। मूल्यांकन हेतु शिक्षक विभिन्न प्रकार की मूल्यांकन प्रविधियों का प्रयोग करता है। यह परीक्षण या प्रश्नोत्तरी सहित कई तरीकों से किया जा सकता है या प्रश्नों, टिप्पणियों, संरचनाओं और संरचित स्थितियों पर छात्र की प्रतिक्रिया को देखकर किया जा सकता है। इस चरण में, जैसे ही शिक्षण कार्य समाप्त हो जाता है, शिक्षक विद्यार्थियों के व्यवहार को मापने के लिए मौखिक या लिखित रूप में विद्यार्थियों से प्रश्न पूछता है ताकि उनकी उपलब्धियों का सही मूल्यांकन किया जा सके। इसलिए, मूल्यांकन पहलू में वे सभी गतिविधियाँ शामिल हैं जो विद्यार्थियों की उपलब्धियों और उद्देश्यों की प्राप्ति का मूल्यांकन कर सकती हैं। मूल्यांकन के बिना शिक्षण एक अधूरी प्रक्रिया है। यह शिक्षण और सीखने दोनों से संबंधित है।

वह सभी गतिविधियाँ जो एक शिक्षक द्वारा कक्षा में प्रवेश करने के बाद की जाती हैं, शिक्षण के अंतःक्रियात्मक चरण के तहत (एक साथ संयोजित करने के लिए) सम्मिलित की जाती हैं। आम तौर पर इन गतिविधियों का संबंध कक्षा में सामग्री की प्रस्तुति और वितरण से होता है। शिक्षक विद्यार्थियों को विभिन्न प्रकार की मौखिक उत्तेजना प्रदान करता है, स्पष्टीकरण देता है, प्रश्न पूछता है, छात्र की प्रतिक्रिया को सुनता है और मार्गदर्शन प्रदान करता है। यह अवस्था शिक्षण के मूल्यांकन से सम्बन्धित है। शिक्षक ने जो कुछ भी सिखाया है उसका मूल्यांकन करके यह मालूम किया जाता है कि छात्रों ने उसे किस सीमा तक सीखा है। इस अवस्था में निम्नांकित क्रियाएँ अधिक महत्त्वपूर्ण हैं–

1. **शिक्षण द्वारा व्यवहार परिवर्तन के वास्तविक रूप की परिभाषा** : शिक्षण खत्म हो जाने के बाद शिक्षक, शिक्षण द्वारा व्यवहार परिवर्तन के वास्तविक रूप को परिभाषित करता है, जिसे मानदण्ड व्यवहार कहते हैं। इस के लिए वह छात्रों में आये वास्तविक परिवर्तनों की तुलना अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन से करता है। यदि अधिकतर छात्रों में वांछित परिवर्तन आ गया है तो इसका तात्पर्य है कि शिक्षण सफल रहा और उद्देश्यों की प्राप्ति हो गयी। यदि इसके विपरीत परिणाम आयें तो वह शिक्षण की असफलता की ओर इशारा करता है।

2. **मूल्यांकन की उपयुक्त प्रविधियों का चयन** : शिक्षक छात्रों के व्यवहार परिवर्तन के मूल्यांकन हेतु विश्वसनीय, वस्तुनिष्ठ तथा वैध प्रविधियों का चुनाव करता है। मूल्यांकन करते समय ऐसी प्रविधियों का चयन करना चाहिये जो ज्ञानात्मक, भावात्मक तथा गत्यात्मक पक्षों का भी सही मूल्यांकन कर सके।

उपर्युक्त सभी क्रियाएँ तथा अवस्थाएँ एक–दूसरे से सम्बन्धित हैं। एक अच्छा शिक्षक इन तीनों अवस्थाओं में क्रियाओं को व्यवस्थित एवं समायोजित करके अपने शिक्षण को प्रभावपूर्ण बनाने का प्रयत्न करता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

निम्न में सत्य या असत्य बताइये–

6. शिक्षण उद्देश्यों के बाद शिक्षक निर्धारित उद्देश्यों के अनुसार पाठ्य सामग्री का चयन करता है। (सत्य / असत्य)
7. शिक्षण की अंतःप्रक्रिया में शिक्षक द्वारा कक्षा के अंदर की जाने वाली समस्त क्रियाएँ नहीं आती हैं। (सत्य / असत्य)
8. शिक्षण उद्दीपन तथा अनुक्रिया पर आधारित है। (सत्य / असत्य)

13.4 शिक्षण में निर्णय लेना

कक्षा शिक्षण को ठीक ढंग से पूरा करने के लिए योजना बनाते समय कुछ महत्वपूर्ण निर्णय लेने पड़ते हैं जैसे–

1. किन शिक्षण विधियों का उपयोग किया जाय।
2. शिक्षण के लिए उद्देश्यों एवं लक्ष्यों का निर्धारण किया जाय।
3. शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए यह आवश्यक है कि उपलब्ध संसाधनों (मानवीय, भौतिक एवं सांस्कृतिक) की सही योजना बनायी जाय।
4. शिक्षण योजना के क्रियान्वयन में संसाधनों की सही मात्रा निर्धारित की जाय।

इस तरह कक्षा में छात्रों की प्रगति, कौशल तथा ज्ञान का क्रमिक विकास करने के लिए शिक्षक को उपर्युक्त निर्णय शिक्षण के दौरान लेने चाहिए जिससे की शिक्षण प्रभावी तरीके से पूरा किया जा सके।

13.5 सारांश

पूर्व क्रिया अवस्था में शिक्षक छात्रों का ज्ञान प्रदान करने के लिए शिक्षण की योजना बनाता है और पढ़ाने की तैयारी करता है। इस अवस्था में वे सभी क्रियाएँ आती हैं जो शिक्षक कक्षा में जाने से पूर्व करता है। इस अवस्था में वे सभी क्रियाएँ समावेशित होती हैं जो शिक्षक कक्षा में प्रवेश करने के समय से लेकर पाठ्य–वस्तु प्रस्तुत करने के समय तक करता है। इस अवस्था में शिक्षक और छात्र कक्षा में आमने सामने होते हैं। शिक्षक इस अवस्था में पहले तैयार की गयी शिक्षण की योजना का कार्यान्वयन करता है। पूर्व अवस्था में की गयी पढ़ाने की तैयारी को वास्तविक रूप देने के लिए वह विभिन्न प्रकार के शिक्षण उपागम, व्यूह रचनाएँ, शिक्षण युक्तियों आदि का उपयोग करता है। शिक्षक कक्षा में जाने से पूर्व अपने पाठन के उद्देश्य निर्धारित करता है। वह उद्देश्यों को व्यावहारिक परिवर्तन के सन्दर्भ में परिभाषित करता है। पाठ्य–वस्तु के चुनाव के पश्चात् शिक्षक इस बात पर चिन्तन करता है कि वह चयन की गयी पाठ्य–वस्तु को कैसे और किस शैली से पढ़ाये। कक्षा में शिक्षक जैसे ही प्रवेश करता है वह कक्षा में बैठे हुए छात्रों पर एक सरसरी निगाह डालता है। शिक्षण में इनका सम्बन्ध उन क्रियाओं तथा प्रतिक्रियाओं या उपलब्धि से है जो शिक्षक और छात्र के मध्य कक्षा के अन्दर होती हैं। शिक्षण उद्दीपक तथा अनुक्रिया पर आधारित है। इसमें शिक्षक छात्रों के समक्ष शाब्दिक तथा अशाब्दिक उद्दीपक प्रस्तुत करता है। शिक्षण प्रक्रिया विभिन्न शिक्षण क्रियाओं का समग्र रूप है। अतः शिक्षण क्रियाएँ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण विषय–वस्तु हैं।

13.6 अभ्यास के प्रश्न

1. शिक्षण की क्रियाओं को समझाइये।
2. शिक्षण की अवस्थाओं का वर्णन कीजिए।
3. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखें–
   i. उद्दीपकों का चुनाव
   ii. उद्दीपकों का प्रस्तुतीकरण
4. शिक्षण क्रियाओं का क्या महत्व है? व्याख्या कीजिए।

13.6 चर्चा के बिन्दु

1. शिक्षण में उचित निर्णय क्यों लेना आवश्यक है? चर्चा कीजिए।
2. शिक्षण के चरणों एवं उनकी गतिविधियों पर चर्चा कीजिए।

13.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. तीन
2. शिक्षण
3. लक्ष्य
4. उद्देश्यों का निर्माण एवं निर्धारण, पाठ्य वस्तु का चुनाव, शिक्षण शैली, शिक्षण–व्यूह रचना चयन और शिक्षण युक्तियों का चुनाव
5. कक्षा का आकार जानना, छात्रों का निदान, क्रिया अथवा उपलब्धि कार्य और शिक्षण युक्तियों का विस्तार।
6. सत्य
7. असत्य
8. सत्य

13.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. पाल, कुलविंदर, शैक्षिक तकनीकी, नई दिल्ली : लक्ष्मी पब्लिकेशन।
2. कुलश्रेष्ठ, एस.पी. (2020), शैक्षिक तकनीकी के मूल आधार, आगरा : श्री विनोद पुस्तक मंदिर।
3. माथुर, एस.एस. (1996), शैक्षिक तकनीकी, आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर।

इकाई–14 : कक्षा–कक्ष अधिगम के मुद्दे एवं चिन्ताएं (समस्यायें)

इकाई की संरचना

14.1 प्रस्तावना

14.2 इकाई के उद्देश्य

14.3 कक्षा–कक्ष अधिगम से सम्बन्धित मुद्दे

14.3.1 कक्षा–कक्ष का अर्थ

14.3.2 कक्षा–कक्ष की समस्याओं का अर्थ

14.3.3 कक्षा–कक्ष की समस्याओं की प्रकृति

14.4 अध्यापक से सम्बन्धित मुद्दे

14.5 छात्रों से सम्बन्धित मुद्दे

14.6 पाठ्यक्रम से सम्बन्धित मुद्दे

14.7 कक्षा की संरचना से संबंधित मुद्दे

14.8 भाषायी विविधता वाले कक्षा–कक्ष से संबंधित मुद्दे

14.9 विभिन्न क्षमता युक्त बालकों के शिक्षण से सम्बन्धित मुद्दे

14.10 सारांश

14.11 अभ्यास के प्रश्न

14.12 चर्चा के बिन्दु

14.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

14.14 कुछ उपयोगी पुस्तकें

14.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई में कक्षा शिक्षण के दौरान शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में आने वाली सामान्य समस्याओं एवं मुद्दों के बारे में चर्चा की गई है। ये मुद्दे कक्षा कक्ष की भौतिक स्थिति से लेकर कक्षा में शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में भाग लेने वाले अध्यापकों एवं छात्रों से जुड़ी है। वर्तमान समय में अध्यापक के ऊपर अतिरिक्त काम का भार भी बढ़ा है उसी के सापेक्ष इंटरनेट ने भी शिक्षा देने में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है जिससे छात्रों एवं अध्यापकों के बीच भावनात्मक दूरी भी आई है। इसके अलावा पाठ्यक्रम एवं कक्षा में विविध भाषा एवं क्षमता वाले बच्चों के एक साथ पढ़ाने में शिक्षक के सामने बहुत ही बड़ी चुनौती बनकर उभरी है। इस इकाई में हम लोग शिक्षण से सम्बन्धित मुद्दों के बारे में चर्चा करेंगे।

14.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जायेंगे कि–

1. कक्षा–कक्ष अधिगम से संबंधित विभिन्न मुद्दों को समझ सकेंगे।
2. कक्षा–कक्ष की समस्याओं की प्रकृति से अवगत हो सकेंगे।
3. कक्षा–शिक्षण के दौरान अध्यापकों एवं छात्रों से संबंधित मुद्दों को ज्ञात कर सकेंगे।
4. विभिन्न क्षमता वाले छात्रों के शिक्षण से संबंधित मुद्दों से अवगत हो सकेंगे।

14.3 कक्षा–कक्ष अधिगम से सम्बन्धित मुद्दे

14.3.1 कक्षा कक्ष का अर्थ

एक कक्षा विद्यालय का वह स्थान होता है जहां शिक्षक तथा छात्र शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए योजनाबद्ध तरीके से शिक्षण अधिगम की प्रक्रिया में सक्रिय रूप से अपनी भूमिका निभाते हैं। यह एक ऐसा स्थान होता है जहां विद्यार्थी सबसे ज्यादा समय बिताता है यहां पर एक विद्यार्थी का संपूर्ण विकास किया जा सकता है यहां विद्यार्थी एक दूसरे के साथ समायोजन करते हैं इसका विद्यार्थी के जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ता है जैसा कक्षा कक्ष होगा उसी के आधार पर शिक्षण अधिगम का अनुमान लगाया जा सकता है

14.3.2 कक्षा–कक्ष की समस्याओं का अर्थ

कक्षा कक्ष की समस्याओं का अर्थ कक्षा में मौजूद उन समस्याओं और परेशानियों से है जिसमें अध्यापक अच्छी प्रकार से शिक्षा देने में और छात्र उसे अच्छी तरह से सीखने में असफल रहते हैं। शिक्षण अधिगम के उद्देश्यों की पूर्ति ना हो पाना किसी कक्षा की सबसे बड़ी समस्या होती है आज हमारे देश में शिक्षा के स्तर को ऊंचा उठाने के लिए शिक्षण अधिगम को बेहतर बनाने का समय समय पर अलग पद्धतियों और नवीन शिक्षण प्रणालियों का प्रयोग किया जा रहा है मगर फिर भी कक्षा कक्ष की समस्याओं को पूरी तरह से खत्म नहीं किया जा सका है।

14.3.3 कक्षा–कक्ष की समस्याओं की प्रकृति

1. कक्षा–कक्ष की समस्याएं मनोवैज्ञानिक हो सकती हैं।
2. यह समस्याएं छात्रों एवं शिक्षक के मानसिक अवस्था पर निर्भर होती हैं।
3. यह विद्यालय के प्रबंधन से भी जुड़ी हो सकती हैं।
4. यह समस्याएं वातावरण से संबंधित हो सकती हैं।
5. यह समस्याएं छात्रों तथा शिक्षक से संबंधित हो सकती हैं।
6. यह समस्याएं व्यक्तिगत व सामूहिक दोनों तरह की हो सकती हैं।
7. यह समस्याएं कक्षा में शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को बाधित कर सकती हैं।
8. यह समस्याएं पाठ्यक्रम से भी संबंधित हो सकती है।
9. यह समस्याएं अस्थाई होती है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. कक्षा–कक्ष का क्या अर्थ है?

   ....

   ....

2. कक्षा–कक्ष की समस्याओं से आप क्या समझते हैं?

   ....

   ....

3. कक्षा–कक्ष की समस्याओं की प्रकृति कैसी होती है?

....

....

14.4 अध्यापक से सम्बंधित मुद्दे

अध्यापक से सम्बन्धित मुद्दे निम्नवत वर्णित है–

1. **अध्यापक का स्वास्थ्य** : कक्षा की सभी गतिविधियों को करने की समस्त जिम्मेदारी अध्यापक की होती है अतः यदि अध्यापक किसी भी प्रकार के मानसिक शारीरिक या अन्य समस्या से ग्रसित होता है तो इसका असर उसके शिक्षण कार्य के ऊपर पड़ता है।

2. **अध्यापक का आत्मविश्वास** : अध्यापक का स्वयं में आत्मविश्वास होना चाहिए क्योंकि आत्मविश्वास की कमी के कारण किसी भी कक्षा को सही तरीके से संचालित नहीं किया जा सकता उसकी कमी से छात्रों की समस्याओं का निवारण भी ठीक से नहीं कर सकता और पाठ्य पुस्तकों को भी उचित तरीके से पढ़ा पाने में असमर्थ होता है। अध्यापक को स्वयं में पूर्ण रुप से विश्वास होना चाहिए।

3. **अपने विषय में रुचि ना लेना** : समय के साथ–साथ पाठ्य पुस्तकों के स्वरूप में निरंतर बदलाव हो रहा है और नए–नए ज्ञान का सृजन भी हो रहा है। अध्यापक अगर इन सब में रुचि नहीं लेता है और समय–समय पर अपने ज्ञान को नवीनीकरण नहीं करता है तो वह उचित प्रशिक्षण करने में असमर्थ होता है अतः शिक्षक का अपने विषय में रुचि ना लेना कक्षा में बाधा उत्पन्न करती है शिक्षक का यह कर्तव्य है कि वह अपने विषय में रुचि ले और छात्रों को नवीनतम ज्ञान दे सके।

4. **विषय में ज्ञान की कमी** : अध्यापक को जिस विषय को पढ़ाने के लिए नियुक्त किया जाता है उसको उस विषय में पारंगत होना चाहिए अगर उसको उस विषय का कम ज्ञान है तो वह अधिगम को प्रभावित करता है ऐसे में अध्यापक खुद को असहज महसूस करता है और छात्रों को भी संतुष्ट नहीं कर पाता है।

5. **विद्यालय विद्यालय के कार्यों का अतिरिक्त भार होना** : विद्यालय के अंदर अध्यापकों को अनेक कार्य करने पड़ते हैं जिसमें कई कार्य बहुत जरूरी होते हैं जबकि कुछ ऐसे भी कार्य को करना पड़ता है। जिससे उनके अध्यापन के ऊपर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। काम का बोझ अधिक रहने के कारण शिक्षक छात्रों की गुणात्मक विकास की ओर अधिक ध्यान नहीं दे पाते हैं उदाहरण के लिए शिक्षकों को विभिन्न चुनावी कार्यों में लगाना जनगणना संबंधी कार्य को कराना बाल गणना कराना तथा खाद्य वितरण कार्य को कराना इत्यादि। इन सब कार्यों के अतिरिक्त और भी कार्य शिक्षकों को दिए जाते हैं जिससे कि उनका बहुत सारा समय इसमें निकल जाता है और शिक्षक तथा छात्रों की शिक्षण अधिगम प्रक्रिया बाधित होती है।

6. **अध्यापक की शिक्षण प्रकृति** : कभी–कभी अध्यापक निरंकुश शिक्षण करता है तो ऐसे में वह अपने आप को सर्वोपरि मानता है। वह अपनी सुविधा के अनुसार शिक्षण विधियों का प्रयोग पढ़ाने के दौरान करता है। वह बच्चों की सुविधा को ध्यान में ना रखते हुए अपनी मर्जी से शिक्षण कार्य करता है इसलिए छात्रों को शिक्षण प्रक्रिया के दौरान कई कठिनाइयों का सामना भी करना पड़ता है अतः यह अत्यंत जरूरी है कि कक्षा में सभी बच्चों की प्रकृति व्यक्तिगत भिन्नता और आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए ही अध्यापक अपने शिक्षण को सुनियोजित करें जिससे कि वह प्रभावी तरीके से छात्रों को ज्ञान दे सकें।

7. **अध्यापकों की कठोर अभिवृत्ति** : विद्यालय के कुछ अध्यापक कक्षा में छात्रों के साथ कठोर व्यवहार करते हैं जिसका उन पर गलत प्रभाव पड़ता है जैसे कई बार कक्षा में अध्यापक छात्रों को डांटना पीटते और नजरअंदाज भी करते हैं जिससे कि छात्र तनावग्रस्त हो जाते हैं और अच्छे से अधिगम भी नहीं करते हैं इसलिए एक अध्यापक का कठोर अभिवृत्ति होने के बजाय लचीली प्रवृत्ति होनी चाहिए।

8. **समय का पाबंद नहीं होना** : जो अध्यापक शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में समय का पाबंद नहीं होते हैं जैसे कि समय पर अपना काम पूरा न करना समय पर स्कूल तथा कक्षा में ना पहुंचना, समय पर पाठ्यक्रम को पूरा ना करना तो वह कक्षा में शिक्षण अधिगम प्रक्रिया पर गलत प्रभाव डालता है। इस तरह के शिक्षक का बच्चों पर गलत प्रभाव पड़ता है तथा शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति भी नहीं हो पाती है इसलिए एक अध्यापक को यह चाहिए कि वह समय का पाबंद हो ताकि बच्चे भी उसको देखकर समय से अपना काम करने को प्रेरित हो सकें।

9. **सही मूल्यांकन की कमी** : कक्षा में अध्यापक अगर सभी बच्चों का सही मूल्यांकन नहीं करता है तो वह सभी बच्चों की कमियों को दूर करने में सक्षम नहीं हो पाता है और वह इन कमियों के साथ अगर आगे की कक्षा में पढ़ते हैं तो उनका ज्ञान प्रभावित होता है। जैसे अगर कक्षा में छात्र शिक्षक अनुपात ज्यादा है तो शिक्षक सभी बच्चों का सही सही मूल्यांकन नहीं कर पाते हैं और कमियां रह जाती हैं। अतः यह जरूरी है कि कक्षा में छात्र शिक्षक अनुपात कम हो जिससे कि वह सभी बच्चों का सही मूल्यांकन करके उनका मार्गदर्शन कर सके।

10. **अध्यापक के व्यक्तित्व से संबंधित समस्याएं** : कुछ ऐसे अध्यापक होते हैं जो अपने अध्यापन के कार्य से संतुष्ट नहीं होते और अपने मन में निराशा का भाव रखते हैं वह रूढ़ीवादी होने के कारण परिवर्तनों से घबरा जाते हैं अतः एक शिक्षक को आशावादी ईमानदार विषय के प्रति प्रेम आधुनिकता में विश्वास तथा वैज्ञानिक दृष्टिकोण रखने वाला होना चाहिए।

11. **पाठयक्रम को पूरा करने का लक्ष्य** : अध्यापक केवल पाठ्यक्रम को एक निश्चित अवधि मे पूरा करने के ही लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए शिक्षण कार्य करते हैं जिससे वह अरुचिकर हो जाता है

12. **शिक्षण सहायक सामग्री का कम प्रयोग** : अध्यापक केवल परंपरागत तरीके से ही पढ़ाते हैं वह अतिरिक्त सहायक शिक्षक सामग्रियों का प्रयोग नहीं करते हैं। जिनका प्रयोग करके उस विषय को बेहतर तरीके से पढ़ाया जा सकता है अतः इसके कारण कक्षा शिक्षण अरुचिकर हो जाता है।

13. **अध्यापक के सामने वर्तमान समय की चुनौतियाँ** :

i. कक्षा में पढ़ाई के दौरान छात्र पाठ्यक्रम को लेकर अध्यापक से प्रश्न करते हैं कि यह जीवन में किस तरह काम आएगा। उसका उनके जीवन में क्या महत्व है।

ii. छात्रों का इंटरनेट में प्रवेश ज्यादा है। उनको विषयवस्तु के बारे में पहले से पता रहता है, जो उन्होंने पढ़ा है उसे अध्यापक अलग अंदाज में बताते हैं तो उन्हें लगता है, ठीक से नहीं पढ़ा रहे हैं।

iii. माता–पिता पूरी तरह स्कूल पर निर्भर हो गए हैं। वे चाहते हैं कि बच्चों से जो आशायें हैं, उन्हें स्कूल पूरा कर के दें। वे बच्चों के नंबर कम आने पर भी अध्यापक पर सवाल खड़े करते हैं।

iv. आज कल बच्चे काफी संवेदनशील हो गए हैं। छोटी–छोटी बात पर वे आहत हो जाते हैं। ऐसे में अध्यापक की सबसे बड़ी समस्या यह है कि वह किसी संदेश को बच्चों तक कैसे पहुंचाएं।

v. किसी भी परियोजना या गृहकार्य को कम समय में करने के लिए बच्चे इंटरनेट की मदद ले लेते हैं या बाजार से बने बनाये परियोजना कार्य खरीद लेते हैं। जिससे उनकी रचनात्मकता और शोध क्षमता कम हो रही है।

vi. आज के बच्चे बहुत संवेदनशील हैं और उनके व्यवहार को ज्ञात करना आसान नहीं है। छात्र–शिक्षक की कही गई बात को किस तरह से लेते हैं यह समझना एक बड़ी चुनौती है। छात्र–शिक्षक में आदर का भाव खत्म हो गया है। छात्रों को लगता है कि उनके माता–पिता ने फीस भरी है इसलिए शिक्षक उन्हें पढ़ाते हैं।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

4. कक्षा–शिक्षण के समय शिक्षकों से संबंधित मुद्दे कौन–कौन से हैं?

....

....

5. अध्यापक के सामने नये जमाने की चुनौतियाँ कौन–कौन सी हैं?

....

....

14.5 छात्रों से संबंधित मुद्दे

1. **बच्चों का शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य** : अस्वस्थता किसी भी बात को सीखने में बाधक है क्योंकि अस्वस्थ बाधक अपना ध्यान पाठ पर केन्द्रित नहीं कर सकता।
2. **बुरी आदतें** : कुछ छात्र पूरी कक्षा को पढ़ाई के दौरान परेशानी पैदा करते हैं व ना तो खुद पढ़ते हैं और ना ही दूसरों को पढ़ने देते हैं।
3. **छात्र के परिवार से संबंधित समस्याएं** : कुछ बच्चे ऐसे परिवार से आते हैं जिनके घर का माहौल अच्छा नहीं होता है तथा वहाँ के लोग सांवेगात्मक रूप से स्थिर नहीं होते हैं।
4. **कक्षा कक्ष में छात्रों की अधिक संख्या होना** : अगर कक्षा में ज्यादा बच्चे रहते हैं तो शिक्षक का ध्यान सभी बच्चों की तरफ नहीं जा सकता।
5. **व्यक्तिगत विभिन्नताएं** : कक्षा में सभी छात्रों की योग्यता, रूचि तथा अभिरूचि अलग–अलग होती है जिसके शिक्षक को एक साथ पढ़ाने में समस्या आती है।
6. **अनुशासन** : नियमों का पालन करना, समय का ध्यान रखना शिक्षक की आज्ञा का पालन करना, सभी कुछ अनुशासन के अन्तर्गत आ जाता है। इन बातों के अभाव में बालक उतना नहीं सीख पाते जितना उन्हें सीख लेना चाहिए।
7. **रूचि** : जिस पाठ में बालक कक्षा में रूचि लेता है उसे वह शीघ्र ही सीख जाता है अन्यथा देर में सीखता है। अतः शिक्षक को जानना चाहिए कि कौन बालक पाठ में रूचि नहीं ले रहा है और क्यों? और भी अनेक बातें हैं जिनका सीधा सम्बन्ध विद्यार्थी से है जो सीखने में सहायक है।
8. **रूझान/अभिरूचि** : कक्षा में छात्र बुद्धिमान हो सकता है परन्तु वह किसी विषय को तो मन लगाकर पढ़ता है, जबकि दूसरे की ओर ध्यान ही नहीं देता। यह उसकी अभिरूचि पर आधारित है कि किस विषय को पढ़ना पसन्द करता है और किसको नहीं?

14.6 पाठ्यक्रम से सम्बन्धित मुद्दे

कक्षा शिक्षा और पाठ्यसहगामी क्रियाओं का अभाव पाया जाता है। कुछ विद्यालयों में केवल पाठ से ही संबंधित चीजों को पढ़ाया जाता है जबकि कला शिक्षा और पाठ्यसहगामी क्रियाएं छात्रों की सृजनशीलता को बढ़ाते हैं। जिस पाठ्यक्रम में क्रियाकलाप नहीं होंगे उनका भी बहुत फायदा नहीं होगा। कभी–कभी पाठ्यक्रम ऐसा होता है

कि जिससे छात्र केवल परीक्षा उत्तीर्ण करके अपनी डिग्री प्राप्त कर सके इससे उनमें सीखने की क्षमता विकसित नहीं होती है।

14.7 कक्षा की संरचना से संबंधित मुद्दे

1. **कक्षा का आकार** : कक्षा का आकार बहुत बड़ा नहीं होना चाहिए जिससे की उनको शिक्षक की आवाज ही ना सुनाई दे और ना ही बहुत छोटा होना चाहिए कि भीड़ जैसी स्थिति उत्पन्न हो जाये। कक्षा हवादार भी होनी चाहिए।
2. **अपर्याप्त फर्नीचर** : फर्नीचर पर्याप्त मात्रा में होने चाहिए एवं आरामदायक होना चाहिए जिससे कि सभी छात्र अच्छे तरीके से पढ़ सके।
3. **पर्याप्त शिक्षक सहायक सामग्री एवं उपकरणों की कमी** : सभी शिक्षक सहायक सामग्री जैसे चार्ट माडल, मैप, फ्लैश कार्ड इत्यादि एवं अन्य दूसरे उपकरण कक्षा शिक्षण के दौरान शिक्षक को प्रयोग में लाना चाहिए।

14.8 भाषायी विविधता वाले कक्षा–कक्ष से सम्बन्धित मुद्दे

भाषायी विविधता अथवा बहुभाषिक कक्षा का अर्थ उस कक्षा से है जहाँ अलग–अलग भाषाओं वाले बच्चे एक साथ समान शिक्षा ग्रहण करते हैं। कक्षा में अलग–अलग भाषाओं के इस्तेमाल से बच्चों को उलझन होती है। शिक्षक को बच्चों से अंतःक्रिया करते समय परेशानी महसूस होती है। इस तरह के बहुभाषिक कक्षा में शिक्षण प्रक्रिया के दौरान शिक्षक को सदैव विद्यार्थियों को अपनी मातृभाषा में बोलने के अवसर प्रदान करने चाहिए ताकि भाषाई विविधता वाली कक्षा में आने वाली समस्याओं का समाधान हो सके। बहुभाषिकता कक्षा में बच्चों की भाषाएं संसाधन के रूप में कार्य करती है।

14.9 विभिन्न क्षमता युक्त बालकों के शिक्षण से संबंधित मुद्दे

कक्षा–कक्ष में विभिन्न प्रकार की अक्षमता वाले बच्चों की आवश्यकताएं भिन्न–भिन्न होती है। प्रत्येक अक्षमता वाले बच्चों की विशिष्ट आवश्यकताओं की पहचान करके उनकी सुविधा तथा सीखने की क्रिया को सुगम बनाने के लिए कक्षा में विभिन्न प्रकार की शिक्षण सामग्री तथा उपकरणों की व्यवस्था करना आवश्यक होता है। इन बच्चों को सामान्य बच्चों के साथ एक साथ पढ़ाते समय शिक्षक को अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

निम्न में से सत्य या असत्य बताइये–

6. कक्षा में सभी छात्रों की योग्यता, रूचि तथा अभिरूचि अलग–अलग होती है। (सत्य / असत्य)
7. पाठ्यसहगामी क्रियाओं से छात्रों की सृजनशीलता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। (सत्य / असत्य)
8. कक्षा में शिक्षण के दौरान सहायक सामग्री एवं दूसरे उपकरणों का प्रयोग करना चाहिए। (सत्य / असत्य)

14.10 सारांश

एक आदर्श कक्षा में शिक्षक तथा छात्र निश्चित एवं योजनाबद्ध तरीके से शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में

सक्रिय रूप से भाग लेते हैं जिससे शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति की जाती है। वर्तमान समय में कक्षा में अध्यापक अच्छी तरह से शिक्षा प्रदान करने एवं छात्रों को प्रभावी तरीके से सीखने में कठिनाई महसूस कर रहा है। इन सभी कठिनाइयों एवं समस्याओं के लिए कक्षा कक्ष की प्रकृति, शिक्षण करने वाले अध्यापक, पढ़ाया जाने वाला पाठ्यक्रम एवं पढ़ने वाले छात्रों की प्रकृति जिम्मेदार होती है। यदि शिक्षक की अपने विषय रूचि तथा ज्ञान में कमी होती है तो उसका प्रभाव सीधा उसके शिक्षण पर पड़ता है। कभी–कभी शिक्षकों को अनेक दूसरे अतिरिक्त कार्यों में लगा दिया जाता है जिससे उनके शिक्षण पर नकारात्मक असर पड़ता है। उसी तरह छात्रों से संबंधित अनेक मुद्दे ऐसे हैं जो कि उनके सीखने की प्रक्रिया पर नकारात्मक प्रभाव डालती है। अगर कक्षा में पाठ्यक्रम के अंतर्गत पाठ्यसहगामी क्रियाओं का अभाव होता है तो शिक्षण अरूचिकर हो जाता है और छात्रों की सृजनशीलता पर भी बुरा प्रभाव पड़ता है। कक्षा की भौतिक संरचना भी अध्यापक के शिक्षण प्रक्रिया पर प्रभाव डालती है।

14.11 अभ्यास के प्रश्न

1. कक्षा में शिक्षकों से संबंधित मुद्दों का वर्णन कीजिए।
2. पाठ्यक्रम से संबंधित समस्याएं कौन–कौन सी होती हैं? उसकी विवेचना कीजिए।

14.12 चर्चा के बिन्दु

1. कक्षा–शिक्षण में मुख्य रूप से कौन–कौन सी समस्याएं आती हैं? चर्चा कीजिए।

14.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. एक कक्षा विद्यालय का वह स्थान होता है जहां शिक्षक तथा छात्र शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए योजनाबद्ध तरीके से शिक्षण अधिगम की प्रक्रिया में सक्रिय रूप से अपनी भूमिका निभाते हैं।
2. कक्षा कक्ष की समस्याओं का अर्थ कक्षा में मौजूद उन समस्याओं और परेशानियों से है जिसमें अध्यापक अच्छी प्रकार से शिक्षा देने में और छात्र उसे अच्छी तरह से सीखने में असफल रहते हैं।
3. कक्षा कक्ष की समस्याएं मनोवैज्ञानिक हो सकती हैं, जो की छात्रों एवं शिक्षक के मानसिक अवस्था पर निर्भर होती है। ये वातावरण से संबंधित होती है तथा व्यक्तिगत एवं सामूहिक हो सकती है।
4. कक्षा शिक्षण के समय शिक्षकों से संबंधित मुद्दे उनका स्वास्थ्य, आत्मविश्वास, विषय में रूचि, ज्ञान की कमी, विद्यालयी कार्यों का अतिरिक्त भार, उनकी कठोर अभिवृत्ति इत्यादि है।
5. पढ़ाई में इंटरनेट का छात्रों द्वारा अधिक प्रयोग एवं माता–पिता का स्कूल पर पूरी तरह से निर्भर होना इत्यादि है।
6. सत्य
7. असत्य
8. सत्य

14.14 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. पाल, कुलविंदर, शैक्षिक तकनीकी, नई दिल्ली : लक्ष्मी पब्लिकेशन।
2. कुलश्रेष्ठ, एस.पी. (2020), शैक्षिक तकनीकी के मूल आधार, आगरा : श्री विनोद पुस्तक मंदिर।
3. माथुर, एस.एस. (1996), शैक्षिक तकनीकी, आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर।

इकाई– 15 : शिक्षण के सूत्र, मीडिया और व्यावसायिकता के मुद्दे

इकाई की संरचना

15.1 प्रस्तावना

15.2 इकाई के उद्देश्य

15.3 शिक्षण के सूत्र

15.4 मीडिया के मुद्दे

15.4.1 श्रव्य–दृश्य सहायक सामग्री

15.4.2 इलेक्ट्रॉनिक मीडिया

15.4.3 प्रिन्ट मीडिया

15.5 व्यावसायिकता के मुद्दे

15.5.1 व्यवसाय/पेशे के मानदंड

15.5.2 पेशेवर शिक्षक की विशेषताएँ

15.6 सारांश

15.7 अभ्यास के प्रश्न

15.8 चर्चा के बिन्दु

15.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

15.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

15.1 प्रस्तावना

शिक्षण की प्रक्रिया एक जटिल प्रक्रिया है। विद्यार्थियों के व्यवहार में वांछित परिवर्तन लाने के उद्देश्य से एक पेशेवर शिक्षक को प्रभावशाली शिक्षण करना पड़ता है। एक कुशल एवं पेशेवर शिक्षक प्रभावशाली शिक्षण हेतु अपनी शिक्षण प्रक्रिया में विभिन्न शिक्षण सिद्धांतों, शिक्षण–सूत्रों के साथ–साथ विभिन्न प्रकार के मीडिया का भी प्रयोग करता है। एक शिक्षक को सफलतापूर्वक शिक्षण करने हेतु शिक्षण के विभिन्न सिद्धांतों, शिक्षण–सूत्रों के साथ–साथ विभिन्न प्रकार के मीडिया का समुचित प्रयोग करना अवश्य आना चाहिए। मनोवैज्ञानिकों, शोधकर्ताओं एवं शिक्षाशास्त्रियों ने प्रभावशाली शिक्षण हेतु विभिन्न सिद्धान्तों, शिक्षण–सूत्रों तथा मीडिया के समुचित प्रयोग पर बल दिया है। इस इकाई में हम एक पेशेवर शिक्षक को अपने शिक्षण में जिन शिक्षण–सूत्रों का प्रयोग करना चाहिए तथा उसे मीडिया एवं प्रोफेशनलिज्म (व्यावसायिकता) के जिन मुद्दों की जानकारी होना अति आवश्यक है, उसके बारे में विस्तृत अध्ययन करेंगे।

15.2 इकाई के उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो जाएंगे कि–

1. प्रमुख शिक्षण–सूत्रों के नाम बता सकेंगे।
2. विभिन्न शिक्षण–सूत्रों का प्रयोग अपने शिक्षण को प्रभावशाली बनाने में कर सकेंगे।
3. रूसो के शिक्षा दर्शन पर आधारित शिक्षण–सूत्र का वर्णन कर सकेंगे।
4. मीडिया को परिभाषित कर सकेंगे।
5. शिक्षण में टेलीवीजन / वीडियो कार्यक्रम के योगदान को स्पष्ट कर सकेंगे।

6. व्यावसायिकीकरण का अर्थ बता सकेंगे।

7. पेशेवर शिक्षक की विशेषताएँ बता सकेंगे।

15.3 शिक्षण के सूत्र

मनोवैज्ञानिकों, अध्यापकों, शोधकर्ताओं एवं शिक्षाशास्त्रियों ने अपने–अपने अनुभवों के आधार पर प्रभावशाली शिक्षण हेतु कुछ सामान्य विचार एवं शिक्षण–कार्य करने के तरीकों को बतलाया है । प्रभावशाली एवं वैज्ञानिक शिक्षण में सहायक इन विचारों अथवा कार्य करने के तरीकों / निर्णयों को ही 'शिक्षण–सूत्र' कहा जाता है। ये 'शिक्षण–सूत्र' सार्वकालिक, सार्वभौमिक रूप से स्वीकृत तथा विश्वसनीय हैं। कुछ प्रमुख 'शिक्षण–सूत्रों' का वर्णन निम्नवत है–

1. **ज्ञात से अज्ञात की ओर (From known to Unknown):**

'ज्ञात से अज्ञात की ओर' शिक्षण सूत्र के अनुसार शिक्षण करते समय जो कुछ विद्यार्थी जानता है अर्थात् जो विद्यार्थी का पूर्व ज्ञान है उसी के आधार पर विद्यार्थियों को नवीन ज्ञान प्रदान करना चाहिये। विद्यार्थियों को सबसे पहले उन बातों को बताना चाहिए जो वे जानते हैं, फिर उसी के आधार उन्हें नवीन या अज्ञात ज्ञान को प्रदान करना चाहिए। एक अच्छा शिक्षक सदैव अपने शिक्षण के दौरान नवीन ज्ञान को विद्यार्थियों के पूर्व ज्ञान पर से जोड़कर पढ़ाता है।

2. **सरल से जटिल की ओर (From Simple to Complex):**

शिक्षण के पूर्व पाठ–योजना बनाते समय शिक्षक को चाहिये कि वे पाठ्यवस्तु विश्लेषण के आधार पर पाठ्य सामग्री को संगठित कर लें। सरल प्रत्यय को पहले पढ़ाना चाहिए और क्रमानुसार कठिन या जटिल प्रत्ययों को उनके बाद पढ़ाया जाना चाहिए। 'सरल से जटिल की ओर' शिक्षण सूत्र के प्रयोग करने से शिक्षण प्रक्रिया में विद्यार्थियों की रुचि बनी रहती है, क्योंकि जब छात्र सरल प्रत्यय को सीख लेते हैं, तो उसके बाद कठिन प्रत्यय को भी वे आसानी से समझ जाते हैं।

3. **अनिश्चित से निश्चित की ओर (From Indefinite to Definite):**

जैसे–जैसे विद्यार्थी परिपक्व होते हैं, वैसे–वैसे ही उनके अस्पष्ट तथा अनिश्चित विचारों में नये–नये अनुभव मिलने के कारण स्पष्टता तथा निश्चितता आने लगती है। एक अच्छे शिक्षक को चाहिए कि वह अपने प्रभावशाली शिक्षण से विद्यार्थियों की धुंधली तथा अनिश्चित धारणाओं तथा विचारों को निश्चितता प्रदान करे।

4. **अनुभूत से युक्तियुक्त की ओर (From Empirical to Rational):**

एक अच्छे शिक्षक को चाहिए कि वह शिक्षण–अधिगम प्रक्रिया का प्रारम्भ विद्यार्थियों के अनुभूत ठोस अनुभवों से करे, क्योंकि 'ठोस अनुभूत सत्यों की अनुभूति के बाद ही युक्तियुक्त चिन्तन आता है ।' शिक्षण के दौरान शिक्षकों को अपने विद्यार्थियों के समक्ष पहले प्रत्यक्ष अनुभव तथा उदाहरण प्रस्तुत करने चाहिये, और उसके पश्चात ही विद्यार्थियों के इन प्रत्यक्ष अनुभवों तथा उदाहरणों को तर्कयुक्त बनाने का प्रयास उसके द्वारा किया जाना चाहिए।

5. **मूर्त से अमूर्त की ओर (From Concrete to Abstract):**

बालक पहले मूर्त (स्थूल) वस्तुओं से परिचित होता है, स्थूल वस्तुओं के बारे में जानता और समझता है, इसके पश्चात् ही वह इनसे सम्बन्धित सूक्ष्म (अमूर्त) विचारों को ग्रहण करता है, क्योंकि स्थूल अथवा मूर्त तथ्य सरल, वस्तुनिष्ठ तथा बोधगम्य होते हैं, जबकि उसके विपरीत अमूर्त तथ्य काल्पनिक, कठिन, जटिल व भ्रामक होते हैं । अतः एक अच्छे शिक्षक को अपने शिक्षण के प्रारम्भ में विद्यार्थियों को पहले सरल तथा मूर्त व स्थूल पदार्थों के विषय में ज्ञान प्रदान करना चाहिये, उसके पश्चात ही उन्हें अमूर्त या सूक्ष्म तथ्यों के बारे में जानकारी प्रदान करना चाहिए।

6. **विश्लेषण से संश्लेषण की ओर (From Analysis to Synthesis):**

जब कोई विद्यार्थी किसी समस्या का विश्लेषण करता है तभी उसे उस समस्या के बारे में स्पष्ट तथा निश्चित ज्ञान प्राप्त होता है। विश्लेषण द्वारा प्राप्त सूचनाओं को जोड़कर उसे समग्र रूप से समझने की प्रक्रिया ही संश्लेषण कहलाती है। शिक्षक को अपने शिक्षण के दौरान सर्वप्रथम विचारों का विश्लेषण करके विद्यार्थियों को ज्ञान प्रदान करना चाहिए। उसके उपरान्त संश्लेषण की प्रक्रिया द्वारा प्रदत्त ज्ञान को स्थायित्व प्रदान करना चाहिए। विश्लेषण व संश्लेषण दोनों ही एक–दूसरे की पूरक प्रक्रिया है। दोनों ही प्रक्रिया विद्यार्थियों को स्पष्ट, निश्चित तथा सुव्यवस्थित ज्ञान प्रदान करने में सहायक है।

7. प्रत्यक्ष से अप्रत्यक्ष की ओर (From Direct to Indirect or Seen to Unseen):

प्रभावशाली शिक्षण हेतु शिक्षक को सदैव विद्यार्थियों को पहले उन वस्तुओं का ज्ञान प्रदान करना चाहिए जो उनके सामने प्रत्यक्ष रूप से उपस्थित हो। उसके उपरान्त ही उन वस्तुओं का ज्ञान प्रदान करना चाहिए जो उनके सामने प्रत्यक्ष रूप से मौजूद नहीं हैं अथवा जिन्हें विद्यार्थी प्रत्यक्ष रूप से देख नहीं सकता। विद्यार्थी को सर्वप्रथम वर्तमान में उपस्थित वस्तुओं का ज्ञान प्रदान करना चाहिए उसके उपरान्त ही उसे भूत अथवा भविष्य का ज्ञान प्रदान करना चाहिए।

8. विशिष्ट से सामान्य की ओर (From Particular to General):

शिक्षक को अपने शिक्षण के दौरान विद्यार्थियों के समक्ष सर्वप्रथम विशिष्ट उदाहरण प्रस्तुत करना चाहिए और उसके उपरान्त उन्हीं उदाहरणों/दृष्टान्तों के माध्यम से विद्यार्थियों से सामान्य सिद्धान्त या सामान्य नियम निकलवाना चाहिए। एक अच्छा शिक्षक प्रभावशाली शिक्षण हेतु सर्वप्रथम विद्यार्थियों के समक्ष विशिष्ट तथ्य, उदाहरण एवं दृष्टान्त प्रस्तुत करता है और उसके उपरान्त उन्हीं तथ्यों, उदाहरणों, एवं दृष्टान्तों के आधार पर विद्यार्थियों को सामान्य नियम अथवा सामान्य सिद्धान्त तक पहुँचने के लिये प्रोत्साहित करता है।

9. मनोवैज्ञानिक से तार्किक या तर्कात्मक क्रम की ओर (From Psychological to Logical):

शिक्षण हेतु शिक्षण प्रक्रिया मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों के आधार पर की जानी चाहिए। बालक की रुचि, योग्यताओं, जिज्ञासा, आवश्यकता व परिपक्वता के अनुसार ही पाठ्यक्रम, शिक्षण विधियों व शिक्षण सहायक सामग्री का प्रयोग करना चाहिये। जबकि तर्कात्मक विधि के अन्तर्गत ज्ञान/पाठ को तर्कसम्मत ढंग से विभिन्न वर्गों में विभाजित किया जाता है और एक–एक करके विद्यार्थियों के समक्ष उसे प्रस्तुत किया जाता है। प्रभावी शिक्षण हेतु शिक्षक को चाहिये कि वह पहले मनोवैज्ञानिक ढंग से शिक्षण आयोजित करे और फिर धीरे–धीरे उनके मानसिक विकास के अनुकूल ज्ञान को तर्कसम्मत क्रमानुसार शिक्षण में आगे को लेकर चले।

10. आगमन से निगमन की ओर (From Induction to Deduction):

आगमन विधि के अन्तर्गत प्रारम्भ में विद्यार्थियों के समक्ष उदाहरण प्रस्तुत किये जाते हैं और उसके उपरान्त नियमों को निकाला जाता है, जबकि निगमन विधि के अन्तर्गत सर्वप्रथम नियम प्रस्तुत किये जाते हैं, और उसके उपरान्त उदाहरणों की सहायता से उन नियमों के सत्यता की परख की जाती है। आगमन शिक्षण विधि नये ज्ञान की खोज में सहायक होता है जबकि निगमन शिक्षण विधि इन खोजों के फलस्वरूप प्राप्त होता है। एक उत्तम शिक्षक अपना शिक्षण आगमन से प्रारम्भ करता है और निगमन पर समाप्त करता है।

11. पूर्ण से अंश की ओर (From Whole to Part):

'पूर्ण से अंश की ओर' शिक्षण सूत्र के अनुसार शिक्षण में पहले विषय–वस्तु को पूर्ण (समग्र) रूप में विद्यार्थियों के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है और उसके पश्चात् धीरे–धीरे उसके विभिन्न भागों के विषय में ज्ञान प्रदान किया जाता है। इस शिक्षण सूत्र का प्रयोग करके शिक्षण करने से विद्यार्थी ज्यादा प्रभावशाली ढंग से सीखते हैं, परिणामस्वरूप 'पूर्ण / समग्र' का परिमाण विद्यार्थी के ज्ञान की वृद्धि के साथ–साथ बढ़ता चला जाता है। उदाहरणार्थः किसी कविता को पढ़ाने हेतु शिक्षक सर्वप्रथम विद्यार्थी

को कविता पूर्ण रूप में याद कराता है और उसके उपरान्त कविता की एक–एक लाइन का धीरे–धीरे अर्थ स्पष्ट करता है।

12. **प्रकृति का अनुसरण (Follow Nature):**

'प्रकृति का अनुसरण' शिक्षण सूत्र का आधार रूसो का शिक्षा दर्शन है। रूसो के शिक्षा दर्शन के अनुसार बालक को शिक्षा प्राकृतिक ढंग से प्रदान की जानी चाहिए। बालक के शिक्षण में किसी भी प्रकार की कृत्रिमता नहीं होनी चाहिए। विद्यार्थी को उसके शारीरिक एवं मानसिक स्तर के अनुसार तथा उसे प्रकृति के निकट लाकर ही शिक्षा प्रदान करनी चाहिए। बच्चों को उनके शारीरिक एवं मानसिक स्तर के अनुसार ही शिक्षा दी जानी चाहिए। उन्हें ऐसा कोई भी कार्य नहीं सीखाया जाना चाहिए जो उनकी क्षमताओं के अनुकूल न हो, अन्यथा उनका समस्त व्यक्तित्व कुण्ठित हो सकता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

1. 'शिक्षण–सूत्र' किसे कहा जाता है?

....

....

2. किन्हीं पाँच प्रमुख 'शिक्षण–सूत्रों' के नाम लिखिए।

....

....

3. किस शिक्षण सूत्र का आधार रूसो का शिक्षा दर्शन है?

....

....

15.4 मीडिया के मुद्दे

मीडिया को हम एक ऐसी वस्तु के रूप में परिभाषित कर सकते हैं, जिसका उपयोग शिक्षक अपने शिक्षण कार्य हेतु करता है अथवा जो शिक्षार्थियों को विशिष्ट शिक्षण और सीखने के परिणामों को प्राप्त करने हेतु उपयोग करने के लिए दिया जाता है। मीडिया के अन्तर्गत केवल उपकरण या चित्र ही नहीं आते हैं, बल्कि इसमें कई अन्य प्रकार के सीखने के अनुभव भी शामिल होते हैं। जन संचार मीडिया अर्थात् प्रिन्ट मीडिया, इलेक्ट्रॉनिक मीडिया, डिजिटल मीडिया अथवा सोशल मीडिया का प्रभाव शिक्षा के क्षेत्र में दिन–प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है। शिक्षा के प्रति लोगों को जागरूक करने, शैक्षिक अवसरों को बढ़ावा देने आदि में मीडिया का महत्वपूर्ण योगदान है। शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षण सहायक सामग्री के रूप में मीडिया का उपयोग किया जा रहा है। वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में केवल 'चाक और बात' पर आधारित कक्षा शिक्षण प्रभावी नहीं है। अब विद्यालय, महाविद्यालय एवं विश्वविद्यालय के शिक्षक अपनी शिक्षण–प्रक्रिया को प्रभावी एवं रुचिकर बनाने के उद्देश्य से डिजिटल एवं सोशल मीडिया का उपयोग कर रहे हैं।

15.4.1 श्रव्य–दृश्य सहायक सामग्री

श्रव्य सामग्री अथवा श्रव्य साधन से अभिप्राय उन साधनों से है, जिनमें श्रवणेन्द्रिय का प्रयोग किया

जाता है। जैसे– ट्रान्जिस्टर, रेडियो, टेपरिकॉर्डर, भाषण, वार्ता, लिंग्वाफोन, ग्रामोफोन आदि। इस प्रकार की सहायक सामग्री में आवाज के द्वारा विद्यार्थी को समस्त सूचनाएं प्रदान की जाती हैं। सामग्री की आवाज विद्यार्थियों की कल्पना शक्ति को उद्दीप्त करती हैं। दृश्य सामग्री अथवा दृश्य साधन से अभिप्राय उन साधनों से है, जिनमें दृश्य इन्द्रिय अर्थात आँख का प्रयोग किया जाता है। जैसे– चार्ट, नक्शा, मॉडल, स्लाइड, फिल्मस्ट्रिप आदि। विद्यार्थी दृश्य सहायक सामग्री को अपनी आँखों से देखकर सूचनाएं प्राप्त करता है।

श्रव्य–दृश्य सहायक सामग्री को 'बहु–संवेदी सामग्री' भी कहा जाता है क्योंकि इनके माध्यम से अध्यापक एक से अधिक संवेदी नेटवर्क का प्रयोग कर अपने शिक्षण को प्रभावी बनाता हैं। कक्षा में श्रव्य–दृश्य सहायक सामग्री का प्रयोग करने से विद्यार्थियों की उपलब्धि में वृद्धि होती है। श्रव्य–दृश्य सहायक सामग्री विद्यार्थियों की अधिगम प्रक्रिया को प्रोत्साहित करते हैं। यह कक्षा में अन्तर्वैयक्तिक सम्प्रेषण का अवसर प्रदान करती है, विद्यार्थियों को यथार्थवादी अनुभव प्रदान करती है, ज्ञान को मूर्त रूप में प्रदान करने में सहायता प्रदान करती है।

श्रव्य–दृश्य सहायक सामग्री को अधिक प्रभावी बनाने के लिए निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना चाहिए–

1. विद्यार्थी की आवश्यकता एवं उसकी परिपक्वता के स्तर के अनुसार ही श्रव्य – दृश्य सहायक सामग्री का चयन करना चाहिए।
2. श्रव्य–दृश्य सहायक सामग्री विद्यार्थी को पढ़ाई जा रही विषय सामग्री से सम्बन्धित होना चाहिए।
3. श्रव्य–दृश्य सहायक सामग्री विद्यार्थी के संवेदी अंगों को जगाकर उसे कक्षा में भागीदारी करने को प्रोत्साहित करने में सक्षम होना चाहिए।
4. सहायक सामग्री को विद्यार्थी के वास्तविक जीवन के उदाहरणों से सम्बन्धित होना चाहिए।
5. कक्षा–शिक्षण के दौरान उपयुक्त समय पर श्रव्य–दृश्य सहायक सामग्री का प्रयोग किया जाना चाहिए।

15.4.2 इलेक्ट्रॉनिक मीडिया

वर्तमान समय में इलेक्ट्रॉनिक मीडिया जैसे वीडियो, रेडियो, टेलीविजन आदि का प्रयोग शिक्षण–अधिगम की प्रक्रिया में प्रभावी ढंग से किया जा रहा है। इलेक्ट्रॉनिक माध्यम इतने अधिक प्रभावी हैं कि लोग बिना किसी सत्यापन के इनकी बातों को सुनते हैं। शिक्षण–अधिगम तथा प्रशिक्षण कार्यक्रम में भी इलेक्ट्रॉनिक मीडिया का प्रभावी ढंग से प्रयोग किया जा रहा है। इलेक्ट्रॉनिक माध्यम विद्यार्थियों एवं लोगों को दुनिया के विभिन्न विषयों, संस्कृतियों तथा विषय वस्तुओं के बारे में जानने में मदद करती है।

रेडियो/ट्रान्जिस्टर

मौखिक संचार का एक अच्छा माध्यम रेडियो/ ट्रान्जिस्टर है। इसके माध्यम से शिक्षक विद्यार्थियों तक नयी ध्वनियाँ, कविताएँ, कहानियाँ, शैक्षिक नाटक, कविताएँ, महापुरुषों की जीवनियाँ, उनके प्रेरक प्रसंग, नवीन खोजें एवं आविष्कार, सामान्य–ज्ञान आदि को संप्रेषित करता है। रेडियो/ट्रान्जिस्टर ने शिक्षा के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। रेडियो/ ट्रान्जिस्टर अपनी तात्कालिकता, सुगमता तथा सहजता के गुणों के कारण ग्रामीण भारत में एक सफलता के रूप में उभरी है। एफ.एम. रेडियो ने ग्रामीण तथा शहरी दोनों क्षेत्रों में अपनी पहुँच बनाई है। रेडियो/ ट्रान्जिस्टर जन संचार का एक पसंदीदा इलेक्ट्रॉनिक माध्यम रहा है क्योंकि बुद्धजीवी के साथ–साथ जनसामान्य भी इसे समानरूप में आसानी से समझ पाते हैं। इसके माध्यम से औपचारिक, अनौपचारिक तथा निरौपचारिक तीनों ही प्रकार की शिक्षा प्रदान करने में मदद मिलती है।

रेडियो प्रसारण मुख्य रूप से दो प्रकार का होता है–

I. **सामान्य रेडियो प्रसारण**:– सामान्य रेडियो प्रसारण के अन्तर्गत देश–विदेश के समाचार, महत्वपूर्ण घटनाएँ, सांस्कृतिक कार्यक्रम आदि आते हैं। इन प्रसारणों से विद्यार्थियों को सामान्य जानकारी मिलती है और उनका ज्ञान भी बढ़ता है।

II. **शैक्षिक रेडियो प्रसारण**:– शैक्षिक रेडियो प्रसारण विद्यालय के विभिन्न पाठ्यक्रमों पर आधारित होते

हैं। ये कार्यक्रम विषय–विशेषज्ञों द्वारा तैयार किये जाते हैं। इनके द्वारा विद्यार्थियों को उनके पाठ्यक्रम से सम्बन्धित विभिन्न विषयों / प्रकरणों पर प्रत्यक्ष रूप से ज्ञान प्राप्त होता है। कक्षा में रेडियो प्रसारण को रिकॉर्ड किया जा सकता है, तथा आवश्यकतानुसार विभिन्न अंशों को विद्यार्थियों को पुनः सुनाया भी जा सकता है।

रिकॉर्डर

रिकॉर्डर अथवा टेप–रिकॉर्डर का उपयोग शिक्षक द्वारा अपने शिक्षण कार्य को प्रभावशाली बनाने के लिए किया जा सकता है। शिक्षक द्वारा विषय–विशेषज्ञों के व्याख्यान को रिकॉर्ड करके अपनी कक्षा में विद्यार्थियों को आवश्यकतानुसार प्रस्तुत किया जाना चाहिए। शिक्षक पशु–पक्षियों की आवाज/ बोलियाँ, अक्षरों एवं शब्दों के सही उच्चारण आदि को भी रिकॉर्ड करके शिक्षण–अधिगम की प्रक्रिया में प्रयोग कर सकता है। रिकॉर्डिंग हेतु शिक्षक टेप–रिकॉर्डर अथवा मोबाइल फोन के रिकॉर्डर एवं अन्य उपकरण का प्रयोग कर सकते हैं।

टेलीवीजन तथा वीडियो

टेलीवीजन अथवा वीडियो कार्यक्रम देखने में विद्यार्थियों को एक से अधिक ज्ञानेन्द्रि का प्रयोग करना पड़ता है। रेडियो द्वारा विद्यार्थी उच्च कोटि के शिक्षाशास्त्रियों एवं कलाकारों की केवल वाणी ही सुनता है जबकि टेलीवीजन अथवा वीडियो कार्यक्रम द्वारा विद्यार्थी उन सबकी आकृतियाँ भी देखता है, तथा उन्हें विभिन्न कार्यक्रमों में भाग लेते हुए भी देखता है। इस प्रकार से टेलीवीजन अथवा वीडियो कार्यक्रम के द्वारा विद्यार्थियों के कान और आँख दोनों ही ज्ञानेन्द्रियों का विकास होता है। टेलीवीजन अथवा वीडियो कार्यक्रम का शिक्षण में प्रमुख योगदान निम्नलिखित है–

i. विषय–विशेषज्ञों द्वारा कठिन एवं जटिल प्रकरणों पर तैयार किए गए पाठ, को कम खर्च में देश एवं विश्व के कोने–कोने में विद्यार्थियों तक पहुँचाया जा सकता है।

ii. शोध एवं प्रयोग आधारित नवीनतम ज्ञान तथा सम्बन्धित सूचनाओं को शिक्षकों तथा विद्यार्थियों तक पहुँचाया जा सकता है।

iii. टेलीवीजन अथवा वीडियो के मनोरंजन, खेलकूद, सामाजिक एवं सांस्कृतिक कार्यक्रमों द्वारा विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का विकास करने तथा उनके अभिवृत्ति का निर्माण करने में सहायता मिलती है।

iv. राष्ट्रीय पर्व जैसेः स्वतन्त्रता दिवस, गणतन्त्र दिवस एवं विभिन्न महापुरूषों के जन्म दिन तथा अन्य महत्वपूर्ण पर्व और त्योहारों से सम्बन्धित कार्यक्रमों द्वारा विद्यार्थियों में राष्ट्रीय एकता, देश–प्रेम, प्यार, त्याग की भावना आदि का विकास होता है।

v. विभिन्न विषयों जैसेः सामाजिक विज्ञान, विज्ञान, गणित, योग, भाषा, संगीत, नृत्य आदि की आधुनिकतम नवीनतम तकनीकों के बारे में शिक्षकों तथा विद्यार्थियों को जानकारी प्राप्त होती है।

vi. विदेशों अथवा अन्य शहरों में जाये बिना ही विद्यार्थियों को देश–विदेश के प्रसिद्ध शहरों, इमारतों, उद्योगों तथा वहां की संस्कृति, रहन–शहन, परम्परा आदि के बारे में स्पष्ट ज्ञान प्राप्त हो जाता है।

vii. जो बच्चे किसी कारण से विद्यालय नहीं जा पाते हैं, उन्हें भी टेलीवीजन अथवा वीडियो कार्यक्रम द्वारा शैक्षिक अवसर प्राप्त होता है।

viii. टेलीवीजन अथवा वीडियो कार्यक्रम के द्वारा शिक्षकों तथा विद्यार्थियों को ऐतिहासिक, राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, वैज्ञानिक, नैतिक घटनाओं की विस्तृत जानकारी प्राप्त हो जाती है।

15.4.3 प्रिन्ट मीडिया

प्रिन्ट मीडिया के अन्तर्गत मुद्रित पाठ्य–पुस्तकें, लेख, समाचार पत्र आदि आते हैं। विद्यार्थियों के पाठ्यक्रम के अनुसार मुद्रित पाठ्य–पुस्तकें विद्यार्थियों के अधिगम का प्रमुख स्रोत होता है। समाचार–पत्र तथा विभिन्न राष्ट्रीय–अन्तर्राष्ट्रीय पत्र–पत्रिकाएँ नवीनतम जानकारी के प्रमुख स्रोत हैं। स्थानीय, राज्य, राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के मुद्दों की जानकारी तथा उससे सम्बन्धित ज्ञान प्राप्त करने हेतु प्रिन्ट मीडिया सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्रोत है। आजकल मोबाइल, लैपटॉप, कंप्यूटर आदि पर भी इन्टरनेट के द्वारा लोग प्रिन्ट मीडिया के

स्रोतों से लाभ उठाने लगे हैं। विद्यार्थियों में पठन रूचि को विकसित करने में प्रिन्ट मीडिया सहायक होते हैं। विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं एवं समाचार–पत्रों के लेखों, स्तंभों, समाचारों आदि का उपयोग करके शिक्षा की गुणवत्ता को बढ़ाया जा सकता है। इनके द्वारा विद्यार्थियों को राजनीति, वाणिज्य, कानून, जनसम्पर्क आदि विषयों में विशेषज्ञता प्राप्त करने का अवसर भी मिलता है। पुस्तकें, शोध–पत्र, लेख, समाचार–पत्र आदि से हमें सत्यापित सूचना प्राप्त होती हैं, क्योंकि इनका प्रकाशन करने के पूर्व प्रकाशक शोध और पुष्टि करते हैं, और उसके उपरान्त ही प्रकाशन करते हैं। प्रिन्ट मीडिया ने शिक्षा के क्षेत्र में अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। यह विद्यार्थियों को समग्र रूप से शिक्षित करती है, उनके मस्तिष्क को प्रबुद्ध बनाती है, उनमें तर्कसंगतता, नैतिकता तथा सामाजिकता के गुणों का विकास भी करती है। इस प्रकार से प्रिन्ट मीडिया शिक्षण–अधिगम की प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

4. 'मीडिया को परिभाषित कीजिए।

....

....

5. शिक्षण में टेलीविजन/वीडियो कार्यक्रम के कोई दो योगदान लिखिए।

....

....

15.5 व्यावसायिकता के मुद्दे

व्यावसायिक विकास वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक व्यक्ति अपने पूरे कार्यकाल में व्यावसायिक सेवाओं की गुणवत्ता और प्रासंगिकता बनाए रखता है। व्यावसायिकीकरण से अभिप्राय एक सामाजिक–सेवा–उन्मुख व्यवसाय को उन्नत करने की प्रक्रिया से है, ताकि इसे अधिक स्वायत्त, अधिक विकास–उन्मुख और साथ ही अधिक जवाबदेह बनाया जा सके। चूंकि शिक्षक – शिक्षा शिक्षण का एक घटक है, और शिक्षण अनिवार्य रूप से एक समाज–सेवा–उन्मुख पेशा है और साथ ही साथ शिक्षण और शिक्षक – शिक्षा के बीच एक सहक्रियात्मक संबंध भी मौजूद है, इसलिए इन दोनों को पेशेवर बनने की आवश्यकता है। वर्तमान बदलते परिदृश्य में शिक्षकों को भी पेशेवर अप्रचलन से बचने के लिए जीवन भर अपने ज्ञान, कौशल और दक्षताओं को निरंतर अद्यतन और उन्नत करने की आवश्यकता है। समकालीन समाज में शिक्षकों की भूमिका विविध और बहुआयामी तथा निरंतर बदलती रहती है। शिक्षक अपनी बदलती भूमिका को कुशलतापूर्वक और प्रभावी ढंग से तभी निभा सकते हैं जब वे अपने पेशेवर जीवन को अद्यतन और उन्नत करते रहें।

15.5.1 व्यवसाय/पेशे के मानदंड

फ्लेक्सर (1915) ने एक प्रोफेशन/ पेशे के छह मानदंड प्रस्तावित किए:–

1. इसका एक मजबूत बौद्धिक घटक या आधार होता है।
2. यह बृहत व्यक्तिगत जिम्मेदारी होती है।
3. इसे अर्जित करना होगा–यद्यपि यह सिद्धांत आधारित है, परन्तु इसकी तकनीकें सीखी जा सकती हैं।
4. यह अभ्यास उन्मुख होता है।
5. यह आंतरिक रूप से सुदृढ़ रूप से संगठित होती है।

6. यह परोपकार की प्रबल भावना से प्रेरित होती है ।

शिक्षक की व्यावसायिकता विषय–वस्तु को समझने की क्षमता से कहीं आगे तक फैली हुई है; शिक्षक को यह पता लगाना चाहिए कि क्या वह विद्यार्थियों तक प्रभावी तरीके से पहुंच रहा है ? एक शिक्षक को अपने अध्ययन में सक्षम होना चाहिए, प्रशासन और अभिभावकों की निगरानी में अच्छा प्रदर्शन करना चाहिए, साथ ही गुणवत्तापूर्ण संचार की सुविधा के लिए अच्छा आचरण बनाए रखना चाहिए।

सरल शब्दों में कहें तो, एक पेशे के रूप में शिक्षण कभी भी पर्याप्त नहीं होगा यदि हम शिक्षकों की व्यावसायिक नैतिकता के आलोक में व्यावसायिक विकास पर ध्यान केंद्रित नहीं करते हैं, क्योंकि एक पेशे के रूप में शिक्षण का मुख्य जोर इसी पर है। शिक्षक का पेशा वर्तमान संकटग्रस्त समाज को भविष्य के आदर्शलोक में बदलने की तैयारी करता है। शिक्षक एक सामंजस्यपूर्ण समाज का निर्माता है। बच्चों का सर्वांगीण विकास शिक्षकों की व्यावसायिक योग्यता और दक्षता पर बहुत निर्भर करता है।

15.5.2 पेशेवर शिक्षक की विशेषताएँ

एक शिक्षक अपनी कक्षा तथा अपने स्कूल समुदाय में शैक्षिक नैतिकता का प्रदर्शन कर सके तथा वह वास्तव में एक पेशेवर शिक्षक बन सके उसके लिए उसके व्यवहार में कुछ विशेषताएँ होनी चाहिए। कम से कम निम्न पाँच व्यावहारिक तरीके (5 पी) प्रत्येक शिक्षक में अवश्य होने चाहिए–

1. सहभागी बनें

एक शिक्षक के अन्दर सहभागिता का गुण होना अतिआवश्यक है। शिक्षक द्वारा सहभागितापूर्ण बनाए गए ये रिश्ते अभिभावकों/माता–पिता, विद्यार्थियों, कर्मचारियों और सहकर्मियों का विश्वास जीतने में मदद करते हैं जो एक पेशेवर होने के लिए मौलिक हैं। इन भरोसेमंद रिश्तों का परिणाम यह होता है कि पेशेवर स्कूल समुदाय के साथ गहराई से जुड़ जाता है। इस प्रकार शिक्षक का यह व्यवहार ऐसा माहौल तैयार करता है जो सीखने को अधिकतम करता है और विद्यार्थियों के उपलब्धि को बढ़ाता है।

भागीदारी के माध्यम से शिक्षा में पेशेवर शिक्षक बनने का एक और तरीका सहयोग और पेशेवर विकास को महत्व देना और तलाशना है। पेशेवर शिक्षक अपने समय को महत्व देते हैं और विचारों के प्रति खुले रहते हैं। वे अन्य शिक्षकों से अपने प्रति प्रतिपुष्टि/प्रतिक्रिया प्राप्त करके उसके अनुसार अपने व्यावसायिक कुशलता में वृद्धि करते हैं। पेशेवर शिक्षक हमेशा कुछ नया सीखने के लिए प्रतिबद्ध रहता है।

विद्यालय प्रशासन को पेशेवर विकास हेतु प्रत्येक शिक्षक को नियमित अवसर प्रदान करना चाहिए। प्रत्येक शिक्षक को भी व्यक्तिगत रूप से नियमित एक विद्यार्थी बनकर अपना व्यक्तिगत और व्यावसायिक करना चाहिए। शिक्षक को अपने व्यक्तिगत और व्यावसायिक विकास हेतु उपलब्ध संसाधनों का अधिकतम प्रयोग करना चाहिए। उसे अपने विषय से सम्बन्धित अधिक से अधिक पाठ्य–पुस्तकों, सन्दर्भ पुस्तकों, पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित लेखों आदि का नियमित अध्ययन करते रहना चाहिए। वह पोडकास्ट्स, ब्लॉग्स, मल्टीमीडिया, सोशल मीडिया आदि के माध्यम से भी अपने को अद्द्तन बना सकता है। उसे अपने अनुशासन से सम्बन्धित पेशेवर संघों से भी जुड़े रहना चाहिए साथ ही उसकी सदस्यता भी ग्रहण करना चाहिए। ऑफलाइन तथा ऑनलाइन माध्यम से आयोजित होने वाले विभिन्न राष्ट्रीय एवं अन्तराष्ट्रीय सेमिनारों, कांफ्रेंसों, कार्यशालाओं, अभिविन्यास कार्यक्रमों, पुनश्चर्या कार्यक्रमों, प्रशिक्षणों आदि में प्रतिभाग करके शिक्षक को अपना विकास नियमित रूप से करना चाहिए।

2. सकारात्मक बनें

एक पेशेवर शिक्षक अपने आस–पास के माहौल पर हमेशा ध्यान देता है। पेशेवर शिक्षक को अपने विद्यार्थियों का एक अच्छा पथ–प्रदर्शक, निर्देशक तथा परामर्शदाता होना चाहिए। पेशेवर शिक्षक विद्यालय तथा कक्षा में अनुशासन बनाकर रखता है। वह किसी भी आधार पर किसी भी विद्यार्थी के साथ कोई भेदभाव नहीं करता है। वह यह मानता है कि सभी विद्यार्थियों के अन्दर योग्यता है, वे सीख सकते हैं और सफल हो सकते हैं। शिक्षक के अन्दर आवश्यकतानुसार समायोजन करने की भी योग्यता होती है। एक पेशेवर शिक्षक अपने संबंधों में एक स्वस्थ सीमाएँ रखता है। उसके सम्बन्ध व्यावसायिक होते हैं अर्थात् उसके सम्बन्ध शिक्षाप्रद

सम्बन्ध होते हैं और वह कभी भी गोपनीय जानकारी साझा नहीं करता है। एक प्रोफेशनल शिक्षक शीघ्र सुनता है और कम बोलता है, लेकिन जो कुछ भी बोलता है, वह शैक्षिक तथा तर्कपूर्ण होता है।

3. सीखने के लिए तैयार रहें

एक पेशेवर शिक्षक आजीवन विद्यार्थी बनकर सीखता रहता है। उसके अन्दर हमेशा ज्ञान और विकास की भूख होती है। ज्ञान के भण्डार और तकनीकि में नित्य हो रहे वृद्धि और विकास से अपने आप को अद्यतन करते हुए, अपने व्यवसाय को बेहतर बनाने के लिए शिक्षक को आजीवन सीखते रहना चाहिए। पेशेवर शिक्षक पृष्ठपोषण का हमेशा स्वागत करता है। विद्यार्थियों, शिक्षकों, शैक्षिक प्रशासकों तथा समाज से प्राप्त पृष्ठपोषण के आधार पर पेशेवर शिक्षक अपने व्यवहार एवं शिक्षण कौशल में सकारात्मक परिवर्तन लाता है।

4. समय पाबंद बनें

पेशेवर शिक्षक के अन्दर समयनिष्ठता का मूल्य होता है। उनके अनुसार समय से पाँच मिनट पहले पहुँचना ही समय पर पहुँचना होता है। समय की पाबन्दी, समय से पहले पहुँचने की आदत सम्मान का प्रतीक होता है। जब शिक्षक समय के पाबन्द होते हैं तो विद्यार्थी भी उनसे प्रभावित होकर समय पाबन्द बनते हैं। जब हम अपनी प्रतिबद्धताओं पर समय से पहुँचते हैं तो, हम दूसरों के समय तथा अपने लिए उनके महत्व को भी दर्शाते हैं। समय से पहुँचना यह संकेत करता है कि आप तैयार हैं और सीखने और सुनने के लिए उत्सुक हैं। विद्यालय समय से पहुँचने के साथ ही साथ किसी भी सभा, सम्मलेन, बैठक, प्रशिक्षण कार्यक्रमों आदि जहाँ भी आपकी उपस्थिति की आवश्यकता हो, उसके प्रति समय पाबन्द होना चाहिए।

5. उपस्थित रहें और खुद को प्रस्तुत करें

कक्षा में शिक्षण करते समय अथवा अन्य अवसरों पर विचार–विमर्श या बातचीत करते समय सामने वाले विद्यार्थी/ सहकर्मी/ अन्य वरिष्ठ व्यक्ति को ऐसा महसूस होना चाहिए कि आप उन पर ध्यान दे रहे हैं। वे जो कह रहे हैं उस पर आपका पूर्ण ध्यान है और उस समय उनकी बात अन्य किसी भी चीज से ज्यादा अहमियत रखता है। आप जिससे बात कर रहे हैं उसे आभास होना चाहिए कि उस प्रकरण हेतु विचार–विमर्श के लिए वह दुनिया में सबसे महत्वपूर्ण व्यक्ति है।

एक शिक्षक जब कहीं पर उपस्थित होता है, तो उसके कपड़े शालीन और पेशेवर होने चाहिए। आपका वेश–भूषा ही बताता है कि आप एक शिक्षक हैं, और लोग उसी के अनुसार आपसे व्यवहार करते हैं। अगर आप चाहते हैं कि आपके साथ सम्मान के साथ एक पेशेवर की तरह व्यवहार किया जाए, तो आपको उसी तरह से कपड़े पहनने चाहिए।

उपर्युक्त पाँच व्यावहारिक तरीकों को अपनाकर एक पेशेवर शिक्षक बना जा सकता है। इसकी सहायता से एक प्रभावी शिक्षण वातावरण का निर्माण किया जा सकता है। विद्यार्थियों की संस्था तथा शिक्षकों में विश्वसनीयता बढ़ती है। उन्हें लगता है कि उनके शिक्षक उनकी व्यक्तिगत शिक्षा के लिए प्रतिबद्ध हैं, क्योंकि संस्थान में शिक्षकों के मानक उच्च श्रेणी के हैं। इससे विद्यालय में एक सकारात्मक तथा प्रभावी शिक्षण–अधिगम वातावरण का निर्माण होता है।

बोध प्रश्न

टिप्पणी :

क) नीचे दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

ख) इकाई के अंत में दिए गए बोध प्रश्नों के उत्तर से अपने उत्तर का मिलान कीजिए।

6. व्यावसायिकीकरण से क्या अभिप्राय?

....

....

7. पेशेवर शिक्षक की कोई दो विशेषताएं लिखिए।

....

....

15.6 सारांश

प्रभावशाली एवं वैज्ञानिक शिक्षण में सहायक विचारों अथवा कार्य करने के तरीकों / निर्णयों को ही 'शिक्षण–सूत्र' कहा जाता है। ये 'शिक्षण–सूत्र' सार्वकालिक, सार्वभौमिक रूप से स्वीकृत तथा विश्वसनीय हैं।

मीडिया का प्रभाव शिक्षा के क्षेत्र में दिन–प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है। शिक्षा के प्रति लोगों को जागरूक करने, शैक्षिक अवसरों को बढ़ावा देने आदि में मीडिया का महत्वपूर्ण योगदान है। शिक्षा के क्षेत्र में शिक्षण सहायक सामग्री के रूप में मीडिया का उपयोग किया जा रहा है। वर्तमान समय में इलेक्ट्रॉनिक मीडिया जैसे वीडियो, रेडियो, टेलीविजन आदि का प्रयोग शिक्षण–अधिगम की प्रक्रिया में प्रभावी ढंग से किया जा रहा है। मौखिक संचार के एक अच्छा माध्यम रेडियो/ट्रान्जिस्टर है। इसके माध्यम से शिक्षक विद्यार्थियों तक नयी ध्वनियाँ, कविताएँ, कहानियाँ, शैक्षिक नाटक, कविताएँ, महापुरुषों की जीवनियाँ, उनके प्रेरक प्रसंग, नवीन खोजें एवं आविष्कार, सामान्य–ज्ञान आदि को संप्रेषित करता है। रिकॉर्डर अथवा टेप–रिकॉर्डर का उपयोग शिक्षक द्वारा अपने शिक्षण कार्य को प्रभावशाली बनाने के लिए किया जा सकता है। टेलीवीजन अथवा वीडियो कार्यक्रम के द्वारा विद्यार्थियों के कान और आँख दोनों ही ज्ञानेन्द्रियों का विकास होता है। टेलीवीजन अथवा वीडियो कार्यक्रम का शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के लिए प्रयोग किया जा सकता है। प्रिन्ट मीडिया के अन्तर्गत मुद्रित पाठ्य–पुस्तकें, लेख, समाचार पत्र आदि आते हैं। विद्यार्थियों के पाठ्यक्रम के अनुसार मुद्रित पाठ्य–पुस्तकें विद्यार्थियों के अधिगम का प्रमुख स्रोत होता है।

व्यावसायिक विकास वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक व्यक्ति अपने पूरे कार्यकाल में व्यावसायिक सेवाओं की गुणवत्ता और प्रासंगिकता बनाए रखता है। व्यावसायिकीकरण से अभिप्राय एक सामाजिक–सेवा–उन्मुख व्यवसाय को उन्नत करने की प्रक्रिया से है, ताकि इसे अधिक स्वायत्त, अधिक विकास–उन्मुख और साथ ही अधिक जवाबदेह बनाया जा सके। फ्लेक्सर (1915) ने एक प्रोफेशन/ पेशे के छह मानदंड प्रस्तावित किए हैं। कम से कम निम्न पाँच व्यावहारिक तरीके (5 पी) प्रत्येक शिक्षक में अवश्य होने चाहिए–

i. सहभागी बनें

ii. सकारात्मक बनें

iii. सीखने के लिए तैयार रहें

iv. समय पाबंद बनें

v. उपस्थित रहें और खुद को प्रस्तुत करें

उपरोक्त इकाई के पढ़ने के उपरान्त शिक्षार्थी शिक्षण सूत्र मीडिया और व्यावसायिकता के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त कर लेंगे।

15.7 अभ्यास के प्रश्न

1. अपने शिक्षण विषय के शिक्षण में विभिन्न शिक्षण–सूत्रों की उपयोगिता स्पष्ट कीजिए।
2. प्रभावशाली शिक्षण में मीडिया की उपयोगिता स्पष्ट कीजिए।
3. एक पेशेवर शिक्षक की विशेषताओं पर चर्च कीजिए।

15.8 चर्चा के बिन्दु

1. विभिन्न शिक्षण सूत्रों का शिक्षण में प्रभावशाली ढंग से कैसे प्रयोग किया जा सकता है? चर्चा कीजिए।

2. एक शिक्षक के अन्दर पाये जाने वाले प्रोफेशनलिज्म (व्यावसायिकता) के विभिन्न गुणों पर चर्चा कीजिए।

15.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. प्रभावशाली एवं वैज्ञानिक शिक्षण में सहायक विचारों अथवा कार्य करने के तरीका ें/ निर्णयों को 'शिक्षण–सूत्र' कहा जाता है।
2. पाँच प्रमुख शिक्षण–सूत्रः ज्ञात से अज्ञात की ओर, सरल से जटिल की ओर, अनिश्चित से निश्चित की ओर, अनुभूत से युक्तियुक्त की ओर, प्रत्यक्ष से अप्रत्यक्ष की ओर।
3. 'प्रकृति का अनुसरण' शिक्षण सूत्र का आधार रूसो का शिक्षा दर्शन है।
4. मीडिया को एक ऐसी वस्तु के रूप में परिभाषित किया जा सकता है, जिसका उपयोग शिक्षक अपने शिक्षण कार्य हेतु करता है अथवा जो शिक्षार्थियों को विशिष्ट शिक्षण और सीखने के परिणामों को प्राप्त करने हेतु उपयोग करने के लिए दिया जाता है।
5. टेलीवीजन/वीडियो कार्यक्रम का शिक्षण में प्रमुख योगदानः

   i. टेलीवीजन/वीडियो कार्यक्रम द्वारा विषय–विशेषज्ञों द्वारा तैयार किए गए पाठ, को कम खर्च में देश एवं विश्व के कोने–कोने में विद्यार्थियों तक पहुँचाया जा सकता है।

   ii. टेलीवीजन/वीडियो कार्यक्रम द्वारा शोध एवं प्रयोग आधारित नवीनतम ज्ञान तथा सम्बन्धित सूचनाओं को शिक्षकों तथा विद्यार्थियों तक पहुँचाया जा सकता है।
6. व्यावसायिकीकरण से अभिप्राय एक सामाजिक–सेवा–उन्मुख व्यवसाय को उन्नत करने की प्रक्रिया से है, ताकि इसे अधिक स्वायत्त, अधिक विकास–उन्मुख और साथ ही अधिक जवाबदेह बनाया जा सके।
7. पेशेवर शिक्षक की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैंः

   I- एक पेशेवर शिक्षक के अन्दर सहभागिता का गुण होता है । वह अपने विषय से सम्बन्धित विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रमों में नियमित प्रतिभाग करता है तथा पेशेवर संघों से भी जुड़ा रहता है।

   II- एक पेशेवर शिक्षक सीखने के लिए हमेशा तत्पर रहता है तथा उसके अन्दर समयनिष्ठता का मूल्य होता है।

15.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. आर.ए. शर्मा (2021), शिक्षा के तकनिकी आधार, मेरठ : अनु बुक्स डिस्ट्रीब्यूटर एंड पब्लिशर।
2. दास, एन.के. एंड मेनन, एस.बी. (2000), ट्रेनिंग ऑफ प्रोफेशनल्स थ्रू डिस्टेंस एजुकेशन, नई दिल्ली : इग्नू।
3. मंगल, एस.के. एंड मंगल, यू. (2011), शिक्षा तकनीकी, नई दिल्ली : पी.एच.आई. लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड।
4. साहू, पी.के. (2011), प्रोफेशनलिज्म इन टीचर एजुकेशन, नई दिल्ली : कंसेप्ट पब्लिकेशन।
5. सिंघल, ए. एंड कुलश्रेष्ठ, एस.पी. (2015), शैक्षिक तकनीकी के मूल आधार, आगरा : अग्रवाल पब्लिकेशन।